इकाई-1 मनोविज्ञान में प्लेटो, अरस्तू एवं डेकार्ट का योगदान (Contribution of Plato, Aristotle Descartes in Psychology)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 प्लेटो का योगदान

1.3 अरस्तू का योगदान

1.4 डेकार्ट का योगदान

1.5 अभ्यास प्रश्न

1.6 सारांश

1.7 शब्दावली

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:-

I. मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं विकास को समझ सकेंगे।
II. मनोविज्ञान में अरस्तू के योगदानों को जान सकेंगे ।
III. प्लेटो के योगदानों को जान सकेंगे।
IV. डेकोर्ट के योगदानों को जान सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

मनोविज्ञान के तथ्यों की जानकारी के सबूत पौराणिक दर्शनशास्त्र में मिलते है। इसका अतीत बहुत लम्बा है, परन्तु मनोविज्ञान को एक स्वतन्त्र शाखा के रूप में 1879 ई. में स्थापित किया गया। इसलिये इसका इतिहास लगभग 120 साल ही पुराना है। 1879 के बाद तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ के वर्षों में कई मनोवैज्ञानिकों ने मनोविज्ञान के विषयवस्तु तथा अध्ययन विधि के बारे में

समान विचार रखे। ऐसा देखा गया है कि, समय के साथ प्राचीन सिद्धान्तों के स्थान पर नवीन सिद्धान्तों की खोज की जाती है। इन नवीन सिद्धान्तों व विचारों के साथ ही उससे सम्बद्ध विषय या विज्ञान का क्षेत्र भी व्यापक होता जाता है। समस्त विद्वानों के अपने-अपने प्रत्यय, धाराणाऐं, विधियां, सिद्धान्त एवं विचार होते है, जो धीरे-धीरे क्रमबद्ध रूप से विकसित एवं परिवर्तित होते रहते है।

मनोविज्ञान के विकास का ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन करने से ये पता चलता है कि, वे आधारभूत मान्यताऐं कौन-कौन सी है, जो यूनानी युग से वर्तमान समय तक चली आ रही है। जब से इस पृथ्वी पर मानव सभ्यता का विकास हुआ है तभी से मनोविज्ञान का इतिहास प्रारम्भ हुआ। यूनान के दर्शन से मनोविज्ञान का इतिहास शुरू हुआ।यूनान के महान दार्शनिक प्लेटो, अरस्तू आदि ने मानव मनोविज्ञान से सम्बन्धित विचार प्रस्तुत किये थे, उनके विचार वर्तमान समय में वैज्ञानिक सिद्ध हुवे है। प्राचीन काल में आत्मा के बारे में द्वैतवादी मत प्रचलित था। इनके अनुसार आत्मा व शरीर दोनों ही अलग-अलग तत्व है, अलग तत्व होते हुए भी आत्मा व शरीर के बीच परस्पर अन्तः क्रिया होती है।

प्रस्तुत इकाई में मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के बारे में आप जान सकेंगे। इसके अलावा मनोविज्ञान में प्लेटो, अरस्तू एवं डेकोर्ट के विशेष योगदानों का विस्तृत रूप से अध्ययन कर सकेंगे

1.2 प्लेटो का योगदान (427-347 ई0पू0)

प्लेटो का जन्म एथेन्स के उत्तम एवं सुखी परिवार में हुआ था। वे महान सुकरात के शिष्य थे। इनका योगदान मनोविज्ञान के लिए बहुत अधिक महत्व रखता है। प्लेटो का सबसे महत्वपूर्ण योगदान उनके द्वारा प्रतिपादित विचार का सिद्धान्त है। एक तरह से प्लेटो द्वैतवादी थे जिन्होंने विचार को पदार्थ से अलग किया। प्लेटो के इस सिद्धान्त में विचार की निम्नांकित विशेषताऐं बतलायी गयी-

I. विचार में परिवर्तन नहीं होता है।
II. विचार पूर्ण होता है।
III. विचार में समयहीनता होती है, अर्थात उसे समय के बन्धन से नही बांधा जाता है।
IV. विचार पदार्थ से अलग है।

प्लेटो के अनुसार पदार्थ अपूर्ण होता है जिसका प्रत्यक्षण अपूर्ण ज्ञानेन्द्रियों द्वारा होता है। उनके अनुसार विचार में आकार होता है जबकि पदार्थ में अन्तर्वस्तु होता है। अतः विचार को एक पैटर्न या सूत्र के रूप में समझा जा सकता है। सुकरात के समान प्लेटो ने भी आत्मा को महत्वपूर्ण बतलाया। परन्तु आत्मा में प्लेटो के अनुसार निम्नलिखित तीन तत्वों की प्रधानता बतलायी गयी-

I. व्यक्ति का नैतिक गुण
II. चिन्तन

III. बहुत सारी क्रियाओं का व्यवहारात्मक स्रोत

प्लेटो के अनुसार आत्मा का स्वरूप अभौतिक तथा अनश्वर होता है। प्लेटो के अनुसार शरीर नश्वर एवं भौतिक स्वरूप का होता है। इस तरह से प्लेटो ने आत्मा तथा शरीर में अन्तर किया तथा एक द्वैतवादी की भूमिका की। प्लेटो का यह दावा था कि चूंकि आत्मा का स्वरूप अभौतिक होता है, यह मूर्त संसार की सीमाओं को पार करके आदर्श संसार का बोध करा सकती है। जिसके तथ्यों की जानकारी व्यक्ति के ज्ञानेन्द्रियों के पहुंच के बाहर होती है। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी वास्तविक अनुभूति होने के पहले आत्मा में ज्ञान संचित होता है।

प्लेटो के अनुसार, सामान्य एवं विचारों का जगत, वस्तु जगत की तुलना में अधिक यथार्थ होता है। उन्होने मन एवं शरीर के सम्बन्ध में द्वैतवाद की व्याख्या की और मन एवं शरीर के मध्य अन्तर को बताया। प्लेटो का यह कहना था कि आत्मा हमेशा भौतिक नहीं होती बल्कि अभौतिक होती हैं। शरीर के नष्ट हो जाने के बाद भी आत्मा मरती नहीं है। आत्मा अमूर्त तथ्यों के सम्बन्ध में भी विचार कर सकती है। आत्मा अपने भौतिक वातावरण से ऊपर विचारों के जगत में भी जा सकती है। यह जगत, वस्तु की तुलना में अधिक वास्तविक होता है। इस प्रकार प्लेटो ने मूर्त वस्तुओं की अपेक्षा, अमूर्त वस्तुओं को अधिक वास्तविक स्वीकार किया है। प्लेटो के अनुसार आत्मा का कार्य है-ज्ञान प्रदान करना। इनके अनुसार वह आत्मा ही है, जो कि शुभ, शाश्वत, सुन्दर, परम तत्व को समझ सकती है।

प्लेटो मन तथा आत्मा को एक ही मानता है। वह कहता है कि आत्मा शरीर के बंधन में रहती है। आत्मा के माध्यम से भावना, संवेग और समस्त शारीरिक क्रियाओं का संचालन होता है। मन (आत्मा) के वह दो स्वरूप मानता है। एक विवेकशील और दूसरा विवेकहीन होता है। विवेकशील मन मस्तिष्क में होता है। विवेकहीन मन के दो भाग होते हैं। उच्च विवेकहीन मन का निवास स्थान हृदय में होता है और निम्न विवेकहीन मन का निवास शरीर के दूसरे अंगों में होता है, जिनका सम्बन्ध भूख, तृष्णा और वासना से होता है।

प्लेटो ने समाज की अन्तःक्रिया के सम्बन्ध में भी अपने विचार बताये हैं। प्लेटो ने व्यक्ति की अपेक्षा समाज को अधिक महत्वपूर्ण माना है। प्लेटो के अनुसार विशेष सामाजिक व्यवस्था का मूलाधार व्यक्ति की अधिगम की प्रवृत्ति होती है। व्यक्ति को शिक्षित किया जा सकता है। शिक्षा के माध्यम से ही समाज में और व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन किया जा सकता है। प्लेटो का यह कहना है कि शिक्षा का व्यक्तियों की मूल-प्रवृत्तियों पर गहरा प्रभाव पडता है। जिस प्रकार की शिक्षा व्यक्ति ग्रहण करेगा उसके अनुसार ही व्यक्तित्व का निर्माण एवं विकास होता है। जैसा व्यक्ति का व्यक्तित्व होता है वह उसी प्रकार का व्यवहार भिन्न-भिन्न सामाजिक परिस्थितियों में करता है। प्लेटो के अनुसार समाज में परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा की पर्याप्त एवं समुचित व्यवस्था करना बहुत आवश्यक है। प्लेटो ने अपनी विख्यात पुस्तक ‘‘रिपब्लिक’’ में बताया कि एक आदर्श राज्य के लिए आदर्श शिक्षा किस प्रकार की होनी चाहिए। प्लेटो के अनुसार, जिस

सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति का विकास होता है उसी का परिणाम व्यक्ति का व्यवहार होता है अर्थात व्यक्ति का व्यवहार उसकी सामाजिक व्यवस्था का परिणाम होता है। जिस प्रकार का समाज होगा, उसी प्रकार का व्यक्ति बनेगा। प्लेटो ने अपने विचारों को व्यवस्थित कर उन्हें व्यावहारिक रूप दिया, इसलिए उन्हे यूनान का सर्वप्रथम दार्शनिक कहा जाता है।

प्लेटो के गुरू सुकरात थे। उसका दश्नन सुकरात के विचारों पर आधारित था। उन्होने कहा कि इन्द्रियों के द्वारा जो संवेदना होती है, वह क्षणिक होती है। उनके दर्शन में संसार के सुख मिथ्या हैं। शरीर की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। आत्मा को समझना चाहिए। वह कहते है कि दर्शन आत्मा को सत्य मानता है, जबकि सांसारिक व्यक्ति शरीर और शारीरिक सुख को महत्व देता है। शारीरिक सुख के लिए किये गये प्रयास ज्ञान के प्राप्त करने में बाधक होते हैं। शारीरिक अंगों के द्वारा जो ज्ञान प्राप्त किया जाता है वह अधूरा होता है।

प्लेटो ने व्यक्तियों को तीन वर्गों में विभाजित किया-

I. संज्ञान -जो लोग बुद्धिमान एवं चतुर हैं, वे स्वर्ण के समान हैं।
II. संकल्प-जिनमें संकल्प तथा साहस है, वे रजत के समान हैं।
III. स्नेह- जो स्नेह एव सहानुभूति के गुणों से पूर्ण हैं, वे पीतल के समान होते हैं।

इस प्रकार के विचार से प्लेटो सभी लोगों को एक समान मानने में विश्वास नहीं करता है। अन्त में यह कह सकते हैं कि प्लेटो का सम्पूर्ण दर्शन आत्म ज्ञान पर आधारित था और उसके विचार तर्क बुद्धिवादी थे।

1.3 अरस्तू का योगदान

अरस्तू की गणना भी ग्रीक के महान दार्शनिकों में की जाती है। इनके मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण योगदान रहे हैं। अरस्तु का जन्म 384 ई0पूर्व ग्रीक देश के स्टैगिरा नगर के मैसेडोनिया नामक स्थान में हुआ था। सत्रह वर्ष की आयु में वह उस समय के प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो के पास शिक्षा ग्रहण करने गये। 20 वर्ष तक वह प्लेटो से ज्ञान प्राप्त करते रहे। प्लेटो की मृत्यु के पश्चात अरस्तु कुछ समय तक सिकन्दर महान का गुरू बनकर रहै। अरस्तु को संसार का सर्वश्रेष्ठ विचारक और यूरोप का सबसे महान दार्शनिक माना जाता है। अरस्तु प्लेटो से अधिक व्यावहारिक थे।

शरीर एवं मन के बीच जो अन्तर प्राचीन समय से चला आ रहा था, इसको अरस्तू ने समाप्त किया। अरस्तू की पुस्तक ’डी एनीमा’ में आत्मा की प्रकृति के सम्बन्ध में उनके विचारों को अभिव्यक्त किया है। इसका यह मानना था कि जीव के शरीर की क्रियाऐं आत्मा के कारण एवं आत्मा की क्रियाऐं जीव के शरीर के कारण होती है। अरस्तू ने शरीर एवं आत्मा के बीच सम्बन्ध को आकार एवं पदार्थ के सम्बन्ध से समझाने का प्रयास किया। उसके अनुसार आकार एवं पदार्थ सभी स्थानों पर एक साथ दिखाई देते है। वस्तु का निर्माण जिस पदार्थ से होता है, उसी पदार्थ से वस्तु का कार्य

निर्धारित होता है। अरस्तू का यह कहना है कि शरीर के सभी अंगों की अपनी-अपनी आत्मा होती है। यह आत्मा उनके विशेष कार्य में दिखाई देती है।

अरस्तू ने यह भी बताया कि आत्मा एवं शरीर के बीच व्यवहारिक एवं बौद्धिक दृष्टि से परस्पर सम्बन्ध बनाया जा सकता है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'डी एनीमा' में आत्मा एवं शरीर के आपसी सम्बन्धों को बताया। इसके अलावा अरस्तू ने दिन-प्रतिदिन के जीवन से प्राप्त होने वाले अनेक प्रकार के अनुभवों को भी बताया है। मनोविज्ञान के इतिहास में अरस्तु के योगदानों का निम्न तीन प्रकार से अध्ययन किया जाता है-

I. अरस्तु ने ज्ञान को योजनाबद्ध प्रणाली में व्यवस्थित किया। योजनाबद्ध व्यवस्था के कारण आत्मा सम्बन्धी ज्ञान को जीवित प्राणियों के संदर्भ में अध्ययन किया जाने लगा।
II. उन्होंने यह सिद्ध किया कि आत्मा जीवित प्राणी की अभिव्यक्ति करती है और जीवित प्राणी आत्मा की अभिव्यक्ति है।
III. अरस्तु ने दैनिक कार्य प्रणाली में मनुष्य के व्यवहार को और अनुभव को मूर्त रूप प्रदान किया।

यहां उनके प्रमुख योगदानो का वर्णन किया जा रहा है-

अनुभव-अरस्तु का कहना है कि यथार्थ या वास्तविकता को समझने के लिए अनुभव को आधार मानना चाहिए। चूंकि अनुभव ज्ञान का आधार होता है और ज्ञान यथार्थ की सार्थकता को समझने के लिए आवश्यक होता है, इसलिए प्रत्येक अध्ययन सामग्री में अनुभव को महत्वपूर्ण क्रिया विधि मान कर चलना चाहिए। वह कहतै है कि अनुभव के द्वारा विज्ञान की उत्पत्ति और नियमों को समझा जा सकता है। कारणों का अध्ययन ही दर्शन कहलाता है।

द्रव्य तथा विचार-प्लेटो के मतानुसार द्रव्य का आकार तथा रूप होता है जो अतीत के अनुभव जगत में विचरण करता है। इसके ठीक विपरीत अरस्तु ने द्रव्य को अमूर्त माना। अरस्तु ने उसका खण्डन किया और कहा यदि प्लेटो विचारों को अमूर्त मानते हैं तो विचारों के माध्यम से मूर्त वस्तुओं का अध्ययन कैसे किया जा सकता है।

अरस्तु ने दो तत्वों को मौलिक माना है। द्रव्य तथा रूप। उनका विचार था कि द्रव्य तथा रूप एक साथ रहते हैं। इन्हें अलग-अलग करके किसी भी अध्ययन सामग्री की व्याख्या नहीं की जा सकती है। अरस्तु द्रव्य को भौतिक पदार्थ ही नहीं मानते हैं, क्योंकि द्रव्य में परिवर्तन होता है और रूप वह है जिसकी ओर परिवर्तन बढता है। रूप में वस्तु के गुण निहित होते हैं।

शरीर, मन तथा आत्मा-वह शरीर तथा मन में घनिष्ठ सम्बन्ध मानते हैं। वह मन को मानव जीवन के स्तर से जोडते हैं। वह मानव जीवन को तीन स्तर का योग मानते हैं -

I. पहले स्तर को पोषण स्तर,

II. दूसरे को भोग स्तर तथा

III. तीसरे को विचार स्तर कहा हैं। इस जीवन स्तर को आत्मा की संज्ञा दी गयी है।

अरस्तु ने आत्मा को शारीरिक क्रियाओं का आधार माना है। इसलिए वह आत्मा की स्वतन्त्र सत्ता में विश्वास नहीं करते हैं। बिना आत्मा के शारीरिक क्रियाऐं नहीं हो सकती हैं और बिना शरीर के आत्मा कार्य नहीं कर सकती। वह कहते हैं कि शरीर जब अस्तित्व में आता है, तभी आत्मा अपना कार्य प्रारम्भ करती है।दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं और दोनों एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं।बिना एक-दूसरे के कोई अस्तित्व नहीं हे। शरीर आत्मा को अस्तित्व प्रदान करता है और आत्मा शरीर को क्रियाशील एवं गतिमान बनाती है। अरस्तु के अनुसार आत्मा शरीर का संगठन होती है। इस आत्मा के द्वारा ही मनुष्य ज्ञान को प्राप्त करता है। इसलिए वह वनस्पति तथा पशु से भिन्न होता है। इस आत्मा के द्वारा ही वह अपना ही नहीं, समाज के अन्य सदस्यों का पोषण करता है तथा सभी के कल्याण की बात सोचता है।

ज्ञान तथा संवेदना-उन्होंने कहा कि संवेदन को ज्ञान का स्रोत मानना चाहिए। प्रत्येक वस्तु में गतिशीलता होती है जो उत्तेजनाओं के माध्यम से संवेदना को जन्म देती है। इसके बाद् संवेदन से ज्ञान की अनुभूति होती है।उन्होंने कहा कि प्रत्येक इन्द्रिय अलग-अलग ज्ञान की अनुभूति कराती है। ऑंख से रूप का, नाक से गन्ध का, कान से सुनने का, जीभ से स्वाद का और त्वचा से दबाव तथा तापक्रम का ज्ञान होताहै।अरस्तु के लिए सामान्य ज्ञान की अनुभूति आत्मा से होती है और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा विषय ज्ञान की प्राप्ति होती है।

तर्क-उन्होंने तर्क को दर्शन की रीढ कहा और इसे वैज्ञानिक आधार माना। उन्होंने कहा कि तर्क वह विधि है जो दर्शन को वैज्ञानिक बनाती है। उनका कहना है कि संवेदना की प्रक्रिया का संचालन एवं नियन्त्रण तर्क से होता है। ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा जो सूचना मॉसपेशियों तक पहुंचती है, उसमें तर्क संवाहन का कार्य करता है। अरसतु के विचार में तर्क के बिना संवेदन की क्रिया पूरी नहीं हो सकती है।

संवेग-संवेग का सम्बन्ध सुखमय एवं दुखमय अनुभवों से होता है। जब व्यक्ति की इच्छा पूर्ण हो जाती है और मानसिक स्तर पर शान्ति की अनुभूति करता है तो उसके व्यवहार में सुखमय संवेग दिखाई देते हैं। ठीक इसके विपरीत जब व्यक्ति की इच्छाऐं पूर्ण नहीं होती है तो बाधाऐं उत्पन्न होती हैं, जिसके कारण उसे दुःख की अनुभूति होती है। इस स्थिति में दुःखपूर्ण संवेग उत्पन्न होते हैं। संवेग सुख तथा दुःख दोनों का सम्मिश्रण है। जब सुख कम होने लगता है तो धीरे-धीरे क्रोध और भय उत्पन्न होने लगता है। फिर क्रोध तथा भय की स्थिति में घोर निराशा, कष्ट तथा अपार दुःख की अनुभूति होने लगती है। कुल मिलाकर जीवन में सुख का अभाव ही दुःख की जननी है। अरस्तु कहते हैं कि जीवन में सुख तथा दुःख दोनों साथ-साथ चलते हैं। यहां तक कि सुख संवेग के साथ-साथ दुःख भी रहता है, किन्तु सुख की मात्रा अधिक होने के कारण सुख के संवेग की प्रधानता होती है। इसी प्रकार दुःख के संवेग की स्थिति में सुख की मात्रा कम हो जाती है।

चेतना, प्रत्यक्ष तथा कल्पना-अरस्तु चेतना के दो स्तर मानता है-

I. निम्न स्तर-निम्न स्तर में साधारण विचार उत्पन्न होते हैं। चेतना के इसी स्तर के कारण व्यक्ति असामाजिक कार्य करता है।
II. उच्च स्तर-उच्चकोटि के विचारों का सम्बन्ध चेतना के उच्च स्तर से होता है। चेतना के यह दोनों स्तर मनःशक्ति के स्रोत होते हैं।

उनके विचार में कल्पना भी एक मनःशक्ति है। कल्पना को वह एक प्रकार की शक्ति मानते हैं। उनके विचार में कल्पना मानसिक प्रक्रियाओं का एक मानचित्र तैयार करती है। वह कल्पना की व्याख्या पूरी तरह दार्शनिक आधार पर करते हैं। अरस्तु के अनुसार चेतना, संवेदी, प्रत्यक्ष, कल्पना, साधारण बुद्धि, स्मृति आदि को मन का संचालक मानता है। ये आत्मा के योग हैं। आत्मा शरीर का एक रूप है। जिस प्रकार रूप द्रव्य से अलग नहीं किया जा सकता है, उसी प्रकार शरीर को आत्मा से अलग नहीं कर सकते हैं।

स्मृति-अरस्तू ने स्मृति की व्याख्या की समानता, विरोध एवं निकटता के प्रभाव पर विशेष रूप से बल दिया है। अरस्तू का यह कहना था कि एक बार जब कोई दो वस्तुऐं आस-पास देखी जाती है तब उनमें से एक वस्तु के उपस्थित होने से ही उसके साथ की दूसरी वस्तु की स्मृति आ जाती है। अरस्तू का यह कहना था कि स्मृति के अन्तर्गत समानता एवं विरोध दोनों ही तत्वों का विशेष महत्व होता है।

प्राणी एवं वातावरण-अरस्तू ने समाज एवं व्यक्ति के बीच होने वाली अन्तःक्रिया के ी बारे में भी अपने विचारों को बताया है। उनके अनुसार प्राणी एवं वातावरण पूर्ण रूप से स्वतन्त्र नहीं है,बल्कि इन दोनों के बीच अन्तःक्रिया चलती रहती है। जीव द्वारा वातावरण के प्रति की गई क्रिया से उसकी प्रकृति के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है और इसी प्रकार वातावरण के प्रति प्राणी द्वारा की गई प्रतिक्रिया से वातावरण के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। व्यक्ति के सामाजिक व्यवहारों के सम्बन्ध में अरस्तू के विचारों का अत्यन्त महत्व है। अरस्तू के अनुसार व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार का प्रमुख कारण उसकी मूल-प्रवृत्तियां है तथा मनुष्य की प्रकृति समाज की प्रकृति का मूलाधार होती है। अरस्तू के अनुसार समाज में परिवर्तन करना सम्भव नहीं है तथा व्यक्ति की प्रवृत्तियों का परिणाम ही समाज है, दोनों की प्रकृति में परिवर्तन करना असम्भव है।

1.4 डेकार्ट का योगदान

रेने डेकार्ट का जन्म फ्रांस में हुआ था। यह एक महान शरीर शास्त्री था। इसका जन्म सन् 1596 में टूरेन नाम स्थान पर हुआ था। बाल्यावस्था से ही डेकार्ट की प्रवृत्ति दार्शनिक थी। इनको एकान्त में रहना, खेल-कूद में रूचि न लेना इत्यादि पसन्द था। 8 वर्ष की आयु में डेकार्ट ने विद्या ग्रहण करनी शुरू की। इनके मुख्य विषय दो थे-ज्योतिष एवं गणित।

विद्यालयी शिक्षा प्राप्त करने के बाद डेकार्ट की संगति अच्छी न रही, इस कारण इनमें अनेक बुरी आदतें विकसित हो गई शराब पीना, जुआ खेलना इत्यादि। लेकिन धीरे-धीरे डेकार्ट को घूमने का शौक लगा तथा वह विदेश घूमने के लिये निकल पडे। वह एक सेना में भर्ती हो गये। सैनिक के रूप में उन्होंने हंगरी, हालैंड इत्यादि देशों का भ्रमण किया। लेनिन डेकार्ट अपने सैनिक जीवन से भी अधिक समय तक सन्तुष्ट न रह सके। अंत में उन्होंने सैनिक के पद को छोड दिया और वापिस पढाई में लग गये। हालैंड में रहकर डेकार्ट ने विभिन्न विषयों का अध्ययन किया। सन् 1650 में डेकार्ट का निधन हो गया। मनोविज्ञान में डेकार्ट के मुख्य योगदान निम्नलिखित है -

मन एवं शरीर-डेकार्ट के अनुसार आत्मा एवं शरीर दो अलग-अलग तत्व है। इन दोनों का ही एक स्वतन्त्र अस्तित्व होता है। लेकिन इन दोनों की आपसी साझेदारी से ही कोई भी कार्य सम्पन्न होता है। इस प्रकार डेकार्ट ने द्वैतवाद की स्थापना की। डेकार्ट के अनुसार मन व शरीर एक दूसरे को किस प्रकार प्रभावित करते है ा मन के रोगी होने का प्रभाव विभिन्न शारीरिक क्रियाओं पर पडता है और जब शरीर में कोई रोग उत्पन्न हो जाता है तो उससे मन भी प्रभावित होता है। मन एवं शरीर के एकीकरण के अभाव में प्राणी कोई भी कार्य नहीं कर सकता। मन एवं शरीर के मध्य जो सम्बन्ध स्थापित होता है- डेकार्ट के अनुसार उसका प्रमुख कारण है-पीनियल, ग्रंथि । यह गं्रथि मस्तिष्क के मध्य भाग में होती है ा डेकार्ट के अनुसार पीनियल ग्रंथि के कारण ही आत्मा व शरीर अलग-अलग तत्व के रूप में स्वीकार किये जाते हैं। व्यक्ति द्वारा जो भी क्रियाऐं की जाती है, वह एक यन्त्र के समान होती हैं। इसमें पीनियल ग्रंथि का विशेष योगदान होता है। डेकार्ट का यह कहना कि व्यक्ति का शरीर यंत्र के समान कार्य करता है। शरीर विभिन्न नाड़ी मण्डल, ग्रंथियों एवं मांसपेशियों से बना है और शरीर के विभिन्न अंगों पर ही शरीर का संचालन निर्भर करता है।

आत्मा- डेकार्ट ने व्यक्ति के व्यवहार में आत्मा के अस्तित्व को भी माना है तथा उसे दो भागों में विभक्त किया है-

यांत्रिक

विवेकयुक्त

डेकार्ट का यह मानना है कि पशुओं में आत्मा नहीं होती है। इनका व्यवहार एक यंत्र के समान होता है इनके शरीर को भौतिक नियम नियंत्रित करते हैं। पशुओं द्वारा की गई सारी क्रियाऐं यंत्र के समान होती है।

संवेग एवं वासना- डेकार्ट ने शरीर से संवेग का अध्ययन किया। उसके अनुसार शरीर के विभिन्न अंगों, आत्मा एवं मस्तिष्क में, रक्त में गति पैदा होने से संवेग पैदा होते है। डेकार्ट ने इसे एक यांत्रिक घटना बताया है। डेकार्ट ने सांवेगिक जीवन की व्याख्या छः प्रकार की आरम्भिक वासनाओं (घृणा, इच्छा, दुख, खुशी, प्रेम, आश्चर्य) के माध्यम से की। इन्हीं 6 प्रकार की प्रारम्भिक

वासनाओं के आधार पर ही व्यक्ति के जीवन एवं प्रकृति का गहन अध्ययन किया। डेकार्ट का यह कहना है कि व्यक्ति में दो प्रकार की प्रकृति पायी जाती है-

I. निम्न प्रकृति- निम्न प्रकृति से ही भाव पैदा होते हैं
II. उच्च प्रकृति-उच्च प्रकृति के द्वारा व्यक्ति उच्च-स्तरीय विचार एवं कार्य करता है, क्यांकि उसमें आत्मा नहीं होती।

इस प्रकार डेकार्ट के अनुसार संवेग या भाव निम्न प्रकृति अथवा पशु आत्मा की उत्तेजित दशा होते हैं। डेकार्ट ने संवेग के सम्बनध में दूसरी कल्पना यह की कि पेट में एक प्रकार के द्रव्य एवं हृदय के ताप से व्यक्ति में उत्तेजना पैदा होती है। इसके अलावा डेकार्ट ने मस्तिष्क एवं संवेग के मध्य भी सम्बन्ध स्थापित किया है। उन्होंने शरीर को ही संवेग का प्रमुख आधार माना किया है। मन का प्रभाव शरीर पर पडता है।

शरीर तथा मन-डेकार्ट का मत था कि मन तथा शरीर दो अलग-अलग तत्वों के बने होते हैं, वे दोनों एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। कुछ क्रियाओं जैसे-संवेदन एवं प्रत्यक्षण में दोनों का योगदान होता है। मन शरीर की यांत्रिक क्रियाओं को नियन्त्रित करता है तथा उन्हें निर्देशित करता है प्रत्यक्षण, संवेदन एवं संवेग आदि क्रियाओं द्वारा प्रभावित होता है। अतः इन दोनों में अन्तःक्रिया होती है।

जन्मजात विचार का सिद्धान्त- डेकार्ट के अनुसार मन की क्रियाओं द्वारा दो प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं-

I. अर्जित विचार-अर्जित विचार संवेदी अनुभूतियों से प्राप्त होता है।
II. जन्मजात विचार-जन्मजात विचारों का सम्बन्ध किसी संवेदी अनुभूति से नहीं होता है फिर भी मन में इस विश्वास के साथ ये उत्पन्न होते हैं कि व्यक्ति उसे स्वीकार करने के लिए बाध्य हो जाता है। उदाहरण- आत्मन तथा ईश्वर से सम्बन्धित विचार

ज्ञानेन्द्रियां एवं संवेदनाऐं- डेकार्ट ने ज्ञानेन्द्रियों के दो रूपों को बताया है-

1. आन्तरिक रूप-आत्मा की आन्तरिक तंत्रिकाऐं तथा उसका संवेदनशील बहुत महत्वपूर्ण हैं।
2. बाहरी रूप- डेकार्ट के अनुसार ज्ञानेन्द्रियों की संख्या 5 है, जिनका कार्य है- देखना, सुनना, स्वाद, स्पर्श एवं घृणा। डेकार्ट ने मानसिक प्रकिया के अन्तर्गत गति की कल्पना की तथा इसी आधार पर संवेदना को स्पष्ट किया है।

नाड़ी तन्त्र-डेकार्ट ने नाडी तंत्र के बारे में अध्ययन कर अपने विचारों को बताया। डेकार्ट के इस अध्ययन का मनोविज्ञान मे विशेष महत्व है। डेकार्ट ने मानसिक प्रक्रियाओं एवं नाडी क्रिया तथा इन दोनों के व्यवहार के मध्य सम्बन्ध को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया। इसके कारण ही

मनोविज्ञान के अन्तर्गत मनो-दैहिक क्रियाओं के बारे में प्रचलित विचारधाराओं में एक महान परिवर्तन हुआ। डेकार्ट का मनोविज्ञान के इतिहास एवं विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान रहा। डेकार्ट ने चिन्तन एवं मनोविज्ञान की व्याख्या विज्ञान के आधार पर की। उन्होंने वैज्ञानिक पद्धतियों पर बहुत अधिक बल दिया, इसके कारण मनोविज्ञान के अन्तर्गत महान परिवर्तन हुए। अब मनोविज्ञान को मात्र आत्मा का ही मनोविज्ञान नहीं माना गया।

1.5 अभ्यास प्रश्न

1. प्लेटो सुकरात का शिष्य था।
   (सही/गलत)
2. अरस्तू का जन्म 420-347 ईसा पूर्व में हुवा।
   (सही/गलत)
3. विचार का सिद्धान्त'' प्लेटो द्वारा प्रतिपादित किया गया।
   (सही/गलत)
4. डेकार्टे का जन्म जर्मनी में हुआ था।
   (सही/गलत)
5. डेकार्टे ने जन्मजात विचार का सिद्धान्त दिया।
   (सही/गलत)
6. 600 ईसा पूर्व में 322 ईसा पूर्व तक जो विचारधाराऐं उत्पन्न हुई, उन्हें ....कहा गया।
7. प्लेटो ने .... को महत्वपूर्ण बताया।
8. .... ने '' डी अनिमा '' नामक पुस्तक लिखी।
9. .... के मनोविज्ञान को कार्टिजियन मनोविज्ञान कहा जाता है।
10. डेकार्टे के अनुसार .... तथा .... दो भिन्न-भिन्न तत्वों के बने होते है।

1.6 सारांश

- पुरातन ग्रीस के वैज्ञानिकों एवं दर्शनशास्त्रियों द्वारा मनोविज्ञान की नींव डाली गई। ये 600 ईसा पूर्व से प्रारम्भ हुआ।
- प्लेटो एवं अरस्तू जैसे दार्शनिक ' हेलनिक अवधि ' (600-332 ई0पू0) में हुवे।
- इनके चिन्तनों द्वारा आधुनिक मनोविज्ञान का विकास बहुत प्रभावित हुआ।

- प्लेटो का मनोविज्ञान के लिये सबसे महत्वपूर्ण योगदान उनका '' विचार का सिद्धान्त '' रहा।
- प्लेटो एक द्वैतवादी थे, जिन्होंने विचार को पदार्थ से अलग किया।
- अरस्तू ने बताया कि आत्मा तथा सजीव प्राणी या शरीर में अन्तर नही है।
- उन्होंने मानसिक प्रक्रियाओं तथा शारीरिक प्रक्रियाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध होने पर बल डाला।
- अरस्तू ने पांच तरह के संवेदनों का वर्णन किया- स्वाद, स्पर्श, गन्ध, श्रवण तथा दृष्टि।
- आधुनिक युग के दार्शनिकों का भी मनोविज्ञान पर काफी प्रभाव पडा इसमें रैने डेकार्ट का मुख्य योगदान है।
- डेकार्ट ने आत्मा को शरीर से अलग माना। दोनों का स्वतन्त्र अस्तित्व है, परन्तु इन दोनों के एक साथ होने से ही कोई कार्य होता है।
- उनके अनुसार मन तथा शरीर दो अलग-अलग तत्वों के बने होते हैं, परन्तु एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं।
- उन्होंने ' जन्मजात विचार ' का सिद्धान्त दिया।
- उनका मुख्य योगदान वैज्ञानिकता है। उन्होंने शरीर विज्ञान तथा मनोविज्ञान को पास लाने का प्रयास किया।

1.7 शब्दावली

1. **प्रत्यक्षण** - यह एक मानसिक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया संवेदन तथा व्यवहार करने की क्रिया के बीच की प्रक्रिया होती है।

2. **ज्ञानेन्द्रियां** - ये वातावरण से उत्तेजनाओं को ग्रहण करती है और वातावरण तथा शरीर के अन्दर होने वाले परिवर्तनों का ज्ञान कराती है।

3. **चिन्तन** - यह एक मानसिक प्रक्रिया है। इसकी सहायता से व्यक्ति अनेक प्रकार की समस्याओं का समाधान करता है।

4. **अनश्वर** - जो कभी मृत्यु को प्राप्त ना हो।

5. **अधिगम** - इसे सीखना भी कहते हैं। यह व्यवहार में होने वाला वह परिवर्तन है जो अभ्यास करने से होता है। इसमें जीव नई प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करता है।

6. **मूलप्रवृत्ति** - मानसिक कार्यों में जो ऊर्जा खर्च होती है वह मूल प्रवृत्ति से प्राप्त होती है। मूल प्रवृत्ति मानसिक प्रक्रियाओं को दिशा प्रदान करती है।

7. **संवेदना -** यह एक मानसिक प्रक्रिया है जो विभिन्न उत्तेजनाओं (बाहरी सूचनाओं) के कारण उत्पन्न होती है।

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सही
2. गलत
3. सही
4. गलत
5. सही
6. प्रकृतिवाद
7. आत्मा
8. अरस्तू
9. डेकार्टे
10. मन तथा शरीर

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मनोविज्ञान के विकास में प्लेटो के योगदानों का मूल्यांकन करिये।
2. मनोविज्ञान के विकास में पुरातन ग्रीक दार्शनिक प्रभावों को बताइये।
3. मनोविज्ञान के विकास में अरस्तू के योगदानों को बताइये।
4. मनोविज्ञान के विकास में डेकार्टे के योगदानों का मूल्यांकन करिये।

1.10 सन्दर्भ पुस्तकें

1. अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह-मनोविज्ञान के संप्रदाय एवं इतिहास. मोतीलाल बनारसी दास
2. डा0आर0 के0 ओझाा-मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं सम्प्रदाय, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. के0एन0शर्मा-मनोवैज्ञानिक विचारधाराऐं -हर प्रसाद भार्गव, आगरा ।
4. डॉ0 रामनाथ शर्मा मनोविज्ञान का इतिहास -लक्ष्मी नारायण प्रकाशन, आगरा।
5. डॉ0 रामपाल सिंह वर्मा -मनोविज्ञान के सम्प्रदाय -विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
6. डॉ0 राजकुमार ओझा-मनोविज्ञान के सम्प्रदाय-विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

इकाई-2 ब्रिटिश अनुभववादी एवं साहचर्यवादियों का मनोविज्ञान में योगदान (Contribution of British Empiricist And Associationist in Psychology)

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रस्तावना
2.1 उद्देश्य
2.2 ब्रिटिश अनुभववादियों का योगदान
2.2.1 टॉमस हॉब्स
2.2.2 जाँन लाँक
2.2.3 जार्ज बर्कले
2.2.4 डेविड हयूम
2.3 प्राचीन साहचर्यवादियों का योगदान
2.3.1 अरस्तू
2.3.2 डेविड हार्टले
2.3.3 थामस ब्राऊन
2.3.4 जेम्स मिल
2.3.5 जॉन स्टुअर्ट मिल
2.3.6 अलैक्जेण्डर बेन
2.4 नवीन साहचर्यवाद
2.4.1 हरमन एबिंगहाँस
2.4.2 एडवर्ड ली थार्नडाइक
2.4.3 आई0 पी0 पैवलव
2.5 सारांश
2.6 वस्तुनिष्ठ एवं निबन्धात्मक प्रश्न
2.7 संदर्भ सूची

2.0 प्रस्तावनाः-

जब से मनुष्य ने विचार करना सीखा वह चेतना,स्वप्न अवस्था में अपने अन्दर होने वाले व मानसिक अवस्थाओं में ध्यान देने लगा तभी से मनैविज्ञानिक प्रक्रियायें बनने लगी, मनोविज्ञान का इतिहास उतना ही पुराना है जितना की मानव सभ्यता का ऐतिहासिक दृष्टिकोणों से यह कहना समीचीन होगा कि मनोविज्ञान का विकास ग्रीक काल तथा यूनानीदार्शनिकों दार्षनिको द्वारा किया गया, इससे पूर्व की विचार धाराओं के सन्दर्भ में कही भी उल्लेख नही मिलता है।

सत्रहवीं शताब्दी में मुख्यतः हिपोकेट्रस, प्लोटो, सुकरात एवं संत आइस्टाईन, टामस हाब्स एवं जाँन लाँक आदि मनोविज्ञानिक ने मनोविज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया तथा

अट्ठारवी व उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश मनोवैज्ञानिको के योगदान से मनोविज्ञान का विकास और तीव्रता से होने लगा। प्रस्तुत इकाई में हम ब्रिटिश अनभववादियों एवं साहचर्यवादियों के योगदान की चर्चा करेंगें।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम बिट्रेन के उन मनोवैज्ञानिकों के योगदान का वर्णन कर रहे है जिन्होने इन्द्रियानुभव के द्वारा ज्ञान की बात को सत्य माना जिसमें मुख्यतः टाँमस हाँब्स, जार्ज बर्गले, जाँन लाँक, डेविड हयूम, डेविड हार्टले आदि मनोवैज्ञानिक ने मनोविज्ञान के विकास में अपना योगदान दिया है। वहाँ उन प्राचीन एवं नवीन साहचर्यवादियों के योगदान की चर्चा की गई है जिन्होने साहचर्यवाद के द्वारा मनोविज्ञान को नई दृष्टि से देखने व सोचने की दिशा दी।

2.2 ब्रिटिश अनुभववादियों का योगदान-

2.2.1 टाँमस हाँब्स (1588.1679)-

टाँमस हाँब्स (1588.1679)- टाँमस हाँब्स का जन्म 1588 में इग्लैंण्ड में हुआ 10 वर्ष में ही उन्होने लैटिन भाषा सीख ली थी। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त कर इन्होने जीवनयापन के लिए अभिजात वर्ग के बच्चों को पढ़ाना प्रारम्भ किया और उन्होने पढ़ाते हुए अच्छे षिक्षक की ख्याति प्राप्त की। अभिजात वर्ग के संपर्क में अधिक रहने से इनकी मानसिकता राजघरानों को सर्वोच्च मानने की हो गई। इन्होने एक किताब लिखी “क्म ब्पअम” जिसमें राजघरानों के षासन की अत्याधिक तारीफ की गई। इस किताब के आने के पश्चात इग्लैंण्ड वासियों ने इनका अत्याधिक विरोध किया। ये इग्लैण्ड छोड़कर फ्रान्स चले गये। 1651 में पुनः इग्लैण्ड आये तथा 1679 में इनकी मृत्यु हो गई।

टाँमस हाँब्स का योगदान-टाँमस हाँब्स को ब्रिटिश सम्प्रदाय प्रारम्भ करने का श्रेय दिया जाता है जिस समय हाब्स ने अपने विचार प्रकट किये। उस समय मनोविज्ञान के क्षेत्र में शक्ति मनोविज्ञान की विचारधारा प्रचलित थी। अनुभवादी हाँब्स ने मानवीय व्यवहारों के पीछे छिपे जिन सिद्धान्तों की खोज की वो ही बाद में समाज मनाविज्ञान. व सामान्य मनोविज्ञान के आधार बने, अनुभववाद को ध्यान में रखते हुए उसने निम्न तथ्यों पर अपने विचार रखे।

(2) प्रेरणा -हाँब्स ने मानवीय व्यवहार की व्याख्या करने के लिए आन्तरिक व अर्जित प्रवृत्तियों का अध्ययन किया। उसके अनुसार आन्तरिक प्रवृत्तियां जैसे भूख प्यास और काम मनुष्य जीवन के व्यवहार में स्पष्ट रूप से पायी जाती है। इनकी व्याख्या करना कठिन नहीं है परन्तु अधिकांश व्यवहार अर्जित प्रवृत्तियों के कारण होते है इस सम्बन्ध में हाँब्स ने प्रेरणा के सिद्धान्त की व्याख्या की तथा सुख व दुख को प्रेरणा का स्त्रोत माना साथ ही उसने कहा कि मनुष्य उसी कार्य को करना चाहता है जिसमें सुख की अनुभूति हो।

(3) यन्त्रवाद तथा गति का सिद्धान्त-हाँब्स ने प्रकृति के नियमों से मानवीय स्वभाव का विष्लेशण किया जिस प्रकार पदार्थ तथा काल में गतिशीलता होती है उसी प्रकार शरीर भी गतिशील होता है उन्होने गति के सिद्धान्त को स्वीकारते हुए कहा हैं कि उद्दीपक गति के कारण दुनिया के माध्यम से जीव में प्रवेश करता है जिसके कारण जीव क्रियायें करता है साथ ही उन्होने यह भी कहा कि उद्दीपक के समाप्त होने के बाद भी जीव क्रियायें करता क्यों कि गति धीरे-धीरे समाप्त होती है उनके यन्त्रवाद तथा उन्होने गति के सदंर्भ में अपने विचार देते हुए कहा कि गति दो प्रकार की होती है (1)वास्तविक गति (2)अवषिश्ट गति गति के सिद्धान्त को देखकर ऐसा लगता है मानो उन पर अरस्तू के मनोविज्ञान का प्रभाव पात्र हो।

(4) संवेदना- हाँब्स के अनुसार हमारा समस्त ज्ञान अनुभव पर आधारित है हाँब्स किसी ऐसी वस्तु का अस्तित्व नहीं मानता जिसका ज्ञान इन्द्रियों के द्वारा नहीं होता अनुभववादी होने के कारण हाब्स ने इन्द्रिय संवेदनाओं पर अधिक बल दिया। संवेदना की व्याख्या उन्होने गति के द्वारा की। बाह्य जगत में जो गति होती है उसका प्रभाव हमारे ज्ञानेन्द्रियों एंव मस्तिष्क पर पड़ता है इसके बाद संवेदना होती है जिस प्रकार संवेदना पर बाह्य गति का प्रभाव पड़ता है उसी प्रकार मस्तिष्क और वायुमण्डल में भी गति होती है जो संवेदना की क्रिया को पूर्ण करती है।

जैसे-ऑख पर सूर्य की किरण पड़ते ही दृष्टि नाड़ी द्वारा उसका प्रभाव हमारे मस्तिष्क में जाता है तभी हम किसी वस्तु को देखते या पहचानते है। इस प्रकार कह सकते है कि संवेदना बाह्य व आन्तरिक गतियों का परिणाम है।

(5) स्मृति तथा कल्पना- गति के आधार पर हाँब्स ने स्मृति तथा कल्पना को भी सिद्ध करने का प्रयास किया है जो गति मस्तिष्क में पहुंच जाती है वह धीरे-धीरे नष्ट होती है इसी नष्ट होते हुए अनुभव कों हाँब्स ने स्मृति का नाम दिया संक्षेप मे कहा जा सकता है कि पूर्व अनुभवों की तीव्रता नवीन अनुभवों के कारण मन्द पड़ जाती है वही धुंधला रूप हमारे मस्तिष्क में स्मृति एवं कल्पना के रूप में अवशेश रह जाता है।

(6) **भाव एवं संवेग**- हाब्स के अनुसार सुख एवं दुख दो भाव है जिनके आधार पर व्यक्ति कार्य करता है हाँब्स ने भय को संवेग का रूप माना है, उनका कहना था कि भावों एवं संवेगों का शरीर की आंतरिक गति से संबंध होता है।

(7) साहचर्य- हाँब्स की सबसे बड़ी देन साहचर्य के विशय मे है उसने बताया हमारे अन्दर जो मानसिक घटनायें होती है उनमें एक क्रम पाया जाता है ब्राहय प्रभाव जो संवेदना की गति के रूप में उत्पन्न होते है वे संवेदना की क्रिया के पूर्ण हो जाने के पश्चात भी हमारे मस्तिष्क में बने रहते है इनमें से जब पहला उपस्थित होता है तो दूसरा भी आ जाता है यही सिद्धांन्त साहचर्यवाद का आधार बन जाता है।

(8) चिन्तन- हाब्स के अनुसार चिन्तन दो प्रकार का होता है

1 उद्देश्यपूर्ण चिन्तन: उदेष्यपूर्ण विचार का एक निष्चित स्वरूप होता है क्यों कि वो किसी इच्छा से नियमित होते हैं और ये ईच्छा शक्ति पर निर्भर करते हैं।

2 उद्देश्यहीन चिन्तन: अनियन्त्रित विचारो का कोई निष्चित स्वरूप नही होता इसलिए इसे उद्देश्यहीन चिन्तन कहते हैं। इस प्रकार हॉब्स ने वैज्ञानिक ढगं से चिन्तन करके मनौविज्ञान को नया मोड़ दिया और इन्द्रिय जनित सवेदना को ही ज्ञान का आधार माना जिसके कारण उन्हें मनोविज्ञान में विषिश्ट स्थान प्राप्त हुआ।

2.2.2- जॉन लॉक (1632-1704)

जॉन लॉक का जन्म 1632 में इग्लैण्ड़ के एक गाँव में धार्मिक परिवार में हुआ था इनकी शिक्षा मानचेस्टर तथा आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में हुई आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में अध्ययन कार्य करते हुए यह दर्शनशास्त्र पढाते कुछ समय पष्चात इनकी रूचि चिकित्सा शास्त्र की तरफ हुई और इन्होने चिकित्सा कार्य शुरू कर दिया तत्पष्चात ये राजनिती की तरफ आकर्शित हुए लंदन जाकर इन्होने अर्ल के सचिव का कार्य किया 1681 में इन्होने इग्लैण्ड़ छोड दिया पुनः 1684 में ये इग्लैण्ड वापस आ गये तथा कमिष्नर पद पर कार्य किया उन्होने कई पुस्तको की रचना कि उनकी प्रसिद्ध पुस्तक “An Essay concerning Human understanding” 1950 में प्रकाशित हुई यह पुस्तक बहुत उपयोगी सिद्ध हुई इस पुस्तक के लेखन में लॉक को 20 वर्ष लगे इस पुस्तक के चौथे संस्करण में उन्होनें “विचारों का साहचर्य” जोड़ दिया। 1947 में इनकी मृत्यु हो गई।

जॉन लॉक का योगदानः-

1.**मन एवं संवेदना-** जॉन लॉक के समय में मनोविज्ञान कि परिभाषा आत्मा का विज्ञान न होकर चेतना का विज्ञान था और चेतना पर उस समय के मनोविज्ञानिको ने गहन अध्ययन किया हॉब्स ने जहॉं गति को संवेदना का आधार माना वहॉं लॉक ने मनन को इसका आधार माना। जॉन लॉक की सबसे बड़ी समस्या यह थी कि मनुष्य को व्यापक सत्यो का ज्ञान कैसे होता हैं इसी सन्दर्भ में उन्होनें मन की प्रक्रति पर विचार किया जॉन लॉक के अनुसार- श्जन्म से मनुष्य को किसी वस्तु का ज्ञान नही होता क्यों कि मन का स्वरूप एक कोरी पट्टी के समान होता है वह अनुभव हीन होता है हमारा समस्त ज्ञान अनुभव के द्वारा ही मन पर अंकित होता है। लॉक ने अनुभव प्राप्त करने का आधार इन्द्रिय संवेदना को बताया। उनके अनुसार संवेदना दो प्रकार की होती हैं-

संवेदना (sensation): बाह्य संवेदना व आन्तरिक संवेदना

इसी प्रकार अनुभव भी दो प्रकार के होते है-

बाहय पदार्थ सम्बन्धी अनुभव	इन अनुभवो का आधार ज्ञानेन्द्रिया हैं
मानसिक दशा सम्बन्धी अनुभव	इन अनुभवो का आधार आन्तरिक चेतना

लॉक के अनुसार आन्तरिक चेतना की कार्यप्रणाली में मनन का पर्याप्त महत्व है।

2. प्रत्यक्षीकरण- प्रत्यक्षीकरण के विशय में अपने मत या स्पश्टीकरण लिखते हुए लाक लिखता है किसी वस्तु का प्रत्यक्षीकरण एक प्रकार प्रत्यक्ष ज्ञान है विभिन्न प्रकार के संवेदनाओ के मिश्रण से प्रत्यक्ष ज्ञान की अनुभूति होती है। जब किसी वस्तु का प्रत्यक्षीकरण होता है तो हम उसे इसलिए जान पाते हैं क्योंकि उससे सम्बन्धित संवेदनाएँ हमारे अन्दर विद्यमान रहती है और क्रियाषील हो जाती है सभी प्रकार के ज्ञान के लिए संवेदनाओं के साथ मनन भी दशाहैं।

3. विचारों का साहचर्य- मनौविज्ञान के इतिहास में जॉन लॉक का महत्व साहचर्यवाद के सिद्धान्त की देन के. कारण माना गया है लॉक के अनुसार- हमारे सब सरल विचार अनुभव से प्राप्त होते है कुछ बाहय संसार के अनुभव से और कुछ मानसिक संसार के अनुभव से, सरल विचार केन्द्रीकरण के माध्यम से जटिल विचारो का रूप धारण कर लेते है। इसलिए जटिल विचारो का अध्ययन करने के लिए सरल विचारो का अध्ययन दशाहै विचारो का परिवर्तन की प्रकिया के विशय में लाक ने कहा- मन के द्वारा बुद्धि में सरल विचारो का परिवर्तन जटिल विचारो में होता रहता है बुद्धि के द्वारा विचारो का संष्लेशण एवं विष्लेशण होते रहता है इस प्रकार की प्रकिया से विचारो के साहचर्य का विकास होता रहता है सरल विचार जब अचानक ही एक दूसरे से मिल जाते है और उनमे संयोजन हो जाता है तो उस प्रकिया को अकस्मात् साहचर्य (Chance Association) कहते है। आगे चल कर इसी से "साहचर्यवाद में आवृत्ति" नियम प्रारम्भ हुआ।

4. स्मृति (Memory)- लॉक के अनुसार जो विचार हमारे मन पर क्रम से अंकित है। उसको हम सब अपनी इच्छा से पुनः स्मरण करते हैं तो उसी को स्मृति कहते हैं इस प्रकार स्मृति के दो रूप हैं

तात्कालिक	**स्थायी**
तात्कालिक स्मृति के अन्तर्गत तत्काल याद की गई का वर्णन किया जाता है।	जब हम अतीत या प्राचीन अनुभवों का अपने मन में लाते हैं तो उसे स्थायी स्मृति कहते है।

लॉक ने यह भी बताया कि स्मृति के लिए ध्यान तथा पुनरावृर्त्ति के अतिरिक्त सुख-दुख की मनोदशा भी दशाहै। इस प्रकार आधुनिक मनोविज्ञान के लिए लॉक की देन बहुत महत्वपूर्ण है यद्यपि हॉब्स ने साहचर्य के विचारों का सूत्रपात किया परन्तु लॉक ने साहचर्य के उद्गम एवं संगठन का सिद्धांत प्रस्तुत किया उन्होनें स्मृति पर नया प्रकाश डाला।

2.2.3 जार्ज बर्कलें (George Berkeley) 1685-1753-

बर्कलें का जन्म आयरलैंड में सन 1685 ईसवी में हुआ 1707 में उन्होंने एम ए की परिक्षा पास की उनकी रूचि प्रारम्भ से ही दर्शनशास्त्र में थी जब वह 24 वर्ष के थे उन्होनें 2 पुस्तकों का प्रकाशन किया "The new theory of Vision" तथा "Principles of Knowldge" इन दोनों पुस्तकों ने उनका नाम महान दार्शनिकों में शामिल कर दिया बर्कलें ने नास्तिकवादी मतों का

विरोध किया तथा आस्तिकता का परिचय देते हुए पादरी पद पर कार्य किया सन् 1753 में उनकी मृत्यु हो गयी। बर्कलें ने मनोविज्ञान के विकास में निम्न योगदान दिया-

1. **संवेदना**- हॉब्स पक्का अनुभववादी था लॉक उसका उत्तराधिकारी लॉक ने हॉब्स के अनुभववाद को आगे बढ़ाया पर निष्चित रूप से वह कुछ दूर जाकर ठहर गया जब बर्कलें ने इस अनुभववाद की डोर पकड़ी और ये माना की संवेदना से ही ज्ञान संभव है। परन्तु उसके अनुसार बाह्य वस्तु का पृथक अस्तित्व नही है वो मानस पर निर्भर है। उदाहरण-जब हम गुलाब के फूल का विशलेशण करते है उसमें रंग सुगंध कोमलता आदि गुणों को बतलाते है तो यह केवल संवेदना मात्र है इसका आधार हमारे ज्ञानेन्द्रिया है। संवेदना के संबंध ने लॉक ने मुख्य व गौण गुणों में जो अन्तर किया बर्कलें ने उसे अस्वीकार करते हुए प्रधान एवं गौण गुणों को अलग नही किया जा सकता ये दोनों आत्मगत (Subjective) है।
2. **आत्मा का प्रत्यय (Concept of Soul)-** बर्कलें का मत है सभी प्रकार के अनुभवों का आधार आत्मा है आत्मा का साक्षात्कार नही किया जा सकता लेकिन उसके अस्तित्व को नकारा भी नही जा सकता।
3. **बर्कलें का वैज्ञानिक दृष्टिकोण ('Scientific)-** बर्कलें मात्र आध्यात्मिक दार्शनिक ही नही था बल्कि उसका चिन्तन वैज्ञानिक भी था उसने तीन सिद्धान्तों पर विभिन्न समस्याओं का समाधान किया-

नव सिद्धान्त(New Principles)- हम वस्तु को देखते है इसलिए वस्तु का प्रमाणिक अर्थ है अर्थात हम वस्तु को प्रत्यक्ष करते है इसलिए उसका अस्तित्व है इस सिद्धांत के कारण उसकी आलोचना भी हुई।

दृष्टि दिक प्रत्यक्ष(Visual Space Perception)- बर्कलें का मानना है कि दूरी दिखाई नही पड़ती बल्कि एक सीधी रेखा होती है जिसका एक सिरा ऑख की ओर रहता है यह सिरा ऑख में एक बिन्दु का प्रत्यक्षीकरण कराता रहता है और सदा एक ही स्थिति में रहता है चाहे दूरी पास हो या दूर। बर्कलें का यह सिद्धांत अस्पष्ट है।

चिन्ह अर्थ साहचर्य(Sign meaning association)-जार्ज बर्कलें ने "Essay towards the new theory of vision" 1709 में प्रकाशित की इस निबन्ध में उसके विचार साहयर्चवाद के लिए उपलब्धि थे उन्होंने कहा- "मनुष्य व पशु शब्दों एवं ध्वनि द्वारा किसी वस्तु का बोध कर लेता है उसी प्रकार चिन्हों की सहायता से भी वस्तु का बोध हो जाता है।"

चिन्ह- उद्दीपक

अर्थ- अनुक्रिया

उदाहरण-अगर व्यक्ति सड़क पर चलते हुए घोड़े का टाप को पहचानकर यह सोचता है कि यह घोड़े की पग ध्वनि है तो इसका अर्थ है कि व्यक्ति को पूर्व में घोड़े की टाप सुनी थी इस बोध में ध्वनि एक चिन्ह है और उसकी दूरी एक अर्थ।

इस प्रकार के संबंध को चिन्ह अर्थ साहचर्य कह सकते है।

2.2.4 डेविड हयूम (David Hume) 1711-1776 -

ब्रिटिश अनुभववादी दार्शनिक डेविड हयूम का जन्म इग्लैण्ड के एडिनबरा में सन् 1711 में हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा समुचित रूप से न हो सकी 23 वर्ष की अवस्था में इन्होने फ्रान्स में साहित्य का अध्ययन किया पुनः इग्लैण्ड आकर इन्होने "Treatise of human nature" पुस्तक प्रकाशित की इन्होने 1748 में "Enquiry concerning the Human Understanding" तथा 1761 में "History of England" प्रकाशित की। हयूम नास्तिक विचारधारा के थे। सन् 1776 में इनकी मृत्यु हो गई।

1. **ज्ञान एंव विचार-** हयूम का कहना है "कि मनुष्य के विचार उसके अनुभवों से उत्पन्न होते हैं साहचर्य के माध्यम से अनुभव आपस में संयुक्त होते रहते हैं जिसके माध्यम से विभिन्न प्रकार के विचार उत्पन्न होते रहते हैं। हयूम ज्ञान का आधार भी विचारों को मानता है उसने विचारों को मानसिक विशय बताय। इसके दो प्रकार हैं
   a) संस्कार (Impression)
   b) विचार (Idea)

संस्कार जीवन का मूलभूत तत्व है। जब हम संवेदनायों से किसी वस्तु को देखते है तो उसका प्रत्यक्ष ज्ञान या संस्कार हमें मिलता है जब हम इस संस्कार को पुनः याद करते है तो मन में एक चित्र उपस्थित हो जाता है उसी को विचार कहा जाता है।

2. **आत्मा(Soul)-** ग्रीक दार्शनिक श्रृंखला में हयूम पहला व्यक्ति था जिसने आत्मा की सत्ता को स्वीकार नहीं किया उसका कहना था कि आत्मा मनुष्य का केवल एक विचार, कल्पना एंव भावना मात्र है। आत्मा का प्रत्यक्ष कभी नहीं किया जा सकता व्यक्तित्व का आत्मा से कोई सम्मान नहीं है। व्यक्तित्व समस्त अनुभवों का परिणाम है उन्होने आत्मा को सत्ता को बिल्कुल निराधार बताया।
3. **साहचर्यवाद(Associationism)-** हयूम की सबसे सही देन विचार के साहचर्य के विशय में हैं उसने विचार के साहचर्य के समझाते हुए कहा है कि "हमारी चेतना में एक विचार आता हैं उसके पश्चात दूसरा आता है। इस प्रकार विचारों में निरन्तरता रहती है इन विचारों में एक प्रकार का आकर्शण होता है जिसके आधार पर वो एक दूसरे से सम्बन्धित हो जाते है इस आकर्शण के कारण में हयूम ने समीपता को महत्व दिया।

कारण कार्य नियम के संदर्भ में हयूम ने कहा है कि कारण होगा तो कार्य होगा अर्थात् कारण के पीछे कार्य आता है बिना कार्य के कारण नहीं होगा।

4. स्मृति एंव कल्पना- हयूम ने स्मृति एंव कल्पना को मानसिक शक्ति के रूप में नहीं बल्कि विचारों को प्रकट करने की विधियों के रूप में स्वीकार किया है। उनका कहना है कि जब पिछले या पुराने संस्कार पुनः जाग्रत हो जाते है तो वह 'स्मृति' हैं इन्ही पुराने स्मृति के आधार पर नये विचारों का सजृन कल्पना है।

संक्षेप में कह सकते है कि हयूम ने अनुभवों को ज्यादा महत्व दिया। अनुभवों की एकता के लिए हयूम ने साहचर्य का सहारा लिया।

2.3 प्राचीन साहचर्यवादियों का योगदान: -

उपरोक्त सभीब्रिटिश अनुभववादी मनोवैज्ञानिकों ने ज्ञान का स्त्रोत अनुभव को माना साथ ही सभी अनुभवादियों ने साहचर्य की विचारधारा को पुख्ता किया। इसके साथ हम यहाँ अन्य साहचर्यवादियों की चर्चा भी करेंगें और जान पायेंगे कि कैसे प्राचीन व नवीन साहचर्यवादियों ने मनोविज्ञान को दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2.3.1अरस्तू (Aristotle) (384- 322B.C)

ग्रीक देश के स्टैगिरा नगर में मैसेडोनिया नामक स्थान में अरस्तू का जन्म हुआ। जब वह छोटे थे उसके पिता की मृत्यु हो गई। अनाथावस्था में उसने अत्याधिक संधर्श किया व 16 वर्ष गुजारे 17 वर्ष की आयु में व प्लेटो से शिक्षा ग्रहण करने गया 20 वर्ष तक प्लेटो से सीखता रहा। अध्ययन की दृष्टि से अरस्तू को संसार का सर्वश्रेश्ठ दार्शनिक माना जाता है। अरस्तु का साहचर्यवाद का प्रारम्भ कब हुआ इस विशय पर ठीक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता पर अरस्तू के प्रसिद्ध लेख स्मृति(मेमोरी) में साहचर्यवाद सम्बन्धी विचार का वर्णन मिलता है।

अरस्तू के अनुसार- "एक बात वस्तु या घटना दूसरी बात वस्तु या घटना की याद दिला देती है इसका अर्थ यह है कि पहली घटना का दूसरी घटना से कोई न कोई सम्बन्ध है" जैसे-A का स्मरण करते ही B याद आ जाये तो दोनों के मध्य कोई सम्बन्ध दशा है।

यह सम्बन्ध तीन तरह का हो सकता है।

समानता	विरोधाभास	सहवर्तिता
Similarity	Contrast	Contiguity

अरस्तू के उपरोक्त तीन नियमों को ब्रिटिश साहचर्यवादियों ने साहचर्य के नियम की संज्ञा दी।

अरस्तू का योगदान(Contributions of Aristotle)-मनोविज्ञान के इतिहास में अरस्तू के योगदानों को तीन रूपों में बाँटा गया है-

a) अरस्तू ने ज्ञान को योजनाबद्ध प्रणाली में व्यवस्थित किया। योजनाबद्ध व्यवस्था के कारण आत्मा सम्बन्धी ज्ञान को जीवित प्राणियों के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाने लगा।
b) उसने यह सिद्ध किया कि आत्मा जीवित प्राणी की अभिव्यक्ति करती है और जीवित प्राणी आत्मा की अभिव्यक्ति है
c) उसने दैनिक कार्य-प्रणाली में मनुष्य के व्यवहार को और अनुभव को मूर्त रूप प्रदान किया। सत्य तो यह है कि अरस्तू जैसे विद्वान के विचारों का चन्द पृश्ठों में विष्लेशण कर लेना असम्भव है यहाँ केवल प्रमुख विचारों का सारांश मात्र ही स्पष्ट किया जा रहा है।

1. अनुभव (Experience)-अरस्तू के विचार में वास्तविकता को समझने के लिए अनुभव का आधार मानना चाहिए। चूँकि अनुभव ज्ञान का आधार है और ज्ञान यथार्थ की सार्थकता को समझने के लिए दशाहै, इसीलिए प्रत्येक अध्ययन सामग्री में अनुभव को महत्वपूर्ण क्रियाविधि मान कर चलना चाहिए। वह कहता है कि अनुभव के द्वारा विज्ञान की उत्पत्ति और नियमों को समझा जा सकता है।

2. **द्रव्य और विचार (Matter and Ideas)-**द्रव्य के विशय में षिश्य के विचार गुरू से भिन्न हैं। प्लेटो के मतानुसार द्रव्य सार्वदेषिक (Universal) था। इसका आकार और रूप होता है जो अतीत के अनुभव जगत में विचरण करता है। इसके ठीक विपरीत अरस्तू ने द्रव्य को मूर्त माना। प्लेटो ने जो सिद्धान्त विचारों (thoughts) के लिए प्रतिपादित किया था, अरस्तू ने उसका खण्डन किया और कहा कि प्लेटो विचारों को अमूर्त मानता है तो विचारों के माध्यम से मूर्त वस्तुओं का अध्ययन कैसे किया जा सकता है। अरस्तू के अनुसार द्रव्य परिवर्तनशील है,अर्थात् द्रव्य वह है जिसमें परिर्वतन होता है और रूप वह हैं जिसकी ओर परिर्वतन बढ़ता है। रूप में वस्तु के गुण निहित होते है।

3. शरीर तथा मन - अरस्तू ने शरीर और मन की क्रियाओं को स्वतन्त्र नहीं माना है। विशेष कर मन की स्वतन्त्र सत्ता में उसे विष्वास नहीं है वह शरीर और मन घनिश्ठ सम्बन्ध मानता

है, इसलिए विश्वासपूर्वक वह यह कहता है कि मन किसी न किसी वस्तु की क्रिया है। वह मन को मानव जीवन के स्तर से जोड़ता है। मानव जीवन को तीन स्तर का योग मानता है। पहले स्तर को पोषण (Nutritive) दूसरे को भोग(Appetitive) स्तर और तीसरे को विचार (Thinking) स्तर कहा है। इन जीवन-स्तरों को वह आत्मा की संज्ञा देता है। इस प्रकार अरस्तू के अनुसार आत्मा तीन प्रकार, की होती है। पोशण सम्बन्धी जीवन स्तर को वह 'वनस्पति-आत्मा' कहता है, भोग-सम्बन्धी जीवन-स्तर को वह 'पशु -आत्मा' कहता है। तथा विचार-सम्बन्धी जीवन-स्तर को 'विवेकशील-आत्मा' मानता है।

4. **ज्ञान तथा संवेदना-** अरस्तू ने कहा है कि संवेदन को ज्ञान का स्त्रोत मानना चाहिए। प्रत्येक वस्तु में गतिशीलता होती है जो उत्तेजना के माध्यम से संवेदनशीलता को जन्म देती है और संवेदनशीलता संबंधित इन्द्रिय क्रिया है। इस प्रकार वस्तु की गति प्रकृति इन्द्रियों में उत्तेजना उत्पन्न करती है और संवेदना को जन्म देती है, ततपश्चात संवेदन से ज्ञान की अनुभूति होती है।

5. **तर्क और स्मृति (Reason and memory)-**अरस्तू ने अपने सभी दार्शनिक विचारों को तर्क की कसौटी पर कस कर ही प्रस्तुत किया। तर्क को दर्शन की रीढ़ कहा और इसे वैज्ञानिक आधार माना। उसने कहा कि तर्क (reason) वह विधि है जो दर्शन को वैज्ञानिक बनाती है। सभी मानसिक क्रियाओं की व्याख्या उसने तर्क के द्वारा की है। वह कहता है कि संवेदना की प्रक्रिया के संचालन का नियन्त्रण तर्क से होता है। ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा जो सूचना माँसपेशियों तक पहुँचती है उसमें तर्क संवाहन का कार्य करता हैं। अरस्तू के विचार में तर्क के बिना संवेदन क्रिया पूरी नही हो सकती है। स्मृति के विशय में उसके विचार पूर्णतः वैज्ञानिक है। वह कहता है कि कालान्तर में हो चुकने वली संवेदन-प्रक्रिया का पुनःस्मरण ही स्मृति है। उसके विचार में संवेदन-प्रक्रिया में सबसे पहले प्रतिमा (image)बनती है। यह प्रतिमा वस्तु के अनुभव से या क्रिया से बनती है। जब व्यक्ति को कालान्तर को संवेदन-प्रक्रिया जैसी स्थिति की पुनः अनुभूति होती है तो पूर्व अनुभव का प्रत्यावाहन(recall) होता है।

6. **संवेग (Emotions) -** संवेग का संबंध सुखमय और दुःखमय अनुभवों से होता है। जब व्यक्ति मानसिक स्तर पर षान्ति की अनुभूति करता है तो उसके व्यवहार में सुखमय संवेग दृष्टि गोचर होते है। ठीक इसके विपरीत जब व्यक्ति की इच्छाएँ पूर्ण नही होती है; बाधाएँ उत्पन्न होती है तो उसे दुःख की अनुभूति होती है। इस स्थिति में दुःखपूर्ण संवेग उत्पन्न होते है। संवेग सुख-दुःख दोनों का मिश्रण है।

7. **चेतना, प्रत्यक्ष तथा कल्पना (Conscious, Perception & Imagination)-** अरस्तू चेतना के दो स्तर मानता है। एक को वह निम्न स्तर और दूसरे को उच्चतर स्तर मानता है। निम्न स्तर से साधारण विचार उत्पन्न होते है। कभी-कभी असामाजिकता की ओर ध्यान चले जाने के कारण चेतना के इस स्तर को माना है, जबकि उच्चकोटि के चिन्तन का सम्बन्ध चेतना के उच्चतर चिन्तन से होता है। अरस्तु ने चेतना के इन दोनों स्तरों को मनःशक्ति का स्त्रोत माना है।

अरस्तू के विचार में कल्पना भी एक मनःशक्ति है। कल्पना को यह एक प्रकार शक्ति मानता है। उसके विचार में यह मानसिक प्रक्रियाओं का एक मानचित्र तैयार करती है।

2.3.2 डेविड हार्टले (David Hartley) 1705- 1757: -

सहचर्यवाद का जन्मदाता अरस्तू था। हॉब्स और लॉक प्रवर्तक थे। बर्कले तथा हयूम ने साहचर्यवाद को विकसित किया। हार्टले ने साहचर्यवाद को सिद्धान्त रूप में स्थापित किया। हार्टल का साहचर्य सम्बन्धी नियत सहवर्तिता (Contiguity) है। उसने सहवर्तिता के नियम(Law of Contiguity) द्वारा स्मृति, संवेग, ऐच्छिक तथा अनैच्छिक कार्य और तर्क -प्रक्रिया की व्याख्या की। उसने कहा जो विचार या संवेदनायें एक साथ आती हैं और उनमें सामंजस्य होता है तो वो एक दूसरे से संबद्ध हो जाती है फलतः एक विचार या संवेदना की उपस्थिति दूसरे विचार की पुनरावृत्ति कर देती है।

डेविड हॉर्टले की पुस्तक “Observations on man, his duty and his expectations” प्रकाशित हुई। यह पुस्तक दार्शनिक कम और मनोवैज्ञानिक अधिक थी। उसने सब कुछ ‘साहचर्य’ में बाँध दिया। हॉर्टले कहा कि विचारों का साहचर्य गतियों से होता है और गतियाँ ऐच्छिक कार्यो की आधार होती है। संवेग, संवेदनाओं के मिश्रण होते है; आदि। कुल मिलाकर हॉर्टले के लिए साहचर्यवाद ही एकमात्र ऐसा सिद्धान्त है। जो मनोविज्ञान की व्याख्या के लिए पर्याप्त है।

2.3.3 थोमस ब्राउन (Thomas Brown)

आधुनिक मनोविज्ञान के विकास में टॉमस ब्राउन का भी सहयोग है। ब्राउन की गणना उन्नीवीं शताब्दी की पूर्वार्द्ध के मनोवैज्ञानिकों में की जाती है। ब्राउन का जन्म सन् 1778 में हुआ। उसने चिकित्साशास्त्र में उच्च शिक्षा प्राप्त की परन्तु उसकी रूचि नीति दर्शन (moral philosophy) में अधिक थी और उन्होनें उस समय के नीति-दर्शन के प्रसिद्व विद्वान डुगाल्ड स्टुअर्ट (Dugald Stuart) की षिश्यता स्वीकार की। बाद में उसने दर्शन के प्रोफेसर के रूप में एड़िनबरा में अपना जीवन प्रारम्भ किया। थामस ब्राउन ने साहचर्य सिद्धान्त का निरूपण संकेत के रूप में किया। अन्य शब्दों में साहचर्य को ब्राउन ने ‘साहचर्य‘ नही वरन् ‘संकेत‘ कहा। उसने बतलाया कि संवेदन और प्रत्यक्ष ज्ञान का अन्तर संकेत के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता हैं। वास्तव में, साहचर्य सिद्धान्त में कुछ त्रुटियाँ थीं और इनको दूर करने के हेतु ही ’संकेत’ शब्द का प्रयोग किया था।

संकेत के अन्तर्गत ब्राउन ने मानसिक कार्यो में उत्पन्न होने वाले सम्बन्ध के तत्वों को भी सम्मिलित किया। ये सम्बन्ध के तत्व समानता, विशमता ओर काल तथा देश की दृष्टि से निकटता के थे। इन्हीं के आधार पर संकेत सम्बन्ध विकसित होते हैं।

- प्राथमिक संवेदनों की सापेक्ष अवधि (Relative duration)- कोई व्यक्ति किसी विशय पर जितना अधिक ध्यान देता है, उस विशय का स्मरण उतना ही सरल हो जाता है।

- सापेक्ष उल्लास (Relative livliness)-जब व्यक्ति की भावनाएँ और संवेदन उल्लासपूर्ण होते हैं तब संकेत सशक्त होता है।
- सापेक्ष आवृत्ति (Relative frequency)-यदि संवेदना बार-बार होता है तो उससे सम्बन्धित संकेत सशक्त हो जाता है।
- सापेक्ष नवीनता (Relative recency)- संकेत में संवेदनों की सापेक्ष नवीनता का भी प्रभाव पड़ता है। जो घटना कुछ समय पहले घटित हुई हो, उसे हम अधिक याद रखते हैं जबकि हम उन बातों को भूल जाते जो हैं बहुत समय पहले हुई थीं।
- विकल्प साहचयों (Alternative associates) - यदि कोई ऐसा अनुभव होता है जिसी पुनरावृत्ति की सम्भावना कम है तब हमारे मन में उससे सम्बन्ध व्यक्तियों और विषयों के भी संकेत उत्पन्न हो जाते हैं।
- एक ही संकेत में संकेतग्राहाता की भिन्नता - जब व्यक्ति कोई संकेत ग्रहण करता है तब उसके तात्कालिक भावों का प्रभाव पड़ता है और उन्हीं के अनुरूप संकेत बनते हैं।
- जीवन शैली का प्रभाव - संकेतग्राहता पर जीवन- शैली तथा विचार- शैली का भी प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ का भी प्रभाव पड़ता है।

प्रस्तुत इकाई में यह पहले ही बताया जा चुका है कि टॉमस ब्राउन ने ’संकेत’ शब्द का प्रयोग ’साह्चर्य’ के स्थान पर किया गया है। उपर्युक्त नियमों में से नवीनता, बारम्बारता और उल्लास किसी न किसी रूप में हमारे सभी अनुभवों में अवश्य मौजूद होते है।

2.3.4 जेम्स मिल (James Mill 1773.1836)-

साहचर्यवाद के इतिहास में सबसे महत्तवपूर्ण ग्रन्थ जेम्स मिल का “Analysis of the Human Mind” 1829 में प्रकाशित हुआ। इस प्रसिद्ध ग्रन्थ में संवेदना विचार, संप्रत्यय, चेतना, कल्पना, स्मृति, विश्वास , तर्क, चिन्तन, सुख-दुख संकल्प आदि विषयों की व्याख्या और वर्णन समुचित रूप में किया गया था।

इस पुस्तक के तीसरे अध्याय में विचार-साहचर्य(Association of Ideas) का वर्णन किया गया है। जेम्स मिल ने यह स्वीकार किया कि साधारण विचार, संवेदना से उत्पन्न होते है और यान्त्रिक रूप में साहचर्य से जुड़े होते हैं। जब साहचर्य शक्ति षाली होते हैं और बार-बार के उपयोग में जल्दी-जल्दी कार्य करते हैं तो विभिन्न प्रकार के तत्व सरल दिखाई देते है परिणामस्वरूप जटिल विचार भी सरल लगने लगते है।

विचार-साहचर्य का वर्णन करते हुए मिल ने कहा है कि व्यक्ति में जब विचार उत्पन्न होते है तो उनका साहचर्य-सम्बन्धित संवेदनाओं से होता है। अतः विचारों का विकास संवेदनाओं के क्रम

पर आधारित होते है। यही विचार-साहचर्य का सामान्य सिद्धान्त है। साहचर्य का बल (strength)की चर्चा करते हुए उसने 'शक्ति ' की दृष्टि से साहचर्य में अन्तर बतलाया उसका कहना है कि कुछ साहचय बलवान होते है और कुछ दुर्बल इस प्रकार साहचर्य में तीन विशेष ताएँ पाई जाती है-

- ☐ स्थायित्व (Permanence),
- ☐ निष्चितता (Certainty) तथा
- ☐ सरलता (Facility)

जॉन स्टुअर्ट मिल (John Stuart Mill)

जॉन स्टअर्ट मिल, जेम्स मिल के पुत्र थे। उसकी सम्पूर्ण शिक्षा अपने पिता की देख-रेख में घर पर ही हुई थी और पिता क समान उसने भी ईस्ट इण्डिया कंपनी में नौकरी की। सन् 1858 मेंब्रिटिश सरकार ने इस कंपनी को समाप्त कर दिया। इस तरह स्टुअर्ट मिल कंपनी के कार्य-भार से मुक्त हो गये। उन्होनें जीविका कमाने के लिए लेखन कार्य को चुना। जॉन स्टुअर्ट मिल ने अपने पिता की पुस्तक 'Analysis of the human mind' का टिप्पणी सहित प्रकाशन किया। इन्ही दोनों पुस्तकों के आधार पर स्टुअर्ट मिल ने मनोवैज्ञानिक विचारों का वर्णन किया जाता है।

1. **साहचर्य सिंद्धात-** जॉन स्टुअर्ट मिल ने पअने पिता के साहचर्य सिद्धान्त के नयिमों का संषोधन यिका और उनमें कुछ नवीन तथ्यों को सम्मिलित किया। जेम्स मिल के साहचर्य सिद्धान्त में स्पष्टता, बारम्बारता, निष्यचता और सरलता को दशामाना गया था। परन्तु जॉन स्टुअर्ट मिल ने इसमे समानता (similarity) और समीपता (contiguity) का भी समावेश किया।

2. **मानसिक रसायन-** सन् 1865 में स्टुअर्ट मिल ने साहचर्य सिद्धान्त का फिर से संषोधित किया और उसमें अभिन्नता के नियमों को भी सम्मिलित किया। उसने अभिन्नता के नियम में केवल उन तथ्यों का समावेश किया जिनको मानसिक रसायन (mental chemistry) कहा जाता है। उदाहरण के लिए रसायन-शास्त्र में ऑक्सीजन और हाइड्रोजन मिलकर रासायनिक परिवर्तन द्वारा पानी बन जाते है और उनका पूर्व रूप समाप्त हो जाता है। ठीक उसी प्रकार संवेदन और प्रत्यय भी अपने नवीन रूप में परिवर्तित हो जाते है और इस प्रकार उसके पूर्व रूप का नामोनिशान नही रहता।

3. **सम्भावी संवेदन का सिंद्धात**-मानव मन मे संभावी संवेदनों की क्षमता होती है। संभावी संवेदन से तात्पर्य है कि जब व्यक्ति किसी ऐसी परिस्थिति में होता है कि उसे किसी प्रकार के संवेदनात्मक अनुभव की आषा होती है तो वह अपने मन के आधार पर वे संवेदन प्राप्त कर लेता है। यह संवेदन स्थायी होते है क्योंकि व्यक्ति के मन में संवेदनों की सम्भावनाएँ स्थायी रूप से विकसित हो जाती है। इसके विपरीत वर्तमान संवेदन क्षणिक होते है। जॉन स्टुअर्ट मिल के सम्भावी संवेदन सिद्धान्त की आलोचना में यह कहा गया है कि उसने इसमें अनुभव और प्रयोग

पर बल नहीं दिया। यद्यपि जॉन स्टुअर्ट मिल ने प्रत्यक्ष रूप् से अपने मनोवैज्ञानिक विचार व्यक्त नही किये तथापि उसने अपने पिता के विचारों को परिष्कृत करके मनोविज्ञान का विकास किया।

अलैक्जेन्डर बेन (Alexander Bain, 1807.1903)

प्राचीन साहचर्यवादियों में बेन अन्तिम व्यक्ति था। उसके पश्चात साहचर्यवाद की कहानी समाप्त हो गई। हालांकि इसके बाद नवीन साहचर्यवादियों ने भी अपने योगदानों से इस सम्प्रदाय को कुछ और आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया। बेन ने दो पुस्तकें लिखीं। पहली पुस्तक 'The senses and the intellect' 1855 में प्रकाशित हुई और दूसरी पुस्तक 'The emotion and the will' 1859 में प्रकाशित हुई। इन दोनों पुस्तको मे साहचर्य सम्बन्धी विचारों का वर्णन किया गया है। साहचर्यवाद को शरीर क्रियाओं से सम्बन्धित माना है। उसने मस्तिष्क , तन्त्रिका तन्त्र, संवेदी अंग और पेशियों आदि को साहचर्यवादी क्रियाओं के लिए महत्वपूर्ण माना। बेन की मनोविज्ञान-सम्बन्धी विचारधारा पूर्णतः साहचर्यवादी थी। उसने सहवर्तिता तथा के नियमों को मान्यता दी। साहचर्य केवल सहवर्तिता के नियम-मात्र से ही नही स्थापित हो सकता है, बल्कि पसंदगी तथा भिन्नता के प्रत्यक्षीकरण, कारण एवं प्रभाव, उपयोगिता तथा अन्य संबंधों पर निर्भर करता है। बेन गतिवाही व्यवहार पर, संवेदना और विचारों पर विष्वास करते थे। वह इस बात से पूर्णतः सहमत थे सब कुछ अनुभव से ही प्राप्त होता है। वह कहते थे कि साहचर्य को पूर्णतः और केवल अनुभव-मात्र से ही नही जोड़ा जा सकता है।

2.4 नवीन साहचर्य वाद

साहचर्य की नई विचारधारा का प्रारम्भ 1885 में हुआ। जब एबिगहॉस ने स्मृति पर अपनी पुस्तक प्रकाशित की। उसने सिद्ध किया कि स्मृति जैसी मानसिक प्रक्रिया का प्रयोगात्मक अध्ययन सम्भव है।

2.4.1 हरमन एविगहाँस 1850-1909

हरमन एबिगहाँस का जन्म 1850 में एक व्यापारी परिवार में हुआ। उच्च शिक्षा के लिए

वह (Helle) और बर्लिन में रहें। सन् 1870 में वह सेना में भर्ती हो गये। तीन साल यहाँ रहने के बाद वहाँ से त्यागपत्र देकर इन्होने दर्शन का अध्ययन किया पुनः मनोविज्ञान व अध्ययन करते हुए इन्होने स्मृति पर प्रयोगात्मक अध्ययन प्रारम्भ किये।

योगदान - एबिगहाँस ने स्मृति संम्बन्धी अध्ययन स्वय अपने ऊपर किये स्मृति की जाँच में अर्थहीन अक्षरों (Nonsense syllables) की सहायता साहचर्य को नियन्त्रित किया उन्होने बताया कि यदि अर्थहीन शब्दों की संख्या सात है तो एक बार पाने पर स्मृति द्वारा उन्हे सही रूप में लिखा इसके लिए 3sec समय की आवश्यकता होती है। और यदि अर्थहीन शब्दों की संख्या 12 होती है इसके लिए 82 sec की आवश्यकता होगी।

स्मृति सम्बन्धी प्रयोगों से एबिगहाँस ने बहुत सी बातों का पता लगाया कि 24 घण्टे बाद किसी वस्तु को पुनः याद करने में 10 प्रतिशत समय की बचत होती है। एबिगहाँय की स्मृति परीक्षा की इन प्रणाली को 'बचत प्रणाली'(saving method) के नाम से जानी जाती है। अपने प्रयोगों से एबिगहाँस ने यह भी मालूम किया किसी वस्तु को सीखने के बाद उसे भूलने में कितना समय लगता है। साथ यदि सीखी हुई वस्तु की समय-समय पर पुनरावृत्ति कर ली जाती है तब क्या सुविधा होगी तथा स्मृति के सबसे अच्छे तरीके कौन से है,आदि। इस प्रकार जर्मन मनोविज्ञान का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है उसने यह सिद्ध किया कि वैज्ञानिक आधार पर समृति का अध्ययन जा सकता है उसके स्मृति सम्बन्धी प्रयोग मनोविज्ञान में नितान्त मौलिक हैं।

2.4.2 एडवर्ड ली थार्नडाइक (Edward Thorndike) 1874-1949

थार्नडाइक कोलम्बिया विश्वविद्यालय में प्रोफेसर थे। वह विलियम जेम्स कैटल का षिश्य था या वुंण्ट तथा मॉरगन के कार्यो से प्रभावित हुआ था। थार्नडाइक का पशु मनोविज्ञान की ओर उसका रूझान था। इसलिए उसने चूकिया हे, बिल्ली, कुत्ता तथा बन्दरों पर प्रयोग किये। इन प्रयोगों में भूलभुलैया तथा पहेली बक्स का प्रयोग किया गया। पशु को भूखा रख कर एक व्यूह अथवा बक्स या कठघरे में छोड़ दिया जाताहै।और खाना ऐसे स्थान पर रख दिया जाता है, जहाँ तक पशु का पहुँचना असम्भव होता है। खाना प्राप्त करना एक समस्या है। खाना प्राप्त कर लेना समस्या-समाधान का पुरस्कार है। पशु को व्यूह में रखा हुआ खाना दिखाई देता है। सीधे पहुँचकर खाना प्राप्त नहीं हो सकता है। पशु उपाय ढूँढ़ता है, प्रयास करता है, त्रुटियाँ होती है फिर प्रयास करता है, युक्तियाँ ढूँढ़ता है, तथा बहुत-से प्रयत्नों को करता है। निरीक्षक या प्रयोगकर्त्ता इन प्रयासों को गिनता है, त्रुटियाँ लिखता है और समय भी नोट किया जाता है, बहुत-से प्रयासों के बाद पशु भोजन प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार का मनोरंजक और महत्वपूर्ण प्रयोग थार्नडाइक ने बिल्लियों पर किया था। उपरोक्त प्रयोग से जो निष्कर्ष निकले उनके आधार पर थार्नडाइक ने सीखने के नियमों का प्रतिपादन किया। ये नियम साहचर्यात्मक प्रक्रियाओं को स्पष्ट करते थे। 1898 में थार्नडाइक की "Animal Psychology" नामक पुस्तक प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में उसने व्यवस्थित रूप में सीखने के नियमों की चर्चा की।

उसके प्रमुख तीन नियम इस प्रकार हैं-

1) **तैयारी का नियम (Law of readiness)-** यह नियम उन परिस्थितियों से सम्बन्धित होता है। जिसमें सीखने वाला सीखने की सामग्री के प्रति अपने अन्दर रूचि पैदा करता है या फिर उसके लिए अरूचिकर या उदासीन हो जाता है। इस नियम के अन्तर्गत सीखने से पूर्व की क्रियाओं के साथ समायोजन स्थापित किया जाता है। सीखने वाले को पूर्व के अनुभव की याद दिलाना,प्रोत्साहित करना, नवीन सामग्री को याद करने के लिए मानसिक तैयारी कराना आदि। इस नियम के कारण सीखने वाले में सीखने के लिए मनोवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

2) **अभ्यास का नियम(Law of Exercise)-** जब किसी क्रिया को बार-बार किया जाता है या दोहराया जाता है तो वह क्रिया दृढ़ हो जाती है और यदि छोड़ दिया जाता है तो कमजोर पड़ जाती है। इसी प्रकार जब याद किये जाने वाली सामग्री की पुनरावृत्ति छोड़ दी जाती है, तो उसे भूल जाते है। इस प्रकार यह नियम उपयोग और अनुपयोग के सिद्धान्त पर निर्भर करता है। यह नियम बार-बार क्रिया करने पर बल देता है, जिसके कारण अभ्यास होता है और धीरे-धीरे उस क्रिया को करने की आदत पड़ जाती है।
3) **प्रभाव का नियम (Law of effect)-** सीखने का क्या प्रभाव पड़ता है; अथवा क्या परिणाम निकलता है,इस तथ्य से प्रभाव का नियम सम्बन्धित होता है। सीखने के 'प्रभाव' पर निर्भर करता है कि किसी सामग्री के सीखने के परिणामस्वरूप् सफलता मिली या असफलता। सफलता मिलने पर संतोष मिलता है और असफल होने पर असंतोष होता है। संतोष मिलने से सीखने की सामग्री के तत्वों में सुदृढ़ साहचर्य स्थापित हो जाता है।

सीखने की सामग्री- साहचर्यवाद के दो प्रमुख नियम (जो सीखने के नियम हैं) 'अभ्यास का नियम' तथा 'प्रभाव का नियम' थार्नडाइक की कल्पना का पूरा नही कर सके। इसलिए उसने पाँच गौण नियमो का और प्रतिपादन किया-(1)बहुरूपी अनुक्रिया (multiple response) (2) तत्परता या अभिवृत्ति (set or attitude), (3)वरणात्मक अनुक्रिया(selective response) 4) सादृश्य द्वारा अनुक्रिया (response by analogy) (5)साहचर्यात्मक कववर्तन (Associative shifting)।

आई. पी. पैवलोव

पैवलोक का जन्म रूस के एक देहात में 1849 में हुआ था। वह 1870 में सेंट पीटर्सबर्ग विष्वविघालय मंे दाखिल हुए। वहाँ पशु शरीर -क्रिया (Animal Physiology) अध्ययन किया और 1875 में उपाधि प्राप्त कि 1890 से लेकर अपनी मृत्यु के समय तक वह सेंट पीटर्सबर्ग के प्रयोगात्मक औषधि संस्थान (Institute of Experimental medicine) में डायरेक्टर के पद पर बने रहे। जब वह पाचन ग्रंथियो (Digestive glands) की नाड़ियों तथा प्रतिवर्त (reflexes) पर अध्ययन कर रहे थे, उस समय उन्होने एक विशेष यन्त्र (Apparatus) का निर्माण किया । इस यन्त्र के द्वारा कुत्ते के मुँह से निकलने वाली लार, जिस समय उसके मुँह में खाना रखा जाता था, का मापन किया जाता था।

पैवलाव ने अपने प्रयोग के द्वारा यह सिद्ध किया कि कैसे एक अप्रभावशाली वस्तु प्रभावेपली बन जाती है उसे अनुबन्ध कहा गया। अनुबन्धन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक प्रभावहीन उत्तेजना (वस्तु या परिस्थिति) इतनी प्रभावशाली हो जाती है कि गुप्त प्रत्युत्तर को प्रखर कर देती है।

पैवलव ने अपने प्रयोग में भोजन जो (स्वाभाविक उत्तेजना) है तथा लार स्वाभाविक प्रतिक्रिया पर प्रभावषाली उत्तेजना का अध्ययन इस प्रकार किया-

US ⟶ UR
CS ⟶ US ⟶ UR
After Repetition or Trainting
CS ⟶ CR

US - Unconditioned Stimulus (स्वाभाविक उत्तेजना – भोजन)
UR - Unconditioned Respones (स्वाभाविक उत्तेजना)
CS - Conditioned Stimulus (अस्वाभाविक उत्तेजना- घंटी)
CR - Conditioned Respones (अस्वाभाविक प्रत्युत्तर –लार)

पैवलव ने अपने सिंद्धात में यह सिद्ध किया कि पैवलव के इस प्रयोग ने कैसे एक कृत्रिम उत्तेजना स्वाभाविक उत्तेजना की तरह कार्य करने लगती है इसलिए पैवलव को सीखने के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण कार्य करने के कारण नवीन साहचर्यवादियों का जनक माना जाता

पैवलव ने अनुबन्धित प्रतिवर्त CR सिद्धांत में Reinforcement तथा Extinction जैसे नियमों को विशेष महत्व दिया पैवलव का प्रयोग मनोविज्ञान के लिए एक ऐसी देन है कि शताब्दियों तक मनोविज्ञान का अध्ययन करने वाले अनुब्धन की उपयोगिता से "सीखने" के शेष में लाभ उठाते रहेंगे।

2.5 सांराश-

ब्रिटिश अनुभववादियों में टामस हाब्स, जान लॉक, डेविड हयूम, बर्कले आदि मनोविज्ञानिक ने इन्द्रियजनित ज्ञान द्वारा प्राप्त अनुभव को मनोविज्ञान का आधार बताया इस समय मनोविज्ञान में अनुभववाद तथा बुद्धिवाद दोनों का प्रभाव स्पष्ट देखा गया टामस हाब्स ने अनुभववाद का सूत्रपात किया और प्रेरणा, यंत्रवाद स्मृति कल्पना, भाव संवेग व साहचर्य जैसे तथ्यों पर योगदान दिया। जॉन लॉक ने मन एंव संवेदना, प्रत्यक्षीकरण एंव विचारों के साहचर्य तथा स्मृति पर कार्य का मनोविज्ञान के विकास को आगे बढ़ाया। जार्ज बर्कले ने संवेदना आत्मा का प्रत्यय, चिन्ह एंव साहचर्य पर अपना मत रखा। इसी प्रकार डेविड हयूम ने ज्ञान पर विचार किया और साहचर्यवाद पर स्पष्टता पूर्वक अपने विचार रखे। इन्द्रियजनित ज्ञान के साथ ब्रिटिश मनोवैज्ञानिकों ने साहचर्य के द्वारा मनोविज्ञान के विकास को आगे बढ़ाया। प्राचीन साहचर्यवादियों ने साहचर्य में स्मृति पर बल दिया। जिसमे अरस्तू, डेविड हार्टले, टॉमस ब्राउन, जेम्स मिल व अलैक्जैण्डर बेन आदि थे। नवीन साहचर्यवादियों में एविंगहास थार्नडाइक, पैवलव आदि मनोवैज्ञानिकों ने स्मृति के साथ सीखने पर बल दिया।

2.6 वस्तुनिष्ठ प्रश्न उत्तर-

1. ब्रिटिश इन्द्रियानुभव का सूत्रपात किसने किया-

(a) जान लाक (b)टामस हॉब्स

(c) डेविड हयूम (d) जार्ज बर्कले

2. 1761 में हिस्ट्री आफ इग्लैण्ड लिखी है?

(a) डेविड हार्डले (b) जार्ज बर्कले

(c) डेविड हयूम (d) जान लाक

3. निम्न लेखकों को उनके पुस्तकों के अनुसार सुमेलित कीजिए-

(a) डेविड हाटले (a) The new theory of vision

(b) डेविड हयूम (b) observation of man

(c) जान लॉक (c) History of England

(d) जार्ज बर्कले (d) Essay concerning human understanding

उत्तर (1- (b) टॉमस हाब्स

उत्तर (2- (c) डेविड हयूम

उत्तर (3)- (a-b), (b-c), (c-d), (d-a)

2.6 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. ब्रिटिश अनुभववादी मनोवैज्ञानिक टामस हाब्स के योगदान की चर्चा कीजिए?
2. क्या यह सत्य है किब्रिटिश अनुभववादियों ने साहयर्चवाद पर भी कार्य किया?
3. नवीन साहयर्यवादियों ने सीखने पर बल दिया स्पष्ट कीजिए?
4. टिप्पणी लिखियें

जान लॉक, अरस्तु, थार्नडाईक

२.7 संदर्भ सूचीः-

1. डा0 राम नाथ शर्मा- मनोविज्ञान का इतिहास प्रकाशक लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा।

2. डा0 राजकुमार ओझा- मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं सम्प्रदाय, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

3. डा0 जे0 डी0 शर्मा- मनोविज्ञान की पद्धतियॉ एवं सिद्धांत, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

4. मर्फी गार्डनर- हिस्टोरिकल इन्ट्रोडक्षन टू मार्डन साइकोलॉजी, राउटलेज एण्ड कैगनपाल, लंदन, 1964।

5. ब्रेट जार्ज एस.- एक हिस्ट्री आफ साइकोलॉजी, एपलटन सैन्चुरी, 1948।

6. जेम्स, डबलू- प्रिंसिपल्स आफ साईकोलॉजी, होल्ट, 1980

इकाई-3 शरीर क्रिया वैज्ञानिकों का मनोविज्ञान में योगदान (Contribution of Physiologist in Psychology)

इकाई की संरचना

3.0 प्रस्तावना
3.1 उद्देश्य
3.2 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
3.3 रेने डेकार्टे का योगदान
3.4 हॉब्स और डेविड हार्टले का योगदान
3.5 कैबेनिस और बिचाट का योगदान
3.6 पिनेल, जेम्स ब्रेड व एज्डेली
3.7 बेन, ब्रेड व विलियम जेम्स
3.8 वेबर फेशनर व म्यूलर का योगदान
3.9 हेमहोल्ज, लॉथ्जे, वुन्ट व पैवलॉव का योगदान
3.10 सारांश
3.11 मूल्यांकन प्रश्न
3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 प्रस्तावना

ग्रीक काल के बाद मनोविज्ञान के इतिहास में पुनर्जागरण का काल आता है। इस काल में विचारों, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं तथा ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए जिनमें विभिन्न संस्थाओं तथा व्यक्तियों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन सबने मनोविज्ञान के विकास को प्रभावित किया। यूरोप के पुनर्जागरण के युग में जो वैज्ञानिक प्रगति हुई उसका मनोविज्ञान पर बहुत प्रभाव पड़ा विशेषतया 17वी शताब्दी में गैलीलियों और न्यूटन के आविष्कारों और विधियों से मनोविज्ञान ने बहुत कुछ ग्रहण किया। यान्त्रिक और निरीक्षण की विधि का जिस प्रकार भौतिक विज्ञान में प्रयोग किया गया उसी प्रकार मनोविज्ञान में भी अन्तर्दर्शन विधि के साथ-साथ बाह्य निरीक्षण की विधि पर भी बल दिया गया। आत्मगत विधियों के स्थान पर वस्तुगत विधियों , संख्या, परिणाम, गणना, परीक्षण और ताल आदि को मनोविज्ञान में स्थान मिला।

शरीर क्रिया विज्ञान (Physiology) शरीर के अंगों और तन्त्रों की क्रिया-प्रणाली के आधार पर व्यवहार की व्याख्या करता है। शरीर-विज्ञान का अध्ययन करने वाले शारीरिक अंगों की रचना और उसके कार्यो का अध्ययन करते हैं। वे विभिन्न प्रकार की संस्थान सम्बन्धी समस्याओं को अपने अध्ययन की प्रमुख सामग्री मानते हैं जीव किस प्रकार भोजन को पचाता है, किस प्रकार रक्त में ऊर्जा का विलय होता है, किस प्रकार रक्त संचार के द्वारा सम्पूर्ण शरीर अपनी गतिविधि पूर्ण करता है , किस प्रकार अंगों में रासायनिक परिवर्तन होते हैं और किस प्रकार पेशियाँ गति प्रदान करती हैं, आदि विषय उनकी शोध समस्याएँ होती है। जबकि मनोविज्ञान के अन्तर्गत जीव की सम्पूर्ण क्रियाओं से उत्पन्न होने वाले व्यवहार का अध्ययन क्रिया जाता है। मनोवैज्ञानिक शारीरिक क्रियाओं का अध्ययन अंशों मे करते हैं, जैसे आँख के विभिन्न भागों की रचना और उसके कार्यो का अध्ययन जबकि शरीर विज्ञान शास्त्री जीव की क्रियाओं का अध्ययन समग्र रूप में करते हैं। एक शरीर-विज्ञान शास्त्री नाड़ी-क्रियाओं का विद्युतीय रिकॉर्डिंग कर सकता है, नाड़ी-क्रियाओं से उत्पन्न होने वाले पदार्थों और ऊर्जा का अध्ययन कर सकता है तथा पाचन-क्रिया में उत्पन्न होने वाले एन्जायम्स के प्रभाव का अध्ययन कर सकता है। इसी भाँति एक मनोवैज्ञानिक सीखने सम्बन्धी क्रियाओं का मापन कर सकता है, पशुओं पर शारीरिक क्रियाओं के प्रभाव को मालूम कर सकता है। प्रमस्तिष्कीय कार्टेक्स के केन्द्रों का अध्ययन कर सकता है, आदि। कुल मिलाकर शरीर-विज्ञान शास्त्री और मनोवैज्ञानिक दोनों का मूल उद्देश्य एक ही होता है। वे दोनों ही कार्यात्मक अध्ययन में रूचि रखते हैं। शरीर विज्ञान-शास्त्री मानव की क्रियाओं को समझने के लिये जीव के अंगों की संरचना और उनके कार्यो का अध्यापन करता है, उसी प्रकार मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करने के लिये उद्दीपक के साथ-साथ शारीरिक अंगों की संरचना और उनके कार्यो का अध्ययन करता है।

3.1 उद्देष्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- शरीर क्रिया विज्ञान का मनोविज्ञान के विकास में क्या योगदान है बता सकेंगे।
- भिन्न-भिन्न शरीर क्रिया मनोविज्ञानियों का क्या योगदान है जान सकेंगे।

3.2 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background)-

मनोविज्ञान की उत्पत्ति यूनान के दार्शनिक विचारों से जुड़ी हुई है। यूनानियों के समय में यह शरीर रचना विज्ञान (Anatomy) सर्जरी तथा चिकित्सीय पौधों के ज्ञान का सम्मिश्रण था और इसकी कमी जादू टोने तथा हठधर्मिता द्वारा पूरी की जाती थी। उस मानवीय शरीर का डिसैक्सन करना कानून के विरूद्ध था इस कारण शरीर रचना विज्ञान के सही ज्ञान की प्रगति पशुओं के डिसैक्सन पर निर्भर थी। वस्तुतः शरीर रचना विज्ञान के कारण शरीर क्रियात्मक ज्ञान पीछे रह गया था।

हिपोक्रेटीज (Hippocrates : 460- 370 B.C)

जो चिकित्सा के निर्माता माने जाते थे, ने चिकित्सीय तथ्य के प्रति विषयनिष्ठता (objectivity) दिखाई और उन्होंने इस सम्बन्ध में 87 ग्रन्थ लिखे। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक “Oh The Nature of the Man” है। उन्होंने इस ग्रन्थ में मनुष्य की प्रकृति के विषय में अपने विचारों को व्यक्त किया था। मनुष्य की शारीरिक रचना का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा कि मनुष्य के शरीर में चार द्रव पाये जाते हैं, जिन्हें ह्यूमर की संज्ञा दी। ये चार थे- पीला पित्त, काला पित्त, कफ और रक्त। जब इन चारों का अनुपात बिगड़ जाता है तो रोगों के लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं। उन्होंने संवेग तथा भावनाओं के विषय में भी लिखा। उनका कहना था कि ह्यूमर के विषमता के कारण ही मानसिक रोगों के लक्षण उत्पन्न होते हैं। कफ और पित्त के दोषों के कारण मस्तिष्क अस्वस्थ हो जाता है। उन्हें चिकित्साशास्त्र का निर्माता कहा जाता है। किन्तु उनका ज्ञान मानवीय शरीर की गहराई के शरीर-रचना सम्बन्धी अवलोकन से परिपूर्ण न था व उन्हें प्रायोगिक विधि की जानकारी न थी। इसलिये वे अपने युग की सीमा के आगे न जा सके। अनेक वर्षों बाद गेलेन (Galen 129-199 A.D) ने इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण कार्य किये । वे अपने समय के उत्तम चिकित्सक थे, अच्छे अवलोकनकर्त्ता थे तथा परिसीमित रूप में प्रयोगकर्त्ता भी थे। गेलेने ने चिकित्सीय विज्ञान में एक नवीन दृष्टिकोण प्रदान किया, उनको चिकित्सा में वही स्थान प्राप्त था जो अरस्तू को दर्शन तथा अन्य विज्ञानों में। सोलहवीं सदी में मानवीय शरीरों का डिसैक्शन होने लगा किन्तु गिरिजाघरों की ओर से इसका विरोध होता था। लियोनार्डो डा विंसी तथा मिकेलैंग्लो दोनों ने इसी तरीके से मानवीय शरीर का अध्ययन किया।

एंड्रियास वेसेलियस (Andreas Vesalius 1514- 1564) ने चिकित्सा के क्षेत्र में हठधर्मिता (Dogma) पर विजय पायी। उन्होंने मानवीय शरीर के शरीर-रचना विज्ञान पर व्याख्यान भी दिये। शरीर-रचना विज्ञान में जो नवीन परम्परा है। उसका सूत्रपात एंड्रियास वेसेलियस से हुआ है। किन्तु वह एक सदी तक नहीं चली क्योंकि वे अपने समय से आगे थे। गिरिजाघर ने उनका घोर विरोध किया, क्योंकि उनके कार्य में परम्परा के लिए सम्मान की कमी थी। सत्तरहवी सदी में उनके कार्य को प्रगति मिली।

नवीन सीखने की इस सदी में जो कार्य शरीर-रचना विज्ञान (Anatomy)में वेसैलियस ने किया था, वह शरीर-क्रिया विज्ञान (Physiology) में हार्वे (Harvey) ने किया। उन्होंने 1628 में रूधिर के परिवहन की खोज की और उसके शरीर क्रियात्मक प्रक्रिया की व्याख्या की। उन्होंने प्रयोग द्वारा प्रदर्शित किया कि परिवहन के दौरान नीला रूधिर लाल हो जाता है।

ग्रीक काल तथा पुनर्जागरण काल में मनोविज्ञान के इतिहास के अध्यन से ज्ञात होता है कि इस युग में क्रमशः वैज्ञानिक पद्धतियों, वस्तुगत निरीक्षण और प्रयोग का विकास हुआ। उपरोक्त विज्ञानियों में से किसी का भी मनोविज्ञान के साथ सीधा सम्बन्ध नहीं है, किन्तु इन विज्ञानियों ने तथा उनसे मिलते-जुलते अन्य विज्ञानियों ने परोक्ष रूप से ऐसा वायुमण्डल प्रदान किया जिसमें वैज्ञानिक जाँच पुनः समृद्ध हो सकती थी। फलतः नवीन विज्ञान के सामान्य विकास में उनका अत्यधिक महत्व है। फिर भी नवीन मनोविज्ञान के इतिहास के साथ जिनका सीधा सम्बन्ध है, वे थे फ्रेंच

दार्शनिक तथा गणितज्ञ रेने डेकार्टे (1596-1650) । डेकार्टे मुख्यतः दार्शनिक थे, किन्तु वे विज्ञानी थे और साथ ही शरीर क्रिया-विज्ञान तथा प्रतिवर्तवाद (Reflexology) के जनक थे। रेने डेकार्टे ने (1649) में सर्वप्रथम व्यवहार के शारीरिक लेखे-जोखे को सुव्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया। उसने पशुओं के ज्ञान-तन्तुओं की यान्त्रिक क्रियाओं का कारणीयकरण किया। परन्तु वह मनुष्य की विवेकात्मा से सम्बन्धित मानसिक क्रियाओं के विषय में कोई खोज नहीं कर सका। जेन स्वमरडम (1674) के द्वारा किये गये माँस पेशीय- खिचाव ;(Muscular contraction) सम्बन्धी निरीक्षण और थोमस विकीज (1707)के द्वारा मस्तिष्क के विभिन्न भागों के क्षय सम्बन्धी किये गये शोध अध्ययन से लोगों को स्नायु सम्बन्धी परीक्षणात्मक कार्यों को समझने में बहुत अधिक सहायता मिली। जॉन अनजर (1771) तथा जॉर्ज प्रोकस्का (1784) ने प्रतिवर्ती क्रिया (reflex actions)और मस्तिष्क के विभिन्न भागों के कार्यों का अध्ययन किया। इन दोनों ने ज्ञान के अर्थ को स्पष्ट व सुव्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया। चार्ल्स बैल (1811) ने संवेदी और गतिवाही नाड़ियों का अन्तर स्पष्ट किया और पेरी फ्लोरेन्स (1824) ने स्नायु-संस्थान से सम्बन्धित क्रियाओं पर खोज की।

पॉल ब्रोका (1861) ने मानसिक व्याधातों के समबन्ध में बताया कि वाणी दोष के कारण मस्तिष्क के अगले भाग पर जोर पड़ता है। जिससे मानसिक आघात हो जाते हैं। जी0 फिट्ष और ई.हिटजिंग (1870) ने मस्तिष्क के एक सूत्रीय सिद्धान्त को अस्वीकार कर दिया तथा व्यवहार को स्नायु क्रियाओं पर आश्रित बताया। साथ ही इन्होंने इस बात को भी स्पष्ट किया कि ऐच्छिक क्रियाओं (voluntary movements) से गतिवाही कार्टेक्स (motor cortex) पर घात हो सकता है।

इस प्रकार के वैज्ञानिक अनुसन्धानों से स्नायु संस्थान के अध्ययन में दिन दूनी और रात चौगुनी प्रगति होने लगी। तत्पश्चात् विलहेम वुण्ट 1874 ने शारीरिक मनोविज्ञान से सम्बन्धित प्रथम पुस्तक लिखी और परीक्षणों के लिये एक प्रयोगशाला की स्थापना की। वुण्ट को अधिकतर कार्य शरीर विज्ञान (philosophy)और मानव चिकित्सा से सम्बन्धित है। चार्ल्स एम.शैरिंगटन ने पुनः स्थापना के जटिल सम्बन्धों तथा परावर्ती में निषेध (intricate relation of reinforcement and inhibition in reflexes) पर कार्य करके उनका विश्लेषण किया। रूस के प्रसिद्ध शारीरिक मनोवैज्ञानिक पैवलॉव तथा डब्ल्यू वानवैक्ट्रेव ने परावर्ती सिद्धान्त में सीखने की ओर प्रमस्तिष्कीय क्रियाओं के योग को समझाया।

इस प्रकार से मानसिक क्रियाओं और व्यवहार का अध्ययन शारीरिक विषय के सम्पर्क में आकर धीरे-धीरे नया रूप धारण करने लगा। 18वी शताब्दी में भौतिकवादियों ने डेकार्टे के मस्तिष्क शरीर के पृथीकरण सिद्धान्त पर प्रहार किया। इन लोगों का कहना था कि पशु तथा मनुष्य के स्नायु संस्थान के कार्यों और रचना में समानता पायी जाती है इसीलिये पशुओं पर किये गयी परीक्षणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मानसिक और शारीरिक कार्य अलग-अलग नहीं होते हैं। एक समय तो ऐसा आया कि गोट फ्रीट लिबनिट्ज (1765) द्वारा प्रस्तुत सर्वप्रथम मनोभौतिक

सिद्धान्त (psychophysical parallelism)अत्यन्त लोकप्रिय हो गया और माना जाने लगा कि मस्तिष्क व शरीर आंशिक रूप से ही स्वतन्त्र होते हैं। अतः इन दोनों के व्यवहारों का एक दूसरे पर प्रभाव रहता है, परन्तु निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि मानसिक क्रियाओं का अत्यधिक हाथ रहता है।

वुण्ट तथा उसके अनुयाइयों ने अनुभव की संवेदन तथा भावना में परिवर्तित करने का प्रयत्न किया। ओसवाल्डकूल्पे ने बताया कि विचारों का सम्मिश्रण तथा क्रियाओं का प्रभाव पूर्णरूप से अचेतन होता है, जिसे केवल अमानसिक क्रिया ही माना जा सकता है। इस प्रकार के शारीरिक अध्ययन से निष्कर्ष यह निकला कि मानसिक अवस्थाएँ और क्रियाएँ केवल शरीर के विभिन्न अंगों, जिनमें मस्तिष्क भी शामिल है, पर आधारित है तथा इस प्रकार के संगठन को मस्तिष्क की दैनिक कार्यप्रणाली से पृथक करके जीवित नहीं रखा जा सकता है। इसके थोड़े दिनों बाद मनोविज्ञान के क्षेत्र में भौतिक विज्ञान के पदार्पण से दैहिक विज्ञान की समस्याएँ कुछ कम हो गयी। मनोभौतिकी के अन्तर्गत मनोवैज्ञानिकों ने उद्दीपक तथा संवेदना की मात्रा जानने का सफल प्रयत्न किया। इस प्रकार के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला कि संवेदना की तीव्रता उद्दीपक की मात्रा की भिन्नता के साथ-साथ घटती तथा बढ़ती है, जिसका कोई न कोई स्थिर अनुपात (constant ratio)अवश्य होता है। गैस्टाव फैकनर, जिसने मापन सिद्धान्त का विकास किया, का विश्वास था कि, उत्दीपक तथा अनुक्रिया में भी मात्रात्मक सम्बन्ध होता है। इस प्रकार से फैकनर का कार्य मनोभौतिक क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण माना जाने लगा, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि यह सिद्धान्त आलोचना से परे था।

शारीरिक मनोविज्ञान सर्वप्रथम स्नायु संस्थान से सम्बन्धित था। शारीरिक मनोविज्ञान का जन्म केवल एक शताब्दी पूर्व शरीर विज्ञान से हुआ क्योंकि कुछ शरीर शास्त्री मस्तिष्क कार्यों के अध्ययन में रूचि रखते थे। अतएव उनके लिए मानवीय व्यवहार को समझना तथा मस्तिष्क के विभिन्न भागों में दोष आने के कारण व्यवहार परिवर्तन का अध्ययन करना था। बैबर फैकनर हैल्महोज आदि के कार्यों को भी इसी क्षेत्र के अन्तर्गत रखा गया। सन 1874 में वुण्ट की पुस्तक ’प्रिंसिपल ऑफ फिजियोलॉजीकल साइक्लॉजी’’ का प्रकाशन हुआ जिसमें संवेदना, मस्तिष्क के कार्यों एवं अन्य क्षेत्रों को शामिल किया गया। जहानसमूलर (Johhanes Muller)1801.1858 शरीर क्रिया विज्ञान में प्रयोगात्मक विधियों के प्रबल पक्षधर थे।

कुछ शरीर क्रिया विज्ञानियों का योगदान

3.3 रेने डेकार्टे का योगदान

रेनेडेकार्ट (1596.1650) डेकार्ट का जन्म मार्च में फ्रांस के अन्दर टौरैनी में हुआ था। यदि कोई इतिहास को प्राचीन मध्यकालीन तथा नवीन रूप में विभाजन करें तो हम कह सकते हैं कि नवीन मनोविज्ञान का वास्तविक आरम्भ डेकार्टे से हुआ। वे मुख्यतः दार्शनिक थे, किन्तु वे विज्ञानी थे। और साथ ही शरीर क्रिया-विज्ञान तथा प्रतिवर्तवाद (Reflexology)के जनक थे। इसके अतिरिक्त

वे गणितज्ञ भी थे, क्योंकि उन्होंने विश्लेषणात्मक ज्यॉमिति का अविष्कार किया इस प्रकार उन्होंने ज्यामिति को वैज्ञानिक कार्य क लिए महत्वपूर्ण साधन बनाया।

1. **नाड़ी तन्त्र का अध्ययन** डेकोर्ट पर गैलीलियो, हार्वे और न्यूटन के वैज्ञानिक प्रयोगों और आविष्कारों का पूर्ण रूप से प्रभाव पड़ा। उसने वैज्ञानिक दृष्टि से मन और शरीर का अध्ययन किया जिससे भविष्य में चलकर मनोविज्ञान के इतिहास में नया दृष्टिकोण प्राप्त हुआ। डेकोर्ट केवल गणित का ही पण्डित नहीं था वरन् उसकी देन शरीर शास्त्र (Physiology)में भी महत्वपूर्ण है। उसने नाड़ी तन्त्र का विस्तृत अध्ययन किया। उसका ज्ञानवाही और क्रियावाही नाड़ियों का अध्ययन मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्णहै।उसने नाड़ी क्रिया तथा मानसिक प्रक्रियाओं से व्यवहार के सम्बन्ध को स्पष्ट करने का प्रयास किया। उसके इस प्रयास से मनोविज्ञान में मनोदैहिक क्रियाओं से सम्बन्धित विचारधाराओं में नया परिवर्तन हुआ।
2. **मन और शरीर का सम्बन्ध** डेकार्टे ने मन की धारणा को एक नये रूप में प्रस्तुत किया। पहले दार्शनिकों ने मन और शरीर को एक ही तत्व के दो पहलुओं के रूप में स्वीकार किया था। परन्तु डेकार्टे ने मन को शरीर से भिन्न माना। शरीर का मन पर और मन का शरीर पर कैसे प्रभाव पड़ता है? और जब दोनों में समबन्ध नहीं है तो कार्य विशेष कैसे सम्भव है? इन प्रश्नों का उत्तर डेकार्टे ने शरीर शास्त्रीय दृष्टिोण से दिया, उसने बतलाया कि शरीर का मन पर वास्तविक रूप में कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उसने शरीर और मन की पारस्परिक क्रियाओं का आधार पीनियल (Pineal Gland)को माना है। इसी ग्रन्थि के कारण मन और शरीर में परस्पर सहयोग दिखायी पड़ता है।
3. **प्रतिवर्त क्रिया की धारणा** डेकार्टे ने आत्मा अथवा मन ; और शरीर अथवा जड़ पदार्थ का एक दूसरे से अलग तत्व मानने का कारण पीनियल ग्रन्थि को स्वीकार किया। डेकोर्ट ने पीनियल ग्रंथि को मस्तिष्क के मध्य में माना। उसके अनुसार शारीरिक क्रियाएँ यन्त्रवत् होती है जिनमें इस ग्रन्थि का मुख्य हाथ है।
4. **संवेग और वासनाएँ** आधुनिक मनोविज्ञान की दृष्टि से डेकार्टे का सबसे अधिक महत्वपूर्ण योगदान संवेग और वासनाओं के सम्बन्ध में है डेकार्टे पर वैज्ञानिक हार्वे के रक्त सम्बन्धी अध्ययन का प्रभाव पड़ा है। उसने शरीर को शास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा। संवेग की उत्पत्ति मस्तिष्क, रक्त, आत्मा और शारीरिक अंगों में गति उत्पन्न होने के कारण होती है। डेकार्टे ने शरीर को संवेग का आधार माना है। शरीर से मन प्रभावित होता है। संवेग में शरीर और मन का संयोग मनोवैज्ञानिक आज भी स्वीकार करते हैं।

डेकार्टे के अनुयायी- डेकार्टे के दो अनुयायी मलब्रांश और लामेट्रे ने उसकी यन्त्रवत् प्रतिवर्तक्रिया और संवेग की धारणाओं को स्वीकार किया। मलब्रांश ने डेकार्टे की संवेग सम्बन्धी

धारणा को ग्रहण किया और इस सम्बन्ध में शरीर शास्त्रीय दृष्टिकोण उपस्थित किया। इसी दृष्टिकोण से जेम्स-लांजे ने संवेग सम्बन्धी सिद्धान्त की पृष्ठभूमि तैयार की थी। गार्डनर मर्फी के शब्दों में, 'मलब्रांश ने संवेग और शरीर शास्त्रीय परिभाषा को इतना भली प्रकार समझा कि उसको जेम्स-जांजे सिद्धान्त का पूर्वगामी माना जा सकता है।

मनोविज्ञान में डेकार्टे का योगदान

दार्शनिक डेकार्टे बाद में मनोवैज्ञानिक हो गये क्योंकि उन्होंने आत्मा और मन की अनिश्चितता को छोड़कर चेतना को स्थान दिया। दूसरे, उन्होंने वैज्ञानिक प्रभावों को ग्रहण करके चिन्तन में वैज्ञानिक तत्वों की व्याख्या की। तीसरे, उसके समय में ही शरीर विज्ञान और मनोविज्ञान अधिक निकट आने लगे। इसी से यन्त्रवाद और प्रतिवर्तक्रियावाद (Reflexcism)का जन्म हुआ। दोनों विज्ञानों के सम्मिलित होने के फलस्वरूप शरीर और मन की सम्मिलितक्रिया पर जोर दिया गया। चौथी बात यह है कि डेकार्टे ने वैज्ञानिक विधियों पर अधिक बल दिया। मनोविज्ञान के क्षेत्र में डेकार्टे के इस यान्त्रिकवाद से पर्याप्त परिवर्तन हुआ। शरीर-विज्ञान ने मनोविज्ञान को प्रभावित किया और अब मनोविज्ञान केवल आत्मा का विज्ञान नहीं रह गया। यहीं मनोविज्ञान में डेकार्टे का योगदान है।

थॉमस हॉब्स (Thomus Hobes) 1588.1679

थॉमस हॉब्स का जन्म विल्टशायर में हुआ था। हॉब्स डेकार्टे के समकालीन थे तथा राजनीतिक दार्शनिक थे। हॉब्स ने मौलिक प्रकृति तथा उपार्जित ज्ञान में भेद किया है। मनुष्य कुछ ऐसे कार्य करता है जो मूल प्रकृति से प्रेरित होते हैं, किन्तु उसके विशिष्ट कार्य उपार्जित ज्ञान से संचालित होते हैं। मानव समाज में सफलतापूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिये मानव प्रकृति के भूख, प्यास, रति, भय, मान आदि आवश्यक मूल स्रोत हैं। इन्हीं के माध्यम से मनुष्य दुःख की निवृत्ति और सुख की खोज करता है। हॉब्स का मनोविज्ञान अधिकांश में इन्द्रियांनुभविक (Empirical)है। वे मस्तिष्क में गति के सिद्धान्त को स्वीकार करते हैं। भूख और भय आन्तरिक गतियों में है। इसी प्रकार संवेदना भी एक प्रकार की गति है, जो इन्द्रियों में प्रवृत्ति उत्पन्न करती है तथा इस प्रकार तन्त्रिकाओं के द्वारा मस्तिष्क में अपनी गति उत्पन्न करती है। मनोविज्ञान के इतिहास में हॉब्स का महत्व अंग्रेजी दर्शन में अनुभवात्मक आन्दोलन व शरीर क्रियात्मक उपागम की रूप रेखा बनाने को प्रेरित करने में हैं।

डेविड हार्टले (1705.1757)

हार्टले के पिता मिनिस्टर थे । उनका जन्म ऑक्सफोर्ड में हुआ था। उन्होंने बी.ए. तथा एम.ए. की उपाधियाँ प्राप्त की और बाद में चिकित्सक का कार्य करने लगे। हार्टले की पुस्तक (Observations on man, his fame, his duty and his expectations)में प्रकाशित हुई थी और वह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं इस ग्रन्थ का जितना स्वागत जर्मनी में हुआ , उतना

इंग्लैंड में नहीं हुआ। इस ग्रंथ में साहचर्यवाद पर व्यवस्थित विवेचन किया गया है। हार्टले का साहचर्य का मूलभूत नियम संनिधि (contiguity)है जिसके द्वारा उन्होंने स्मृति, तर्क, संवेग तथा ऐच्छिक तथा अनैच्छिक दोनों कार्यों की व्याख्या करने का प्रयत्न किया। उन्होंने लॉक तथा न्यूटन की सराहना की। उनका मनोविज्ञान, न्यूटन के कंपन (vibration)के सिद्धान्त तथा लॉक के विचारों के साहचर्य के सिद्धान्त के मिश्रण का परिणाम था । उन्होंने न्यूटन के प्रत्यय को तंत्रिका तंत्र (nervous system)पर लागू किया। इस प्रकार वे इंग्लैंड के एक शरीर क्रिया मनोविज्ञानी के नाम से प्रसिद्ध हुए।

विचारों की प्रक्रिया (Process Ideas)

वह कहता है कि शारीरिक आदतें अभ्यास से विकसित होती हैं। आदतों से सम्बन्धित जितनी भी क्रियाएँ होती हैं, उनमें एकता होती हैं मानसिक प्रक्रियाओं के लिए भी वह यह बात कहता है। स्मृति के विषय में वह यह मानता है कि अनुभव का क्रम संचित होकर स्मृति का रूप धारण कर लेता है। संवेदनाओं के लिए उसने तन्त्रिका -तन्त्र की गति को आधार माना संवेदना तथा प्रतिमा में वह कोई विशेष भेद स्पष्ट नहीं कर सका। तन्त्रिकाओं की मन्द गति प्रतिमा को रूप प्रदान करती है। विचारों के लिए वह यह मानता है कि संवेदनाओं और प्रतिभा के कारण जो अनुभव उत्पन्न होते हैं , उन अनुभवों का मिश्रण रूप ही विचारों को जन्म देता है। हार्टले का मत है कि विचार संवेदनाओं के संगठित समूह की देन है। इस प्रकार उसने विचारों के उत्पन्न होने में शारीरिक तन्त्र को महत्वपूर्ण माना है। उसने बर्कले और दूसरे विद्वानों की भाँति आत्मा को विचारों का आधार नहीं माना। इस शताब्दी के मनोवैज्ञानिकों में हार्टले एक ऐसा व्यक्ति था जिसने मानसिक प्रक्रियाओं के लिये शारीरिक क्रियाओं की व्याख्या की। हार्टले ने न्यूटन के कम्पन सिद्धान्त को और लॉक के विचारों के साहचर्य के सिद्धान्त को महत्व दिया। तन्त्रिका तन्त्र से संचालित क्रियाओं पर न्यूटन के कम्पन (Vibration)सिद्धान्त को लागू किया।

तन्त्रिका तन्त्र की क्रियाएँ (Activities of Nervous System)वह कहता है कि तन्त्रिका ऊतक (nerve tissues) वाह्य उद्दीपक से प्राप्त कम्पन को क्रमिक रूप में प्राप्त करते हैं। जब एक इन्द्रिय उद्दीपक से उद्दीप्त होती है और कुछ देर के बाद दूसरे इन्द्रिय उद्दीपक से उद्दीप्त होती है इसका परिणाम यह होता है कि पहले उद्दीपक द्वारा मस्तिष्क में उत्पन्न कम्पन का अनुसरण दूसरे उद्दीपक द्वारा उत्पन्न कम्पन्न करता है। मस्तिष्क के विभिन्न केंद्रों में इस प्रकार का एक पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित होता है। इस पारस्परिक सम्बन्ध के कारण यदि पहला उद्दीपक पुनः दिया जाता है तो मस्तिष्क के पहले भाग का कम्पन दूसरे भाग में भी कम्पन उत्पन्न कर देता है, चाहे दूसरे उद्दीपक से मस्तिष्क के दूसरे भाग को उद्दीप्त नहीं किया गया हो। हार्टले डेकार्टे की तरह द्वैतवादी है। डेकार्ट के पश्चात् व मन और पदार्थ के द्वैत के समबन्ध में एक स्पष्ट विचारक हैं।

पैरे जीन जॉर्ज कैबेनिस (Pierre Jean George Cabanis)1757.1808

21 वर्ष की अवस्था में केबेनिस ने चिकित्साशास्त्र में निपुणता प्राप्त की। अठारहवीं सदी का फ्रेंच मनोविज्ञान कैबेनिस की देन के साथ अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया था। जो लोग डेकार्टे को शरीर क्रिया मनोविज्ञान का संस्थापक नहीं मानते हैं वे कैबेनिस को कभी-कभी उसका संस्थापक कहते हैं। वे फ्रेंच क्रान्ति के समय फ्रांस में उपस्थित थे और उस आन्दोलन के देवीप्यमान प्रवर्त्तक थे जिसका उद्देश्य निर्जीव के विज्ञान को जीवित वस्तुओं के साथ मिलाना था। उन्होंने महत्वपूर्ण लेखकों का अध्ययन किया और उनके विचारों से अच्छा परिचय प्राप्त किया था। वे लेखक हैं- होमर, सिसरो, ऑगस्टाइन, लॉक, डेकार्टे , गटे तथा ग्रे जिन्होंने श्म्समहलश् लिखी थी। उन्होंने अपने अध्ययन में हिपोक्रैटीज तथा गैलन को भी सम्मिलित कर लिया। 1795 में जब उनसे यह पता लगाने के लिए कहा गया कि गिलोटिन ;ळनपससवजपदमद्ध से सिरच्छेदन (Beheading) कर देने के बाद व्यक्ति चेतन रहते हैं अथवा नहीं, तब उनके विचारों का निर्माण होना आरम्भ हुआ। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सिरच्छेदन के बाद वे चल नहीं सकते। उन्होंने बताया कि चेतना मानसिक संगठन का उच्चतम स्तर होता है। और वह मस्तिष्क के कार्य पर निर्भर रहती है। मस्तिष्क चेतना का उसी प्रकार अंग होता है जिस प्रकार उदर पाचन का अंग होता है अथवा जिगर पित्त को छानने के लिए अंग होताहै। यदि व्यक्ति का शरीर सिरच्छेदन के बाद ऐंठन करता है तो उस गति का मस्तिष्क से कोई सम्बन्ध नहीं होता, क्योंकि वह अचेतन होती है और वह मूल प्रवृत्ति के स्तर पर होती है। मर्फी ने कहा है कि सिरच्छेदन के अध्ययन के फलस्वरूप कैबेनिस को प्रतिवर्त ;तमसिमगद्ध क्रिया का अध्ययन करने का प्रोत्साहन मिला।

प्रतिवर्त क्रिया कैंबेनिस एक बहुत बड़ा चिकित्सक था। अतः उसका मनोवैज्ञानिक होना स्वाभाविक ही था, परन्तु मनोविज्ञान में विशेष रूचि लेने का उसका एक दूसरा कारण भी था। उस समय क्रान्ति के अपराधी सिरच्छेद यन्त्र द्वारा मार डाले जाते थे। कैबेनिस इस लोक हितकारी समस्या में रूचि लेने लगा कि इस यन्त्र द्वारा मृत्युदण्ड देने पर व्यक्ति पीड़ित होता है या यन्त्र इतनी शीघ्रता से कार्य करता है कि व्यक्ति को पीड़ा नहीं होती। इस प्रश्न के समाधान के लिये उसको प्रतिवर्त क्रिया का अध्ययन करना पड़ा। अस्तु, उसने प्रतिवर्त क्रिया के विषय में व्यापक ज्ञान प्राप्त किया और उसके मत का आधुनिक युग में दैहिक मनोविज्ञान में महत्वपूर्ण स्थान है। काबानिस ने प्रतिवर्त-क्रिया का अध्ययन तीन स्तरों पर किया। जो इस प्रकार है- सुषुम्ना स्तर 2. अर्ध चेतन स्तर 3. चिन्तन और संकल्प का स्तर

काबानिस ने बतलाया कि प्रतिवर्त क्रिया का प्रथम स्तर सुषुम्ना नाड़ी से सम्बन्धित है। सुषुम्ना नाड़ी की प्रतिवर्तन क्रिया किसी उत्तेजना के प्राप्त होने पर होती है। अर्ध चेतना के स्तर पर उत्पन्न प्रतिक्रिया का ज्ञान व्यक्ति को पूर्ण रूप से नहीं होता। सबसे उच्च स्तर पर प्रतिक्रिया का सम्बन्ध चिन्तन और संकल्प से होता है। इन स्तरों के विश्लेषण के बाद काबानिस इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि किसी क्रिया में मस्तिष्क के सम्मिलित हुए बिना कोई मानसिक क्रिया सम्भव नहीं है। मस्तिष्क के सम्मिलित न होने पर केवल यान्त्रिक प्रतिक्रिया होती है। इस परिकल्पना के आधार

पर उसने यह निष्कर्ष निकाला कि सिरच्छंदन यन्त्र पीड़ा उत्पन्न नहीं करता। मृत्यु-दण्ड के पश्चात शरीर में जो छटपटाहट होती है वह केवल निम्न स्तर से उत्पन्न प्रतिवर्त क्रिया के कारण होती है।

मस्तिष्क की कार्य-प्रणाली काबानिस का दूसरा कार्य मस्तिष्क की क्रिया के सम्बन्ध में है। उसने यह बतलाया कि जो यान्त्रिक सिद्धान्त प्रतिवर्त-क्रिया में कार्य करते हैं वे ही मस्तिष्क की क्रिया-प्रणाली को भी परिचालित करते हैं। उसने तथ्यों के आँकड़े जुटाये और उनके आधार पर यह सिद्ध किया कि मस्तिष्क रोग और मानसिक रोग में सम्बन्ध है। इस प्रकार उसने दैहिक विज्ञान के आधार पर मनोविज्ञान का अध्ययन किया और शरीर तथा मन के सम्बन्ध को भी स्पष्ट किया। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि काबानिस ही दैहिक मनोविज्ञान के जन्मदाता थे। कैबेनिस के कार्य बिचाट ;ठपबींजद्ध के कार्य के समकालीन थे। उन्होंने चिकित्सा के क्षेत्र में जो कार्य किया उसने शरीर क्रिया मनोविज्ञान के विकास में बहुत कुछ सहायता मिली।

बिचाट (Bichat)

चिकित्सक होने के कारण विचाट दैहिक मनोविज्ञान में रूचि रखता था। शरीरशास्त्र में हिप्पोक्रेटीस के युग से ही शरीर केवल कुछ अंगों का संगठन माना जाता था। विचाट ने नाड़ी तन्तुओं का अध्ययन करना प्रारम्भ किया और बतलाया कि शरीर अंग का संगठन मात्र ही नहीं है। उसने नाड़ी तन्तुओं और मानसिक रोगों के सम्बन्ध का अध्ययन किया। बिचाट ने ऊतकों(Tissues) की संरचना के क्षेत्र में विश्लेषण किया और भौतिकी के विज्ञान की आधारशिला रखी। उन्होंने बताया कि मानव शरीर का हर एक अवयव कुछ ऊतकों द्वारा निर्मित होता है जो विभिन्न तरीकों में सम्मिलित होकर जैव-अंगों, पेशियों ,ग्रन्थियों आदि की रचना करते हैं। यहाँ वे तंत्रिका तंत्र विकृति विज्ञान (psychology pathology)की समस्याओं के सम्पर्क में आए और इनके माध्यम से मनोविकृतिविज्ञान उनके सामने आया। इस प्रकार उन्होंने शरीर रचना सम्बन्धी तथा ऊतकशास्त्र सम्बन्धी संरचना को अपसामान्यता के शब्दों में मानसिक बीमारी के विभिन्न रूपों को देखा। शरीर क्रिया विज्ञान का निर्माण हो रहा था। गार्डन मर्फी के शब्दों में डेकार्टे तथा हॉब्स मनोविज्ञान के प्रति शरीर-क्रियात्मक उपागम की रूपरेखा बना चुके थे। हार्टले ने भी साहचर्य की शरीर क्रिया स्थापित करने का प्रयत्न किया था।

3.6 पिनेल (Pinel)1745.1826

फ्रांस के एक अन्य विज्ञानी भी थे जिन्होंने अन्य वैज्ञानिकों के द्वारा की गई अलग-अलग विचार धाराओं में एकता को जानने का प्रयत्न किया। उनका नाम था पिनैल जो 1792 में पेरिस में स्थित विसैट्री अस्पताल के निदेशक नियुक्त किये गये थे। इन दिनों पागल मनुष्यों के विषय में अजीब धारणा थी। उन्हें अपराधी आचारहीन और शैतान का भाई माना जाता था। उन्होंने पागलों को देखकर यह परिणाम निकाला कि वे वस्तुतः रोगी थे और उनके मस्तिष्क में बीमारी थी। सन् 1806 में पागलपन पर पिनेल की एक पुस्तक प्रकाशित हुई। इस पुस्तक का सर्वत्र स्वागत हुआ। उन्होंने यह भी कहा कि मस्तिष्क में विकार होने से व्यक्तित्व में विकार आ जाता है, और इस

प्रकार उन्होंने तंत्रिका विज्ञान तथा विकृति विज्ञान का सार अभिव्यक्त किया। इसके साथ-साथ उन्होंने दुःख को कम करने पर जोर दिया और इस प्रकार उन्होंने मानवतावाद के आन्दोलन का समर्थन किया। उनके इस विचार के कारण बीमारी का भूत विद्या-सम्बन्धी प्रत्यय बड़े नाटकीय ढंग से समाप्त हुए। ?

क्रिश्चयन वुल्फ (Chirstian Wolff)1679.1754

वुल्फ जर्मन मनोवैज्ञानिक थे। वुल्फ वर्कले के समकालीन व्यक्ति थे। उनका विचार इन्द्रियानुभववाद की ओर था। उनकी पुस्तक का प्रकाशन 1734 में हुआ। वुल्फ ने तर्क बुद्धिवादी तथा इन्द्रियानुभववादी मनोविज्ञान में भेद किया। वुल्फ ने यह भी कहा था कि मानवीय प्राणी को समझने के लिए शरीर क्रिया विज्ञान के महत्व को जानना अत्यधिक आवश्यक है। शरीर-क्रियात्मक ज्ञान के बिना मानवीय प्रकृति को समझना कठिन है। यह बात कहकर वुल्फ ने उन उत्तरवर्ती दृष्टिकोणों के लिए मार्ग तैयार कर दिया। जिन्होंने तत्व-मीमांसा सामंजस्य का स्थान ग्रहण किया था। उन्होंने डेकार्टे के अध्यात्मकवाद तथा लैवनिज के चिदणुवाद के सम्बन्ध में विचार किया और कहा कि शरीर क्रिया-विज्ञान अन्तदर्शन का पूरक है।

जॉन इलियटसन (John Elliotson) 1791.1860

1837 में इलियटसन यूनिवर्सिटी कॉलेज लन्दन में चिकित्सा-शास्त्र के अध्यापक थे, उनकी ख्याति चिकित्सक के रूप में थी। उन्होंने मेस्मर के विचारों का अध्ययन किया। 1843 में इलियटसन ने ’’प्रमस्तिष्क शरीर क्रिया तथा संमोहन का जर्नल‘‘ प्रकाशित किया। उस जर्नल में नवीन जैव तथा समाजशास्त्रीय विचारों का विवेचन किया जाता था। इस जर्नल का नाम जोइस्ट (Zoist)था जो 1856 तक चलता रहा, इस जर्नल की निष्ठा मिस्मेरिज्म का विज्ञान एक महत्वपूर्ण एवं मूल्यवान शरीर क्रियात्मक सत्य है‘‘। इलियटसन सम्मोहन के चिकित्सीय मूल्य में रूचि रखते थे किन्तु ये रूचि इस बात में बदल गयी कि संमोहन का संवेदनाहारी महत्व क्या हो सकता है। चिकित्सीय व्यवसाय की यह इच्छा थी कि कोई ऐसा साधन निकल आये जिससे बिना पीड़ा के सर्जीकल ऑपरेशन हो सके। ऑपरेशन के लिए रोगियों को अचेत करना आवश्यक था। रोगियों को अचेत कर देने पर उनको पीड़ा का अनुभव नहीं होता था। इस प्रकार इलियटसन ने मेस्मेरिज्म अथवा प्राणाकर्षण का व्यवहार, अधिकतर रोगियों को अचेत करने के लिये किया।

जेम्स ब्रेड (James Braid)1795.1860

ब्रेड मैनचैस्टर के चिकित्सक तथा सर्जन थे। ब्रेड ने 1843 में एक तकनीकी पेपर निकाला जिसमें उन्होंने मेस्मेरिज्म की प्रक्रिया को संमोहन अथवा हिपनोरिज्म का सर्वप्रथम नाम दिया। मेस्मेरिज्म का सिद्धान्त था कि घटनाओं का कारण मेस्मेरिज्म करने वाले के अन्दर विद्यमान रहता था। यह दृष्टिकोण ब्रेड को सन्तुष्ट न कर सका । ब्रेड का विश्वास था कि घटना को शरीर क्रियात्मक होना चाहिए और उसको विषय के अन्दर होना चाहिये। बाद में ब्रेड यह विचार करने लगे कि संमोह की घटना को उत्पन्न करने के लिए संसूचन महत्वपूर्ण कारण था। इस प्रकार वे इस घटना का शरीर

क्रियात्मक कारण न मानकर मनोवैज्ञानिक कारण मानने लगे। वह यह भी जानते थे कि संमोह की अवस्था में चेतना का विभाजन हो जाता है क्योंकि उन्होंने देखा था कि स्मृतियाँ एक संमोह अवस्था से दूसरी संमोह अवस्था में बनी रहती थी, किन्तु विषय के सचेत होने पर उसे संमोह-अवस्था का कुछ स्मरण नहीं रहता था। वस्तुतः संमोह का वैज्ञानिक ’ज्ञान ब्रेड से आरम्भ होता है। ब्रेड का समय मनोविज्ञान के लिए विशेष महत्व रखता है। इसमें देखने को मिलता है कि मध्य उन्नीसवीं सदी के शरीर क्रियात्मक विचार ने मेस्मेरिज्म की समस्या को किस प्रकार साथ रखा। यह समस्या मनोवैज्ञानिक थी। यह नहीं कहा जा सकता है कि संमोह के विकास ने शरीर क्रिया-मनोविज्ञान के प्रारम्भ को सीधा सहयोग दिया, किन्तु यह अवश्य है कि यह विकास उस समय के विचार का लक्षण है जिससे शरीर क्रिया-मनोविज्ञान का आविर्भाव हुआ। बाद में सम्मोहन की विधि तथा तथ्य इस योग्य हो गये कि उनको मनोविज्ञान में आत्मसात् किया जा सकता था। यह आत्मसातकरण फ्रांस में विशेष दिखाई दिया।

एज्डेली (Esdaile) 1808.1859

एज्डेली भी चिकित्सक थे। उन्होंने 1845 में सर्जरी के दौरान संमोह को पीड़ा से छुटकारे के लिये काम में लाया। यह विधि ऐसे ऑपरेशन में उपयोग की गयी जो अत्यधिक कष्टकारक थी। यह संवेदनाहरण इतना सफल रहा कि रोगी का ऑपरेशन को कई घंटे तक यह पता न चला कि आपरेशन हुआ भी था। उन्नीसवीं सदी में बेन ने साहचर्यवाद को ऐसी पद्धति में बदल दिया जो आगे चलकर नवीन शरीर क्रिया-विज्ञान के लिए उपसंरचना बन गयी। और इसी सदी में साहचर्यवादी हरबर्ट हुए जिन्होंने सर्वप्रथम विकास के नवीन सिद्धान्त का सम्बन्ध मनोविज्ञान से जोड़ा । जेम्स मिल ने संवेदना तथा चेतना की प्राथमिक अवस्थाएँ माना। इस बात में उन्होंने हार्टले तथा ह्यूम का अनुसरण किया।

3.7 अलेक्जेन्डर बेन (Alexander Bain) 1807.1903

बेन को सही अर्थ में ब्रिटेन का सर्वप्रथम मनोविज्ञानी माना जाता है। अब तक जितने भी मनोविज्ञानियों का निरूपण किया गया है, उनका सम्बन्ध मुख्य रूप से दर्शन या चिकित्सा विज्ञान से रहा है। लेकिन बेन के विषय में यह बात सत्य नहीं है। बोरिंग ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि बेन वास्तविक रूप में विज्ञानी थे। उन्होंने गणित और मनोविज्ञान का अध्ययन किया जान स्टुअर्ट मिल से उनकी मित्रता हुई । 1851 में बेन ने मनोविज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ लिखना प्रारम्भ किया जिसका प्रथम खण्ड 1855 में प्रकाशित हुआ। जिसका नाम The senses and the intellect and The emotions and the will दोनों खण्डों के प्रकाशन से बेन की गणना वैज्ञानिकों में होने लगी। 1860 में बेन ने अपनी दो खण्ड की पुस्तक Mental and Moral science के नाम से प्रकाशित किया। 1872 में वेन ने दूसरी पुस्तक प्रकाशित की और उसका नाम Mind and Body था। बेन ने 1876 में Mind का प्रकाशन प्रारम्भ किया। यह पत्रिका संसार की सर्वप्रथम मनोवैज्ञानिक पत्रिका थी। इसमें समय-समय पर दार्शनिक लेख प्रकाशित होते थे।

इस पुस्तक में उन्होंने मन और शरीर पर प्रकाश डाला और कुछ नवीन वैज्ञानिक तथ्यों का समावेश किया। बेन ने यह भी प्रयत्न किया कि मन और शरीर के वैज्ञानिक तथा दार्शनिक आधारों का समन्वय हो। बेन ने ब्रिटिश मनोविज्ञान के विकास के लिये अत्यधिक परिश्रम किया। उसने मस्तिष्क, तंत्रिका तंत्र तथा संवेदांगों के अध्ययन को महत्वपूर्ण माना उन्होंने अपने दो ग्रन्थों में साहचर्यवाद को शरीर क्रिया-परिणामों पर आधारित माना है। वे अपने विज्ञान के लिए प्रायोगिक शरीर-क्रिया विज्ञान को आधारभूत मानते थे। उन्होंने मस्तिष्क, तंत्रिकातंत्र, संवेदांगों तथा पेशियों का बड़े विस्तार के साथ विवेचन किया। उन्होंने प्रतिवर्तचाप तथा मूल प्रवृत्तियों को व्यवहार के तत्व माना और मानवीय कार्यो को सांकल्य के रूप में अध्ययन किया जिनके भागों का प्रयोगशाला-विधि द्वारा अध्ययन किया जाता था। बेन से पहले डेकार्टे तथा हार्टले ने शरीर क्रिया-मनोविज्ञान के सम्बन्ध लिखा था किन्तु डेकार्ट प्राचीन हार्टले का शरीर क्रिया-विज्ञान परिकल्पनात्मक था। किन्तु उन्नीसवीं सदी में वैज्ञानिक शरीर-क्रिया-विज्ञान का विकास बड़ी तेजी से हुआ और इसके अन्तर्गत शरीर-क्रिया मनोविज्ञान का भी विकास हुआ। बेन के समय में यह स्पष्ट था कि मनोविज्ञान किस ओर जा रहा था। शरीर क्रियात्मक उपागम के कारण बेन ने संवेदनों पर बल दिया। उनका विवेचन अपने में पूर्ण था और उनका वर्गीकरण समय के अनुसार था। अरस्तू ने पाँच संवेदनों को माना था किन्तु बेन ने छठा संवेदन सम्मिलित कर दिया जिसका नाम था आंगिक संवेदन बेन ने इस आंगिक संवेदन को इस कारण महत्व दिया कि इसमें पेशीय सम्मिलित होती है जो उनके कार्य के सिद्धान्त के अन्तर्गत रहती है। जेम्स ब्रेड की मृत्यु 1860 के पश्चात् फ्रांस में उनकी खोजों पर विचार होने लगा। सम्मोहन के सम्बन्ध में दो सम्प्रदाय विकसित हुए। एक था पेरिस सम्प्रदाय जिसके नेता शार्को थे और दूसरा था नैंसी सम्प्रदाय। पेरिस सम्प्रदाय का दृष्टिकोण चिकित्सीय तथा शरीर क्रियात्मक था। उस सम्प्रदाय का विचार था कि संमोहन हिस्टीरिया का लक्षण होता है और उसको केवल उन्हीं व्यक्तियों में उत्पन्न किया जा सकता है जो हिस्टीरिया से पीड़ित होते हैं अथवा उस बीमारी की ओर उन्मुख होते हैं।

विलियम जेम्स (William James) 1842.1910

विलियम जेम्स ने जब जर्मनी के नवीन प्रयोगात्मक शारीरिक मनोविज्ञान को मान्यता दी तब अमेरीका में मनोविज्ञान का प्रारम्भ हुआ। विलियम जेम्स की प्रारम्भिक शिक्षा ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रंास आदि देशों में हुई। जेम्स का नाम प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के इतिहास में अत्यन्त विख्यात है। वे अमरीका में ''नवीन'' मनोविज्ञान के Pioneer थे और वे वहाँ के एक प्रमुख मनोविज्ञानवेत्ता थे। उनकी शरीर क्रिया-विज्ञान में हारवर्ड में नियुक्ति हुई और वे शरीर क्रिया-मनोविज्ञान में 1857 में लैक्चर देने लगे। विलियम जेम्स को अमरीका की सर्वप्रथम मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला स्थापित करने का भी श्रेय है। उनके विद्यार्थी शरीर क्रिया विज्ञान तथा मनोविज्ञान में सम्बन्ध जानने के लिए प्रयोग किया करते थे।

जेम्स ने 1890 में Principles of Psychology का प्रकाशन किया। जेम्स के सिद्धान्तों में महत्वपूर्ण सिद्धान्त संवेग के सम्बन्ध में है। उन्होंने लॉटजे के मत ''शारीरिक क्रियाओं के

फलस्वरूप संवेग का जन्म होता है‘‘ का खण्डन किया और कहा कि ’’हमारा धन नष्ट हो जाता है, इस कारण हम चीखने लगते हैं, फलतः हमको दुःख होता है। हम रीछ को देखते हैं और भागने लगते हें, इस कारण डर लगता है। तात्पर्य यह है कि संवेग शारीरिक अभिव्यक्तियों का परिणाम होता है। न कि कारण‘‘।

1885 में डेनमार्क निवासी शरीर क्रियाविद् लैंगे ने स्वतन्त्र रूप से कार्य करके ’भय‘ ’क्रोध‘ आदि संवेगों की शरीर क्रिया बताई और इस परिणाम पर पहुँचे कि संवेग पूर्णरूपेण शरीर क्रियात्मक परिवर्तनों पर आधारित रहते हैं। उनके दृष्टिकोण से उन्नीसवी सदी में मानसजन्य और शरीर-जन्य संवेगों का जो भेद चल रहा था, वह निरर्थक था। वास्तविकता यह है कि ऐसे संवेगों को जानना कठिन था। अतः जेम्स तथा लैंगे के अनुसंधानों को James Lange Theory का नाम दिया गया।, जेम्स का स्मृति का सिद्धान्त इतिहास की दृष्टि से बड़ा महत्वपूर्ण है। उन्होंने कहा कि धारण-क्षमता मस्तिष्क संरचना का एक तत्व होती है। जो हर एक व्यकित में भिन्न -भिन्न होती है।

अरन्स्ट हैनरिक वैबर गस्टैव थियोन्डॉर फैशनर, हरमन वॉन हेमहोल्ज तथा विलहैम वुण्ट ये सब जर्मनी के निवासी थे और उन्नीसवीं सदी के मध्य भाग में जो योरोपीय शरीर क्रिया-विज्ञान में प्रभावशाली परिवर्तन हो रहे थे, उनको भली प्रकार जानते थे। इनको इस विषय का प्रशिक्षण मिल चुका था। इन सब की शरीर क्रिया विज्ञान में रूचि होने के अतिरिक्त, प्रत्येक की मनोविज्ञान विकास में कुछ न कुछ अनुपम देन थी।

सुल्ज ने कहा है कि नवीन मनोविज्ञान के उत्पन्न होने के लिए जर्मनी उपयुक्त स्थान था और समय भी उसके अनुकुल था। एक सदी तक,जर्मन बौद्धिक इतिहास ने मनोविज्ञान के प्रयोगात्मक विज्ञान के लिये मार्ग प्रशस्त कर दिया था। जर्मनी में प्रयोगात्मक शरीर क्रिया विज्ञान पूर्ण रूप से स्थापित हो गया और उसे कोटि की मान्यता मिली। जो फ्रांस तथा इंग्लैंड में नहीं मिल सकी।

जैव तथा शरीर-क्रिया-विज्ञान अपने आप ऐसे महत्वपूर्ण सामान्यीकरण नहीं कर सकते जिससे तथ्यों का अनुमान लगाया जा सके। इसलिए फ्रंास तथा इंग्लैंड जीव-विज्ञान को वैज्ञानिक विषयों में स्थान देने के लिए राजी नहीं हो रहे थे। किन्तु जर्मनी के विद्वान आकारिकीय विवरण में अपनी रूचि दिखा रहे थे। फलतः उन्होंने जीव-विज्ञान को विज्ञानों के समूह में स्थान देना स्वीकार कर लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि जर्मनी में जीव-विज्ञान तथा शरीर क्रिया-विज्ञान की पर्याप्त उन्नति हुई। हैरिंग तथा लॉटजे का उन्नीसवी सदी के तृतीय चतुर्थाशं में शरीर -क्रिया मनोविज्ञान के स्थापित करने में काफी योगदान था।

3.8 अरन्स्ट वैबर (Ernst Weber) 1795.1878

वैबर जर्मनी में स्थित विटैनबर्ग में पैदा हुए थे। उनके पिता धर्मशास्त्र के प्रोफेसर थे। उन्होंने 1815 में डाक्टर की उपाधि लिपजिंग में प्राप्त की तथा 1817 से 1871 तक शरीर क्रिया-विज्ञान एवं शरीर-रचना-विज्ञान को पढ़ाया। 1871 में उन्होंने अवकाश ग्रहण किया।

उन्होंने संवेदांगों की शरीर-क्रिया के अनुसन्धान में प्रमुख रूचि दिखाई। उन्होंने स्पर्श तथा सामान्य संवेदना में स्पष्ट भेद किया। प्रकृति के दर्शन के अन्तर्गत उन्होंने कहा कि स्पर्श-संवेदना में दबाव, ताप तथा स्थान-सीमन की संवेदनाएँ सम्मिलित हैं। उनकी दृष्टि से ये संवेदनाएँ स्पर्श के ही अंग थे। दबाव और ताप को उन्होंने बताया कि ये स्पर्श-संवेदना के प्रकार हैं। स्थान-सीमन की संवेदना को उन्होंने गौण माना और कहा कि इस संवेदन की जाग्रति अन्य संवेदनाओं पर आश्रित है। उन्होने यह भी कहा कि ताप-संवेदना की ऊष्णता और शीतलता भावात्मक और नकारात्मक संवेदनाएँ हैं, उसी प्रकार जैसे कि दृष्टि के क्षेत्र में प्रकाश और अन्धकार हैं।

वैबर ने 'दो बिन्दु सीमा की स्थापना की । प्रयोज्य की त्वचा उद्दीप्त कर दी जाती थी, कभी परकार की एक नोंक से और कभी दोनों से। किन्तु उन दोनों नोकों के बीच दूरी भिन्न-भिन्न रखी जाती थी। जब दोनों नोंकों से प्रयोज्य की त्वचा को उद्दीप्त किया जाता था और उन दोनों नोकों के बीच की दूरी क्रमिक रूप से बढ़ाई जाती थी तब प्रयोज्य प्रथम एक नोंक का अनुभव करता था और जैसे ही उन नोंको की दूरी बढ़ती जाती थी, वह संशय में पड़ जाता था कि परकार की नोंक एक है या दो हैं और अन्त में वह स्पष्ट रूप से यह कहने लगता था कि उसे परकार की दोनों नोंकें प्रतीत हो रही है। तात्पर्य यह है कि विषय को दो बिन्दुओं के अनुभव होने से पूर्व एक विशेष सीमान्त पार करना होता था।

वैबर ने यह भी ज्ञात किया दो-बिन्दु सीमा एक व्यक्ति के शरीर के विभिन्न भागों में एक-सी नहीं होती। कहीं कम होती हैं और कहीं ज्यादा, अर्थात अंगुलियों के पोरों तथा जिह्वा के अग्र भाग पर वह सबसे कम होती है, होंठों पर कुछ अधिक होती है, कलाई और हथेलियों की और अधिक होती है तथा पीठ पर सबसे अधिक होती है।

वैबर ने पेषीय संवेदन का भी परीक्षण किया। उन्होंने उसकी खोज की , और इस खोज के लिए उनका नाम विख्यात हैं। उन्होंने यह जानने का प्रयत्न किया कि विभिन्न वजन के भारों का विभेद करने में पेशीय संवेदना किस सीमा तक कार्य करती हैं। यह तथ्य वैबर का नियम बन गया तथा फैशनर ने इसको विकसित किया। वैबर ने अपने परिणाम 1834 में श्क्मजंबजनश् में प्रकाशित किए और इस कार्य को उन्होंने और अधिक विस्तृत रूप दिया।

उनकी रूचि दैहिक प्रयोगों में थी, जिसके फलस्वरूप अनेक दैहिक विद्वानों का ध्यान प्रयोगशाला में जाकर कार्य करने में लग गया। यदि वैबर न होते तो अनेक मनोवैज्ञानिक समस्याएँ सरल न हो पाती। उन्होंने अन्य लोगों को ही कार्य करने के लिए प्रेरित न किया, अपितु उन्होंने अनेक समस्याएँ स्वयं हल कीं। उनकी खोज ने अनेक विद्वानों को प्रोत्साहित किया और उनको आगे कार्य करने की प्रेरणा दी। वेबर का महत्त्व यह है कि उन्होंने मनोवैज्ञानिक समस्याओं को प्रयोगात्मक रूप दिया।

वैबर जर्मनी के निवासी थे, अतः वे उन्नीसवीं सदी के मध्य में जो योरोप की शरीर-क्रिया में विकास हो रहा था, उससे परिचित थे। उन्होंने अपने शिक्षा-काल में शरीर-क्रिया में प्रशिक्षण प्राप्त

किया; किन्तु साथ ही साथ मनोविज्ञान में भी बड़ी रूचि दिखाई। उसकी इस क्षेत्र में अद्वितीय देन है। नवीन विज्ञान में उनकी दो प्रमुख देनें हैं। पहली यह है कि उन्होंने मनोवैज्ञानिक समस्याओं के अनुसन्धान में शरीर-क्रिया की प्रयोगात्मक विधियों को आगे बढ़ाया। ऐसा उन्होंने स्पर्श संवेदना के अनुसन्धान के सम्बन्ध में किया। इस सम्बन्ध में किए गए प्रयोगों ने मनोविज्ञान के स्तर को ऊँचा उठा दिया, क्योंकि मनोवैज्ञानिक समस्याओं का निर्णय करने के लिए दार्शनिक मताग्रहों का आश्रय नहीं लिया जाता था। इस प्रकार वैबर ने मनोविज्ञान को प्राकृतिक विज्ञानों का समवर्णी कर दिया था। मानव-व्यवहार के प्रयोगात्मक अनुसन्धान के लिए मार्ग उज्जवल कर दिया था। उनकी दूसरी देन वह खोज है जिसके कारण मनोविज्ञान में पहली बार वास्तविक मात्रात्मक नियम सम्भव हुआ तथा अप्रत्यक्ष रूप से मनोदैहिक विधियों का विकास हुआ।

गस्टैव थियोडॉर फ्रेशनर (Gustav Theodor Fechner)1801.1887

फैशनर एक अत्यन्त प्रखर बुद्धि के विद्वान थे। वे लिपिजिंग विश्वविद्यालय में भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर थे। उनका नाम मनोभौतिकी के क्षेत्र में विख्यात है। उन्होंने विचार किया कि मन का शारीरिक प्रक्रियाओं से क्या सम्बन्ध है और इस दिशा में प्रयत्न करने लगे कि इन दोनों में किसी निश्चित सम्बन्ध की सम्भावना हो सकती है या नहीं।

उनके जीवन में एक ऐसा समय आया, जब उन्होंने यह खोज कर ली कि दैनिक जीवन में मन और शरीर के अन्दर एक प्रकार का मात्रात्मक ;फनंदजपजलद्ध सम्बन्ध है, अर्थात् संवेदना की तीव्रता उददीपक के अनुरूप ही नहीं बढ़ती, अपितु उन दोनों में एक भिन्न प्रकार का सम्बन्ध होता है। तात्पर्य यह है कि संवेदना की तीव्रता गणित सोपान में बढ़ती है, यदि उद्दीपक ज्यामिति सोपान में बढ़ाया जाय। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि भेदीय सीमा और प्रमाप उद्दीपक में सतत् सम्बन्ध होता है और साथ ही जब उद्दीपक के मूल्य में सतत् अनुपात में वृद्धि होती है तो उससे उत्पन्न संवेदना की भी समान मात्रा में वृद्धि होगी। उद्दीपकों के जो प्रभाव होते हैं, वे निरपेक्ष नहीं होते, अपितु सापेक्ष ; होते हैं और वह सापेक्षतः पूर्व स्थित संवेदना की मात्रा के साथ सम्बद्ध रहती है उनका सूत्र अग्रांकित है।

$$S=C \text{ Log } R$$

इस सूत्र में S से तात्पर्य संवेदना की तीव्रता से है, R से तात्पर्य उद्दीपक की तीव्रता से है। C का अर्थ स्थिर है जिसका निर्धारण प्रयोग द्वारा होता है।

फैशनर ने दो नियमों की बात की, जिसके फलस्वरूप वे वैबर के नियम को विस्तार दे सके। फैशनर ने मापन की नवीन विधियों को विकसित किया और स्थापित किया। उनमें से तीन नियम बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। वे निम्नांकित हैं।

1. JND की विधि
2. स्थिर विधि

3. मध्यमान त्रुटि विधि

उन्होंने वैबर के प्रयोग को विस्तार दिया और इन दोनों (वैबर तथा फैशनर) के कारण प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का जन्म हुआ। यह स्मरणीय है कि मनोविज्ञान के लिए फैश्नर की देन कुछ कम महत्त्वपूर्ण न थी। वह इस प्रकार है-

उन्होंने वैबर के नियम को सुस्पष्ट किया।

उन्होंने सीमा के प्रत्यय को विस्तृत किया।

उन्होंने तीन स्वतन्त्र मनोभौतिक विधियों का आविष्कार किया, जो आधुनिक काल में भी संवेदी प्रक्रियाओं के अध्ययन में उपयोग की जाती है।

जौनीज म्यूलर (Joannes Muller)1801.1858

म्यूलर को नवीन प्रयोगात्मक शरीर क्रिया- विज्ञान का जनक माना जाता है। उनका जन्म जर्मनी कॉबलेंज में हुआ था। अपनी मेडीकल डिग्री लेने के बाद बौन विश्वविद्यालय में उन्होंने 1824 से 1833 तक अध्यापक कार्य किया। इसके बाद वे 1833 में बर्लिन विश्वविालय में शरीर-रचना विज्ञान तथा शरीरक्रिया विज्ञान के प्रोफेसर नियुक्ति हुए।

उसी वर्ष उन्होंने Hand book of Physiology लिखना प्रारम्भ किया और उसमें उन्होंने चिकित्सीय तथा शरीर क्रिया-अनुसंधान में प्रयोगात्मक विधि के उपयोग का समर्थन किया। इस पुस्तक का अन्तिम बौल्यूम (Volume) 1840 में प्रकाशित हुई । म्यूलर केवल अच्छे व्यवस्थापक तथा सच्चे अनुसंधानकर्ता ही न थे, अपितु उत्कृष्ट अध्यापक भी थे। उनके शिष्यों में से अनेक शिष्य जीवविज्ञान तथा मनोविज्ञान में प्रसिद्ध हुए, जैसे डुबॉय रेमण्ड, हेमहोल्जे तथा वुण्ट।

उनकी रूचि संवेदांगों की दैहिकी में थी। उन्होंने आँख की बाहरी पेशियों पर प्रयोग किए; जिसके कारण उनका नाम और अधिक प्रख्यात हुआ। उन्होंने दिक्-प्रत्यक्ष (Space Perception)पर भी कार्य किया है। इसकी प्रेरणा उन्हें जर्मनी के प्रोफेसर कांट से मिली थी। उन्होंने कहा कि हमें दिक् को देखने की सामान्य योग्यता प्राप्त है, किन्तु स्थान, आकार तथा दूरी का निर्णय देने की विशिष्ट क्षमता प्राप्त नहीं है। उनका द्विनेत्री दृष्टि तथा वित्यासिका में पाये जाने वाले तन्त्रिका मार्गों का अध्ययन बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

उनका दूसरा अध्ययन प्रतिवर्त-क्रिया के सम्बन्ध में है। उन्होंने प्रतिवर्त क्रिया का प्रयोगात्मक अध्ययन किया था । इसकी प्रेरणा उन्हें आंशिक रूप में डेकार्टे से तथा आंशिक रूप में बैल के मेरूरज्जू मूलों के कार्यों के अध्ययन से मिली थी। शरीर-रचना-विज्ञान-विश्लेषण की पुष्टि के लिए इस सिद्धान्त के प्रयोगात्मक सत्यापन की आवश्यकता थी। यह म्यूलर ही थे, जिन्होंने मेंढ़कों पर प्रयोग करके आवश्यक प्रदत्तों को प्राप्त किया। उन्होंने दिखाया कि प्रतिवर्त क्रिया में तीन सोपान होते हैं

(1) पृष्ठ-मूल द्वारा आवेग का संवेदांग से तन्त्रिका केन्द्र को जाना,

(2) मेरूरज्जु में जुड़ना,

(3) उदरीय मूल के द्वारा आवेग का पेशी को जाना।

उनकी महत्त्वपूर्ण देन यह है कि उन्होंने विषिष्ट तन्त्रिका ऊर्जा के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

म्यूलर का दृष्टिकोण बड़ा महत्त्वपूर्ण था। उनका विचार था कि अनुभव के गुण केवल संवेदांगों द्वारा प्राप्त नहीं किये जाते, किन्तु तंत्रिकातंत्र के विशिष्ट अवयवों की घटक भी सहायता देते है। हमें दृष्टि-अनुभव इस कारण होता है कि हमारे मस्तिष्क होते हैं, जिनमें विशिष्ट ऊतक होते हैं जो उस विशिष्ट प्रकार के अनुभव को पैदा करते हैं। यह दृष्टिकोण लाभप्रद हुआ, जिसके फलस्वरूप ऐसा दैहिक मनोविज्ञान उत्पन्न हुआ, जिसमें मन तथा शरीर घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हो गये। डेकार्ट के द्वैतवाद का निरसन हो गया। सारांश यह है कि जौनीज म्यूलर ने दैहिकी के क्षेत्र में प्रयोगात्मक विधि का समर्थन किया। उनकी मुख्य देन हैं, जिनका विस्मरण करना असम्भव है। उन्होंने हैण्ड बुक ऑफ फिलोसोफी नामक पुस्तक लिखी जिसके 1833-1840 तक कई भाग प्रकाशित हुए। इस पुस्तक में उस समय जो शरीर-क्रियात्मक अनुसन्धान हुए थे, उनका सारांश है।

3.9 हर्मन वान हेमहोल्ज

हेमहोल्ज (1821-1894) को उन्नीसवीं सदी के विज्ञानियों में एक महान् विज्ञानी माना जाता है। वे भौतिकी तथा शरीर क्रिया-विज्ञान में अनुसन्धानकर्त्ता थे। फैशनर तथा वुण्ट के साथ वे नवीन मनोविज्ञान के प्रवर्त्तक हो गये थे। हेमहोल्ज जर्मनी के पॉट्स्डैम में पैदा हुए थे। जब वे सत्तरह वर्ष की आयु के थे तब बर्लिन चिकित्सीय संस्थान में प्रवेश लिया। हेमहोल्ज ने कॉनिग्सबर्त में शरीर-क्रिया-विज्ञान के सहायक प्रोफेसर पद पर रहे। उन्होंने बॉन एवं हीडिलबर्ग मे शरीर-क्रिया-विज्ञान में अध्यापन कार्य किया और बर्लिन में भौतिकी का अध्यापन कार्य किया।

हेमहोल्ज ने तंत्रिका-आवेग का मापन अपने हाथ में लिया जिसको म्यूलर ने असम्भव कार्य कहकर छोड़ दिया था। उन्होंने म्यूलर के विशिष्ट तंत्रिका-ऊर्जा के सिद्धान्त को विकसित किया। उन्होंने; यंग के सिद्धान्त का भी विकास किया और तीन तन्तुओं के स्थान पर तीन प्रकार के शंकुओं का नाम लेना प्रारम्भ कर दिया। अब उस सिद्धान्त को युंग-हेमहोज्ज के फंग-दृष्टि-सिद्धान्त के नाम से पुकार जाता है। यह सिद्धान्त दृष्टि के क्षेत्र में बड़ा प्रसिद्ध है। उन्होंने इस सिद्धान्त को निम्नांकित रीति से कहा और उस कथन में युंग की सराहना की । आँख में तीन प्रकार के स्पष्ट तंत्रिका-तन्तु होते हैं। पहले प्रकार के तन्तुओं का उद्दीपन लाल रंग की संवेदना उत्पन्न करता है, दूसरे प्रकार के तन्तुओं का उद्दीपन हरे रंग की संवेदना देता है और तीसरे प्रकार के तन्तुओं का उद्दीपन बैगनी की संवेदना देता है यहाँ यह स्पष्ट है कि हेमहोल्ज यह जानते थे कि वे म्यूलर के सिद्धान्त को विस्तृत कर रहे थे।

हेमहोल्ज का श्रवण प्रतिस्वन सिद्धान्त 1863 में प्रकाश में आया। इस सिद्धान्त को प्रायः ’हेमहोल्ज सिद्धान्त‘ कहा जाता है, क्योंकि इसके जन्मदाता वे ही माने जाते हैं। हेमहोल्ज ने आधार कला की तुलना पियानो से की और उसी को ध्यान में रखते हुए प्रतिस्वन सिद्धान्त की स्थापना की। इस सिद्धान्त के अनुसार बैसिलर मेम्ब्रेन के अन्दर प्रत्येक तन्तु ध्वनि-तरंग के द्वारा सहानुभूति के रूप में उद्दीप्त हो जाता है। अतः प्रत्येक में अपनी स्वयं की विशिष्ट ऊर्जा होती है, हेमहोल्ज ने मानव प्रयोज्य के संवेदांग को उद्दीप्त करके गति-अनुक्रिया का अध्ययन किया। उद्दीपन के स्थान को परिवर्तित करके उन्होंने प्रतिक्रिया- समय का परिवर्तन जानना चाहा, क्योंकि वे यह समझते थे कि यह प्रक्रिया संवेदी-तन्त्रिकाओं के संचालन की गति पर प्रकाश डालेगी। ये प्रारम्भिक ’प्रतिक्रिया-समय के प्रयोग थे। हेमहोल्ज ने प्रत्यक्ष के सिद्धान्त का भी प्रतिपादन किया। प्रत्यक्ष के अन्दर संवेदना तथा प्रतिमावली निहित होते हैं और साथ ही उसमें उद्दीपन तथा अचेतनात्मक अनुमान पाये जाते हैं। अन्त में यही कहना है कि शरीर क्रियाविद् हेमहोल्ज भौतिकविद हो गए। उन्होंने नवीन वैज्ञानिक मनोविज्ञान के सम्बन्ध में अनेक महत्त्वपूर्ण बातें कहीं हैं।

रॅाडौल्फ हरमन लॉथ्जे Redolf Hermann Latze 1817.1881

लॉथ्जे जर्मनी के बॉटजैन में पैदा हुए थे। जब वे सत्तरह वर्ष (1834) के थे तब वे लिपजिंग विश्वविद्यालय गये और चिकित्सा में मैट्रीकुलेशन किया। उनकी जितनी रूचि कला तथा दर्शन में थी उतनी विज्ञान तथा चिकित्सा कार्य में न थी। वे दर्शन में तथा हीगल के दर्शन से प्रभावित थे। जहाँ तक विज्ञान का सम्बन्ध था, वे वैबर, वॉकमेन तथा फैशनर के साथ थे। वे वॉकमैन तथा फैश्नर के सम्पर्क में आये और उनसे काफी प्रभावित थे। लॉथ्जे चार वर्ष लिपजिंग रहे और तब उन्होंने चिकित्सा में डिग्री प्राप्त की। 1844 में गॉटिजैन विश्वविद्यालय में दर्शन के प्रोफेसर नियुक्त हुए उस समय उनकी आयु केवल सत्ताईस वर्ष की थी। उक्त विश्वविद्यालय में उन्होंने सैंतीस वर्ष कार्य किया। मनोविज्ञान के इतिहास में उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त अन्य कारणों से भी लॉथ्जे का नाम लिया जाता हैं वे ये है (1) उन्होंने 1852 में Medical Psychology नामक पुस्तक लिखी, जो हरबार्ट की पुस्तक के समान ही एक उत्तम पुस्तक थी; (2) उनका नाम दिक् सिद्धान्त क साथ सम्बद्ध है; (3) गौटिनबर्ग में उनकी रूचि नवीन चिकित्सा-मनोविज्ञान में थी और वे ऐसे ही प्रमुख व्यक्ति थे, जैसे कि अमरीका में मनोविज्ञान के विलियम जेम्स।

लॉथ्जे अपने समय के दैहिकी, तन्त्रिकाविज्ञान तथा विकृतिविज्ञान के विशेषज्ञ समझे जाते थे। उन्होंने दर्शन को भी आगे बढ़ाया जिसका वुंट पर बहुत प्रभाव पड़ा। वे कहा करते थे कि उन मानसिक प्रक्रियाओं को जानना निरर्थक है, जिनका सम्बन्ध शारीरिक प्रक्रियाओं से न हो। उनकी दृष्टि से मनोविज्ञान का सम्बन्ध प्राणी से अवश्य होना चाहिए। तन्त्रिकातन्त्र तथा मन दोनों में परस्पर सम्बन्ध होना चाहिए। लॉथ्जे का कहना था कि यांत्रिक नियमों के ज्ञान से जीवन का प्रयोजन, हमारे आस-पास की वस्तुओं का महत्त्व, हमारे दुःख-सुख की यथार्थता एवं हमारी

आशा और आकांक्षा का तत्त्व प्रभावित नहीं हो सकते। समस्या को सुलझाने में मनोविज्ञानियों को इससे बड़ी सहायता मिली।

इसके अतिरिक्त लॉथ्जे की दो विशिष्ट देनें है (1) उन्होंने संवेगों के मनोविज्ञान का अध्ययन किया तथा वे पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने संवेगात्मक कार्यों का सूक्ष्म वर्णन किया; और (2) विभिन्न संवेगात्मक अवस्थाओं में मुँह, आंगिक क्रियाएँ, नाड़ी एवं श्वास आदि कैसा व्यवहार करने लगते हें, इसका अध्ययन किया। संवेगों तथा शारीरिक परिवर्तनों के सम्बन्ध में उत्तरवर्ती काल में जो कार्य हुआ (उदाहरण के लिए, जेम्स-लैंगे का सिद्धान्त) उस पर लॉथ्जे का यथेष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है। साथ ही संवेग के प्रयोगात्मक अध्ययनों को भी प्रोत्साहन मिला।

किन्तु लॉथ्जे का नाम स्थानीय चिन्ह के सिद्धान्त के लिए मुख्यतः प्रसिद्ध है। यह सिद्धान्त बताता है कि संवेदना की विलक्षणता हमें उस स्थान का भान कराती है, जिस स्थान पर उद्दीपक दिया जाता है। लॉथ्जे ने सबसे पहले इसे खोज निकाला था । हमारी आँखें चाहे बन्द रहें, फिर भी हम उस स्थान को जानते हैं, जहाँ हमारी त्वचा स्पर्श की जाती है। इसी प्रकार हम अपने शरीर में उस स्थान को भी जान जाते हैं, जहाँ दर्द होता है। यह स्थानीय चिन्ह त्वचा पर विशेष रूप से पाया जाता है हाँ, यह अवश्य हो सकता है कि त्वचा के विभिन्न स्थानों पर स्थानीय विभेद बदल सकता है। लॉथ्जे के अनुसार प्रत्येक स्पर्श-संवेदना चिह्न होता है जो नवीन गुण नहीं होता, बल्कि तीव्रताओं का विशिष्ट योग होताहै। प्रश्न यह हो सकता कि हमें यह पता कैसे लग जाता है कि त्वचा का कौन सा भाग उद्दीप्त किया गया है। इसका उत्तर यह है कि त्वचा के प्रत्येक भाग में एक अनुभूति होती है, जो हर एक स्थान पर भिन्न होती है और यह स्थानीय चिह्न त्वचा को उसका भान करने योग्य बना देता है।

विलहैम वुंट Wilhelm Wundt 1832.1920

वुंट का जन्म जर्मनी के अन्दर वेडन में हुआ। वे बचपन में एकान्तप्रिय और कल्पनाशील थे। उन्होंने अपनी युवावस्था में एक वर्ष ट्यू विनजेन विश्वविद्यालय में अध्ययन किया और इसके बाद वे हैडिलबर्ग में प्रविष्ट हुए। यद्यपि उन्होंने चिकित्सा में उपाधि प्राप्त की थी फिर भी वे प्रारम्भिक स्नातकोत्तर अनुसन्धान में शरीर-क्रिया-विज्ञान की ओर प्रवृत्त हुए। सत्तरह वर्ष वे हिलबर्ग में रहे और वहीं रह कर उनकी रूचि शरीर-क्रिया विज्ञान से हटकर मनोविज्ञान में हो गई।

1874 में उनकी ज्यूरिक में नियुक्ति हो गई और इसके बाद वे लिपजिंग चले गए, जहाँ वे 46 वर्ष रहे। वहाँ रहकर उन्होंने मनोविज्ञान की प्रथम प्रयोगशाला की स्थापना की, लेख लिखे और अनेक प्रयोग किए। इस प्रकार उन्होंने अपने व्यवस्थित मनोविज्ञान का विकास किया। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य भाग का मनोविज्ञान बहुत कुछ प्रयोगात्मक शरीर-क्रिया विज्ञान में सम्मिलित कर लिया गया था। उसके अन्दर अनेक मनोवैज्ञानिक समस्याऐं सम्मिलित थी, जैसे श्रवण तथा दृष्टि की समस्याऐं, वैबर फैशनर के कार्य में संवेदना -तीव्रताओं की तुलना की समस्या और साथ ही प्रतिक्रिया समय के अध्ययनों की समस्याऐं। इस प्रकार के सम्पूर्ण अनुसंधान शरीर क्रिया

प्रयोगशालाओं में किए जाते थे, किन्तु ऐसी प्रथा चल पड़ी थी कि उनको मनोवैज्ञानिक रंग दे दिया जाता था। दूसरी ओर डार्विन का विकासवाद चल पड़ा था।

विकासवाद के सिद्धान्त के फलस्वरूप गैल्टन के द्वारा साहचर्य तथा प्रतिमावली पर अनुसंधान किए जा रहे थे और साथ ही विकासवाद ने संज्ञानात्मक भावात्मक तथा संकल्पनात्मक प्रक्रियाओं को भी प्रोत्साहन दिया था। उक्त विभिन्न प्रकार की प्रवृत्तियाँ वुंट के कार्य में संश्लिष्ट हो गई थी। वुंट की पुस्तक Principles of Physiological Psychology का प्रथम अर्द्ध भाग 1873 में तथा दूसरा भाग 1874 में प्रकाशित हुआ। उस समय वे हैडिलबर्ग में थे। वुंट की दृष्टि में ''शरीर क्रिया मनोविज्ञान'' से तात्पर्य उस मनोविज्ञान से था, जिसका अनुसंधान शरीर क्रियात्मक विधियों से किया जाय। उनके लिए अन्तर्दर्शन-विधि एक प्रमुख साधन थी। फैश्नर तथा हेमहोल्ज के प्रयोग में अन्तर्दर्शन-विधि एक प्रमुख साधन थी। यद्यपि फैश्नर तथा हेमहोल्ज अपने प्रयोग में अर्न्तदर्शन का उपयोग करते थे, किन्तु वुंट की तरह नहीं। उनके लिए अन्तर्दर्शन- विधि का उपयोग बहुत आवश्यक था। वुंट ने कहा हैः All Psychology begins with introspection and the keystone of all the adjustment of the organism was a psychological process and organic response approachable through both physiology and psychology इस प्रकार वुण्ट ने अन्तर्दर्शन को विधि के रूप में और मनोभौतिकी को क्रियाविधि के रूप में प्रयोग किया। अब प्रश्न था मनोवैज्ञानिक तथ्यों तथा शरीर क्रियात्मक तथ्यों के सम्बन्ध का। शरीर क्रियात्मक मनोविज्ञान-विज्ञान का प्रयोजन उन उत्त्जनाओं से था जो संवेदांगों को उद्दीप्त करके संवेदी न्यूरॉन द्वारा केन्द्रीय तंत्रिकातंत्र में स्थित निम्नतर तथा उच्चतर केन्द्रों को जाती है और वहाँ से पेशियों को। किन्तु उच्चतर केन्द्रों की शरीर क्रियात्मक क्रियाओं के समानान्तर मानसिक घटनाएँ भी होती थी जिनका भान अन्तर्दर्शन द्वारा किया जा सकता था। अतः हमें शरीर-क्रिया-विज्ञान तथा मनोविज्ञान दोनों को अध्ययन विषय बनाना चाहिए। शरीर-क्रिया मनोविज्ञान सदैव आनुभविक विज्ञान था। यह उन्नीसवीं शताब्दी से ली हुई विधियों के साथ बहुत दिनों में स्थापित अन्तर्दर्शन विधियों का मिश्रण था।

अपने शरीर-क्रिया-दृष्टिकोण के अनुरूप उन्होंने जन्मजात यांत्रिकताओं जैसे प्रतिवर्त तथा मूल प्रवृत्ति की सत्ता को स्वीकार किया। जहाँ तक चेतना का सम्बन्ध था, उन्होंने यह माना कि प्रमस्तिष्क वल्कुट की उत्तेजना तथा उसके अनुसार संवेदी अनुभव के रूप में समानता होती है। वुंट द्वैतवादी थे और इस रूप में वे मनोदैहिक समान्तरवादी थे। उन्होंने अन्योन्यक्रिया के सिद्धान्त को रद्द किया, क्योंकि प्राकृतिक विज्ञान कार्य-कारण में व्यवस्थित है, जो मन को प्रभावित नहीं करता और न उससे प्रभावित होता है।

उन्होंने अपने शरीरक्रिया-मनोविज्ञान के चतुर्थ संस्करण (1893) में भावना का त्रिमितीय सिद्धान्त का वर्णन किया है , जिससे तात्पर्य यह है कि भावनाओं को तीन भागों में बाँटा जा सकता है, जैसे सुख-दुःख खिंचाव-विश्रान्ति, तथा उत्तेजना-प्रशान्त । यह सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण था। ?

वुंट के सम्बन्ध में यह कहना भी आवश्यक है कि मन को तत्त्वो में विभक्त किया जा सकता है और ये तत्त्व नियमित रूप से सम्बद्ध रहते हैं- यह स्पष्टतः इन्द्रियानुभविक साहचर्यात्मक परम्परा की अनुवंशिक देन है। द्वितीय, मानसिक घटना को समझने के लिए उन्होंने जो प्रयोगात्मक अवलोकन तथा विश्लेषण किए , वे उस प्रवृत्ति के चरम बिन्दु हैं जो मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में भौतिक तथा शरीर क्रियात्मक विधियों को प्रयोग में लाती है। उन्होंने मनोविज्ञान में अन्तर्दर्शन की विधि को स्थान दिया, जिसके कारण उनको ऐसे मनोविज्ञानियों की श्रेणी रखा जा सकता है जो मानव-प्रकृत्ति का अध्ययन करने के लिए विषयनिष्ठ तथा वैज्ञानिक प्रविधियों का समर्थन करते हैं। फलतः वुंट अन्तर्दर्शन के द्वारा संम्प्रदाय के अग्रगण्य नेता हो गए, जिसका सामान्य प्रयोजन अन्तर्दर्शन के द्वारा मानसिक विश्लेषण करना था, जिसका अन्तिम उद्देश्य मन के नियमों का अनुसंधान करना था।

आई0 पी0 पैवलोव (I.P.Pavlov) 1849.1936

पैवलोव का जन्म केन्द्रीय रूस के एक देहाती नगर में हुआ था। 1870 में सेंट पीटर्सबर्ग-विश्वविधालय गये, जहाँ उन्होंने पशु-शरीर क्रिया में विशेषज्ञता प्राप्त की। जब वे 1890 में 41 वर्ष की आयु के हो गये, तब वे सेंट पीटर्सबर्ग की सैन्य चिकित्सीय अकादमी में औषध विज्ञान के प्रोफेसर नियुक्त हो गये । पाँच वर्ष बाद, 1895 में उनकी नियुक्ति शरीर क्रिया विज्ञान के प्रोफेसर के रूप में कर दी गयी। पैवलोव ने अपने विख्यात एवं उत्पादक कार्यकाल में केवल तीन समस्याओं को लकर अनुसन्धान कियाः प्रथम समस्या का सम्बन्ध हृदय की तंत्रिकाओं के कार्य से था, दूसरी समस्या का सम्बन्ध प्राथमिक पाचक गन्थियों से था, तथा तीसरी समस्या यह थी कि मस्तिष्क में उच्चतर तन्त्रिकीय केन्द्रों का क्या कार्य होता है। पाचन पर उनका अनुसंधान प्रतिभाशाली साबित हुआ जिसके फलस्वरूप उन्हें जगत् में मान्यता मिली और साथ ही उन्हें 1904 में नोबल पुरस्कार प्रदान किया। इस समस्या को हाथ में लेते समय उन्होंने अनुबन्धन का उपयोग किया। उनकी यह बहुत बड़ी उपलब्धि थी। क्लासिकी अनुबन्धक मनोविज्ञान में काफी प्रचलित है।

अनुबन्धित अनुक्रियाओं के निर्माण के अध्ययन के अतिरिक्त पैवलोव तथा उनके सहयोगियों ने कई सुप्रसिद्ध घटनाओं की खोज की थीः (1) पुनर्बलन (2) विलोप (3) सामान्यीकरण (4) स्वतः पुनः प्राप्ति (5) भेद-बोध तथा (6) उच्चकोटि-अनुबन्धन।

पैवलोव ने प्रयोग द्वारा प्रमाणित किया कि पशु-प्रयोज्यों के उपयोग द्वारा शरीरक्रियाविज्ञान के माध्यम से उच्च्तर मानसिक प्रक्रमों का सफलतापूर्वक अध्ययन किया जा सकता है। इस प्रकार उन्होंने मनोविज्ञान को विषय-वस्तु एवं प्रणाली विज्ञान में अधिक विषयनिष्ठता लाने के लिए प्रभावित किया। उनका आग्रह था कि प्रयोगशाला में शरीरक्रिया विज्ञानी शब्दावली का प्रयोग किया जाना चाहिए।

3.10 सारांश

- शरीर क्रिया विज्ञान शरीर के अंगों और तन्त्रों के आधार पर व्यवहार की व्याख्या करता है। इसके अन्तर्गत शारीरिक अंगों की रचना और उसके कार्यों का अध्ययन किया जाता है। यूनानियों के समय में शरीर रचना विज्ञान सर्जरी तथा चिकित्सकीय पौधों के ज्ञान का सम्मिश्रण था।
  शरीर क्रिया विज्ञानियों का योगदान-डेकार्टे को शरीर क्रिया विज्ञान तथा प्रतिवर्तवाद का जनक माना जाता है उन्होंने नाड़ी तन्त्र का अध्ययन किया । हॉब्स का योगदान शरीर क्रियात्मक उपागम की रूपरेखा को बनाने को प्रेरित करने में है।
- हार्टले ने न्यूटन के प्रत्यय को तन्त्रिका तंत्र पर लागू किया।
- कैबेनिस को शरीर क्रियात्मक मनोविज्ञान का जन्मदाता माना जाता है। उन्होंने मस्तिष्क की कार्य प्रणाली व प्रतिवर्त क्रिया का अध्ययन किया।
- पिनेल ने मस्तिष्क में विचार आने की बात कही।
- वुल्फ ने डेकार्टे के अध्यात्मवाद व चिदणुवाद के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किये।
- जेम्स ब्रेड ने सम्मोहन अथवा हिपनोटिज्म का सर्वप्रथम नाम दिया,
- बेन ने मस्तिष्क तन्त्रिका तन्त्र तथा संवेदांगों के अध्ययन को महत्वपूर्ण माना।
- जेम्स शरीर क्रिया विज्ञान तथा मनोविज्ञान में सम्बन्ध जानने के लिये प्रयोग किया करते थे।
- वेबर व फैशनर ने मनोवैज्ञानिक समस्याओं के अनुसन्धान में सुव्यवस्थित प्रयोग के महत्व को बताया।
- म्यूलर को नवीन प्रयोगात्मक शरीर क्रिया विज्ञान का जनक माना जाता है।
- हेमहोल्ज ने तंत्रिका-आवेग का मापन किया तथा वुन्ट ने मनोविज्ञान की प्रथम प्रयोगशाला का निर्माण किया।
- पैवलोव की क्लासिकी अनुबन्धन का मनोविज्ञान में व्यापक प्रभाव है उन्होंने शरीर क्रिया का व्यवहार में महत्व को स्वीकारा है।

3.11 मूल्यांकन प्रश्न

प्र01- शरीर क्रिया विज्ञान का मनोविज्ञान में महत्व को बताइये।

प्र02- डेकार्टे , कैबेनिस, म्यूलर, वुन्ट व पैवलोव के कार्यों की समीक्षा कीजिये।

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डॉ0 जे0डी0 शर्माः ’’मनोविज्ञान की पद्धतियों एवं सिद्धान्त‘‘ विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
2. डॉ0 रामनाथ शर्माः ’’ मनोविज्ञान का इतिहास‘ लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा-3
3. डॉ0 आर0के0ओझाः ’’ मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं सम्प्रदाय‘‘ विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

इकाई- 4 वेबर, फेकनर तथा गाल्टन का मनोविज्ञान में योगदान, मनोभौतिकी एवम इसकी विधियाँ (Contribution of Weber, Fechner, Galton in Psychology, Psychophysics and Psychophysical Methods)

इकाई की रूपरेखा

4.0 प्रस्तावना

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का शुभारम्भ

4.3 बेबर

    4.3.1. बेबर के योगदान

4.4 फेकनर

    4.4.1. फेकनर के योगदान

4.5 मनोभौतिकी

4.6 मनोभौतिकी विधियां

    4.6.1. सीमान्त विधियां

    4.6.2. स्थिर उद्दीपक विधि

    4.6.3 मध्यमान त्रुटि विधि

4.7 फ्रासिंस गाल्टन के योगदान

4.8 अभ्यास प्रश्न

4.9 सारांश

4.10 शब्दावली

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.12 निबन्धात्मक प्रश्न

4.13 संदर्भ पुस्तके

4.0 प्रस्तावना -

ई0 एच0 बेबर को प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के संस्थापक के रूप में जाना जाता है। उन्होंने मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग किये और अनेक महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले। वेबर ने मुख्य रूप से शरीर विज्ञान एवं स्वास्थ्य विज्ञान का अध्ययन किया और स्पर्श सम्बन्धी अध्ययन किये। उन्होंने संवेदन सम्बन्धी भी कई अध्ययन किये। संवेदनशीलता के माप के लिये उन्होंने एक नियम प्रतिपादित किया जिसे बेबर का नियम कहते हैं। बेबर के समकालीन फेकन0र थे जिन्होंने मनोभौतिकी के क्षेत्र में अनेक कार्य किये। उन्होंने संवेदनशीलता की माप के लिये बेबर द्वारा दिये गये नियम की जांच की और उसे त्रुटिपूर्ण माना और उसमें संशोधन किया। उन्होंने कहा कि मनोभौतिकी एक विज्ञान है जिसके अन्तर्गत शरीर एवं मन के आपसी निर्भरता के सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। फेकनर एक वैज्ञानिक मनोवैज्ञानिक थे। उन्होंने सबसे पहले मानसिक प्रक्रियाओं तथा शारीरिक क्रियाओं के बीच एक सम्बन्ध स्थापित किया और मनोभौतिकी शब्द का प्रयोग किया। जर्मनी में बेबर एवं फेकनर ने मनोविज्ञान को प्रयोगात्मक रूप प्रदान किया। प्रयोगात्मक मनोविज्ञान ही मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का आधार है।

फेकनर के अनुसार मनोभौतिकी मन और शरीर के सम्बन्धों का अध्ययन करने वाला विज्ञान है। उन्होंने दृष्टि एवं तापमाप की संवेदनाओं पर अनेक प्रयोग किये। फेकनर के प्रयोगों का उद्देश्य यह पता लगाना था कि गणनात्मक विज्ञान प्रकृति के सम्बन्ध में मानव आत्मा के अध्ययन में कहां तक सहायक हो सकता है। उन्होंने मनोभौतिकी की विधियों को बताया। मनोभौतिकी में उद्दीपक तथा उससे उत्पन्न होने वाले अनुभवों के परिणात्मक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। फेकनर ने मनोभौतिकी की भिन्न-भिन्न समस्याओं का अध्ययन करने के लिये तीन विधियों को बताया। बेबर तथा फेकनर दोनों ही ने प्रयोगशाला में उद्दीपक परिवर्तनों के प्रयोग किये और यह बताया कि उद्दीपक व्यवहार को सीधा प्रभावित करता है। इन्होंने प्रयोगात्मक मनोविज्ञान की आधारशिला रखी। मनोविज्ञान के विकास में फ्रांसिस गाल्टन का नाम बहुत प्रसिद्ध है। उन्होंने मानव विकास से सम्बन्धित कई समस्याओं का अध्ययन किया। प्रस्तुत इकाई में आप बेबर, फेकनर तथा गाल्टन के महत्वपूर्ण योगदानों को जान सकेंगे तथा मनोभौतिकी एवं उसकी विभिन्न विधियों का अध्ययन कर सकेंगे।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

i. बेबर एवं फेकनर के योगदानों को जान सकेंगे।
ii. गाल्टन के योगदानों को जान सकेंगे।
iii. मनोभौतिकी एवं मनोभौतिकी की विधियों के बारे में जान सकेंगे।

4.2 प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का शुभारम्भ

प्रयोगात्मक मनोविज्ञान की आधारशिला सर्वप्रथम बेवर, फेकनर ने रखी, ये मनोवैज्ञानिक जर्मनी के रहने वाले थे। यह वह समय था जब और प्रयोगात्मक पद्धतियों को आवश्यक माना जा रहा था। यह विद्वान मूल रूप से वैज्ञानिक थे और इनकी प्रारम्भिक शिक्षा भी विज्ञान के माध्यम से हुई थी, इसलिए इन्होंने मनोविज्ञान के व्यवस्थित अध्ययन के लिये प्रयोग को महत्वपूर्ण बताया। फैकनर गणितज्ञ तथा भौतिकविद थे, इसलिये उन्होंने गणितीय समीकरण आवश्यक बताये। उन्होंने मनोविज्ञान को प्रयोगात्मक रूप प्रदान किया । प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का जन्म सत्रहवीं शताब्दी में हो चुका था। प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के प्रारम्भ काल में तो सभी क्षेत्रों में प्रयोग कार्य सम्पन्न होने लेगे थे, किन्तु बाद में समय की गति एवं मानवता की प्रगति के साथ-साथ मनोवैज्ञानिकों का ध्यान कुछ प्रमुख समस्याओं की ओर ही केन्द्रित होने लगा तथा मनोवैज्ञानिकों की रूचि दृष्टि, श्रवण, प्रत्यक्षीकरण, प्रतिक्रिया काल तथा मनोभैतिकी जैसे क्षेत्रों की ओर होने लगी।

4.3. अर्नस्ट हिनरिच वेबर (1795-1878)

इनका जन्म 1795 में जर्मनी के विटेनवर्ग शहर में हुआ था। 1815 में लिपजिग विश्वविद्यालय से उन्होंने पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की तथा 1817 में वे उसी विश्वविद्यालय में शरीररचना तथा शरीर क्रिया विज्ञान के अध्यापक नियुक्त हुए। वेबर द्वारा संवेदाग शरीरक्रिया विज्ञान में महत्वपूर्ण कार्य किये गये ।

4.3.1 वैबर के योगदान

वैबर के निम्नलिखित योगदान हैं-

1. स्पर्श संवेदना तथा त्वक संवेदना- वैबर ने सबसे पहला प्रयोग स्पर्श संवेदना पर ही किया था। अपने प्रयोगों से उसने यह निष्कर्ष निकाले कि स्पर्श संवेदना में ताप, दबाव तथा स्थान सीमाओं की संवेदनाऐं सम्मिलित होती हैं। ताप संवेदना में उष्णता एवं शीतलता की संवेदनाऐं रहती हैं। इसके लिए वैबर ने सबसे पहले दो बिन्दु सीमा के विचार को प्रस्तुत किया। वेबर का मत था कि स्पर्श संवेदन में तीन विभिन्न तरह के संवेदन होते हैं- दबाव का संवेदन, ताप का संवेदन, तथा स्थानीयता का संवेदन। इन तीनों से सम्बन्धित कई प्रयोग किये गये। स्पर्श संवेदन के एक प्रयोग में वेबर ने यह दिखलाया कि जब व्यक्ति के त्वचा को दो नुकीले बिन्दुओं से स्पर्श कराया गया, तो वह पूरी तरह से दो बिन्दुओं का प्रत्यक्षण करता है। फिर इन दोनों नुकीले बिन्दुओं के आपसी दूरी को धीरे-धीरे कम करने पर एक ऐसी स्थिति आती है जहां प्रयोग मात्र एक बिन्दु का संवेदन का अनुभव करता है। वेबर ने इसे द्विबिन्दु देहली (Two point threshold) की संज्ञा दी है। अगर दो नुकीले बिन्दु का आपसी दूरी इस द्विबिन्दु देहली से ऊपर है, तो व्यक्ति दो बिन्दु के द्वारा

स्पर्श होने का अनुभव व्यक्ति करता है और यदि उसकी आपसी वास्तविक दूरी इस द्विबिन्दु देहली से कम है, तो व्यक्ति को एक बिन्दु द्वारा स्पर्श किये जाने का संवेदन होता है। ऐसे कई तरह के प्रयोगों के आधार पर वेबर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि द्विबिन्दु देहली शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों के लिए अलग-अलग होता है। शरीर के कुछ अंग अधिक संवेदनशील होते हैं तथा कुछ अंग कम संवेदनशील होते हैं। अधिक संवेदनशील अंगों में द्विबिन्दु देहली कम होते पायी गयी तथा कम संवेदनशील अंगों में द्विबिन्दु देहली अधिक पायी गयी।

2. ताप संवेदन के क्षेत्र में किये गये प्रयोग-ताप संवेदन के क्षेत्र में वेबर द्वारा जो प्रयोग किये गये उनसे एक विशेष सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। इस सिद्धान्त के अनुसार ठंड एवं गर्म की संवेदना वास्तविक तापक्रम उत्तजेन पर निर्भर नहीं करती है बल्कि इसकी अनुभूति त्वचा के तापक्रम में परिवर्तन पर निर्भर करता है। जैसे - जब व्यक्ति साधारण गर्म पानी में अपना हाथ डुबोता है, तो उसे गर्म की संवेदन नहीं होती है, क्योंकि हाथ गर्म पानी के साथ समायोजन कर लेता है परन्तु यदि पानी के ताप में वृद्धि होती है, तो इससे व्यक्ति को गर्म का संवेदन होता है क्योंकि इससे त्वचा मे तापक्रम में भी परिवर्तन अर्थात वृद्धि होती है।
3. संवेदन के क्षेत्र में किये गये प्रयोग-बेबर का सबसे अधिक योगदान मांसपेशीय संवेदन के क्षेत्र मं े किये गये प्रयोग हैं। वेबर ने यह दिखलाने की कोशिश की कि, स्पर्श के संवेदन में मांसपेशियों, त्वचा, एवं शरीर के आन्तरिक अंगों का मिला जुला योगदान होता है। वेबर ने इस बात में अभिरूचि दिखायी कि, विभिन्न वजनों के वस्तुओं को उठाकर तथा आपस में तुलना करके व्यक्ति कहां तक उनमें अन्तर कर सकता है। वेबर यह जानना चाहते थे कि विभेदन दो परिस्थितियों में से किस परिस्थिति में उत्तम होता है। एक परिस्थिति वैसी हो सकती है जिसमे विभेदन करते समय सिर्फ स्पर्श संवेदन हो, जैसे - प्रयोज्य के हाथ पर वजन को प्रयोगकर्ता द्वारा रखा जाता हो और मात्र उत्पन्न स्पर्श संवेदन के आधार पर विभेदन करना हो। दूसरी परिस्थिति यह हो सकती है जिसमें प्रयोज्य को वजन अपने हाथ से उठाने के लिए कहा जाए ताकि विभेदन कार्य में हाथ एवं बांह की मांसपेशियॉं भी अपना योगदान कर सके। वेबर ने अपने कई प्रयोगों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि दूसरी परिस्थिति के होने पर पहली परिस्थिति की तुलना में विभेदन कार्य अधिक सही ढंग से किया जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि वजन के प्रत्यक्षण के प्रति संवेदनशीलता उस समय बढ जाती है, जब स्पर्श संवेदन में मांसपेशीय संवेदन का भी योगदान होताहै।इस नियम को 'वेबर नियम' कहा गया।
4. घ्राण सम्बन्धी प्रयोग - बेबर ने घ्राण (सूघने) सम्बन्धी संवेदनाओं के विषय में ये जानने की कोशिश की कि, गैस या द्रव में से किसका प्रभाव अधिक होता है।

5. श्रवण सम्बन्धी प्रयोग - बेबर ने श्रवण (सुनने) संवेदनाओं के सम्बन्ध में भी प्रयोग किये। उन्होंने अपने दोनो कानों के पास टिक-टिक करने वाली दो घड़ियां लाये और फिर दोनों को एक ही कान के पास लाकर प्रयोग किये। उन्होंने देखा कि जब घड़ियां दोनो कानों के पास लाई जाती है तब उनके एक साथ होने की संवेदना कम होती है लेकिन जब दोनों को एक ही कान पर लगाया जाता है तो वे एक साथ टिक-टिक करती सुनाई देती है।
6. दृष्टि सम्बन्धी प्रयोग - बेबर ने दृष्टि सम्बन्धी संवेदनाओं पर भी प्रयोग किये । वह यह देखना चाहते थे कि दो रेखाओं में कितना अन्तर होना चाहिये कि उसे पहचाना जा सके। उन्होंने देखा कि जब दो रेखाये एक दूसरे के बहुत अधिक पास होती है तो वे हमें एक ही मालूम पडती है और जब उनमें अन्तर बढ जाता है तो अलग-अलग दिखाई देती है। बेबर ने यह पता लगाया कि दो रेखाओं में कितना अन्तर होना चाहिये कि वे एक-दूसरे से भिन्न मालूम पडे।

बेबर ने जर्मनी में प्रयोगात्मक मनोविज्ञान को स्थापित किया। मनोविज्ञान के इतिहास में बेबर का महत्व इसलिये है कि उन्होंने बाह्य जगत के प्रति मनुष्य की प्रतिक्रियाओं को मापने का प्रयास किया और मनोविज्ञान को वैज्ञानिक रूप दिया।

4.4 गस्टेव थियोडोर फेकनर (1801-1887)

फेकनर का जन्म जर्मनी के एक छोटे गांव में 1801 में हुआ था। 1817 में लिपजिग विश्वविद्यालय में चिकित्सा विज्ञान में मैट्रीक पास किया और 1822 में इसी विश्वविद्यालय से चिकित्सा विज्ञान की उपाधि प्राप्त की । 1817 से 1824 तक उनकी अभिरूचि शरीरक्रिया विज्ञान के अध्ययन में काफी रही। बाद में उनकी रूचि भौतिकी में हुई। उनकी अभिरूचि भौतिकी में अधिक बढी। मनोविज्ञान में फेकनर का सबसे महत्वपूर्ण योगदान मनोभौतिकी के क्षेत्र में किये गये शोध एवं प्रयोग हैं। फेकनर ने मनोभौतिकी का अध्ययन करके इसके द्वारा मानसिक क्रियाओं एवं दैहिक क्रियाओं के बीच के संबंध को बताया। इस सम्बन्ध को मापने के लिए उन्होंने कुछ मनोभौतिकी विधियों का प्रतिपादन किया ।

4.4.1 फेकनर के योगदान

मनोभौतिकी के क्षेत्र में फेकनर ने अपना एक निश्चित स्थान बना लिया था। जैसे-जैसे मनोभौतिकी का प्रसार होता गया, वैसे-वैसे फेकनर का नाम मनोविज्ञान से जुड़ता गया। फेकनर ने मनोभौतिकी से सम्बन्धित अनेक प्रयोग किये। उनके इस प्रयोगात्मक कार्यों ने मनोवैज्ञानिकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया। वह यह भी जानने का प्रयत्न किया कि, आत्मा के अस्तित्व को जाना जाए। उनका विचार था कि पौधों तथा फूलों में भी जीवन होता है। पौधों में मानसिक जीवन होता है, इस विचार को उन्होंने एक पुस्तक के माध्यम से स्पष्ट किया। फेकनर का यह मत था कि मन तथा पदार्थ में समानता एवं एकता होती है।

प्रयोगात्मक मनोविज्ञान में फेकनर का विशेष स्थान है, क्योंकि उन्होंने मनोभौतिकी के प्रत्यय का विकास किया। सर्वप्रथम उन्होंने वैबर के नियम में संशोधन किया और उसे प्रामाणिक बनाया। बाद में यह नियम "वैबर-फेकनर नियम"के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने संवेदना के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए अनेक प्रयोग किए। फेकनर ने यह ज्ञात किया कि, जीवन में मन तथा शरीर में एक प्रकार का मात्रात्मक सम्बन्ध होता है। इसी आधार पर उन्होंने कहा कि संवेदना की तीव्रता उद्दीपक अनुरूप नहीं घटती बढती है, बल्कि उन दोनों में एक विशेष और भिन्न प्रकार का सम्बन्ध होता है। उनका कहना था कि, संवेदना की तीव्रता गणितीय रूप में बढती है, यदि उद्दीपक की तीव्रता को ज्यामितीय रूप में बताया जाता है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि, भेदीय सीमा(DL) और प्रमाप उद्दीपक में एक निरन्तरता का सम्बन्ध होता है। जब उद्दीपक की तीव्रता में अनुपातीय वृद्धि होती है तो संवेदना की मात्रा में भी वृद्धि होती है। फेकनर ने अपने इसे निम्नलिखित समीकरण द्वारा स्पष्ट किया है-

$S=C \log R$

S= संवेदना की तीव्रता

R= उद्दीपक की तीव्रता

C= स्थिरांक

फेकनर ने वैबर के नियम को संशोधित किया और अपने दो नियमों को बताया -

1. बड़ी संवेदना बहुत सी छोटी संवेदनाओं का योग होती है

2. संवेदना के न्यूनतम ज्ञेय भेदों में समानता पायी जाती है। फेकनर ने वैबर के समीकरण $\Delta R/R$ को बिल्कुल सही माना। फेकनर का निमय वैबर के नियम से अधिक उपयुक्त और सही है। इसका कारण है कि वैबर उत्तेजना की तीव्रता को स्पष्ट नहीं कर सके जबकि फेकनर के समीकरण $S=C \log R$ ने यह स्पष्ट कर दिया कि उद्दीपकों और संवेदनाओं की तीव्रता में कार्यात्मक सम्बन्ध निश्चित होता है। फेकनर ने प्रयोगों के आधार पर मापन की विधियों को विकसित किया। इन्हें मनोभौतिकी के नियमों के नाम से जाना जाता है।

फेकनर के अनुसार संसार की प्रत्येक चीज चेतनशील हैं। इसलिये प्रत्येक चीज में एक आत्मा या मन होता है। वे मन शरीर समस्या का समाधान चाहते थे। उन्होंने कहा कि मन तथा शरीर एक दूसरे से ऐसे सम्बन्धित है जैसे कि वृत्त का बाहरी तथा भीतरी भाग जो एक ही रेखा के दो विपरीत भाग होते हैं। मन शरीर समस्या के समाधान को पहचान प्राक्कल्पना कहा जाता है। फेकनर ने यह भी कहा वेबर-फेकनर नियम द्वारा मन शरीर समस्या का समाधान ऊपरी तौर पर किया जा सकता है। फेकनर पहले प्रयोगात्मक मनोवैज्ञानिक थे।

4.5. मनोभौतिकी

1. **गिलफोर्ड के अनुसार-** मनोभौतिकी वह विज्ञान है जो भौतिक घटनाओं तथा सम्बन्धित मानसिक घटनाओं के मात्रात्मक सम्बन्धों का अध्ययन करती है।

2. **इंगलिश और इंगलिश के अनुसार-** मनोभौतिकी उद्दीपक के भौतिक गुणों और संवेदना के परिणात्मक गुणों के सम्बन्ध का अध्ययन है।
आजकल मनोभौतिकी को प्रयोगात्मक मनोविज्ञान की एक शाखा के रूप में जाना जाता है। इस शाखा में उद्दीपक तथा उससे उत्पन्न होने वाली अनुभूतियों के परिणात्मक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

4.6. मनोभौतिकी एवं मनोभौतिकी विधियां

मनोभौतिकी की निम्नलिखित तीन विधियां मुख्य है -

4.6.1 सीमान्त विधि -इसे न्यूनतम उद्दीपक परिवर्तन विधि, समान अन्तराल विधि तथा केवल पहचानने योग्य अन्तर विधि भी कहते है। इस विधि द्वारा मुख्य दो समस्याओं का अध्ययन किया जाता है-

i. निम्नतम सीमान्त (RL) समस्या का अध्ययन
ii. भिन्नता सीमान्त (DL) समस्या का अध्ययन

इसमें प्रयुक्त उद्दीपक में पूर्व योजना के अनुसार प्रत्येक प्रयास में न्यूनतम मात्रा में यह परिवर्तन उद्दीपक की मात्रा को घटाकर या बढाकर किये जाते हैं। इस विधि में उत्तेजना में क्रमिक बढोत्तरी या घटोत्तरी करके प्रयोज्य का निर्णय पूछा जाता है। इस विधि में फेकनर ने उद्दीपन की तीव्रता को तब तक बढाया जब तक कि प्रयोग अपने संवेदन में परिवर्तन न अनुभव कर ले। पहले उद्दीपन की तीव्रता काफी कम रखी जाती है। इससे प्रयोज्य में कोई संवेदन नहीं होता है। फिर धीरे-धीरे छोटी-छोटी इकाइयों में इसकी मात्रा को तब तक बढाया जाता है जब तक कि प्रयोज्य को स्पष्ट संवेदन न होने लगे। इस परिस्थिति में उद्दीपन की तीव्रता काफी अधिक होती है जिससे प्रयोज्य को स्पष्ट संवेदन होता है। फिर धीरे-धीरे इसकी तीव्रता को छोटी-छोटी इकाइयों में तब तक कम की जाती है जब तक कि प्रयोज्य कोई संवेदन की अनुभूति न हो। पहली परिस्थिति को आरोही क्रम तथा दूसरी परिस्थिति को अवरोही क्रम कहा जाता है। इन दोनों क्रमों के औसत के आधार पर दहेली का निर्धारण किया जाता है।

4.6.2. स्थिर उद्दीपक विधि- इस विधि के द्वारा उद्दीपक के भेद को ज्ञात किया जाता है। इस विधि से प्रयोगकर्ता उद्दीपकों के स्थिर नम्बरों का चयन कर लेता है। इस विधि में उद्दीपक मूल्यों को अनेक बार प्रस्तुत किया जाता है इसलिये इसे आवृत्ति विधि कहते है। इसमें उद्दीपक के मूल्यों को पहले निर्धारित कर लिया जाता है फिर प्रयोग की अवधि में स्थिर रखा जाता है इसलिये इसे स्थिर उद्दीपक विधि कहते हैं। सबसे पहले इस विधि में कुछ परिवर्ती उद्दीपकों में से कभी किसी

परिवर्ती उद्दीपक को तथा कभी दूसरे परिवर्ती उद्दीपक को स्टैण्डर्ड उद्दीपक के साथ प्रस्तुत करते है। विभिन्न परिवर्ती उद्दीपकों को स्टैण्डर्ड उद्दीपको के साथ प्रस्तु करने का क्रम पहले ही निश्चित कर लिया जाता है। परन्तु इस क्रम को प्रयोज्य को बताया नही जाता है। परिवर्ती उद्दीपकों को स्टैण्डर्ड उद्दीपकों के साथ प्रस्तुत करके प्रयोज्य की अनुक्रिया ’हॉं’ या ’नही’ में नोट कर ली जाती है।

4.6.3. मध्यमान त्रुटि विधि- फेकनर ने इस विधि का उपयोग दृष्टि एवं त्वचा सम्बन्धी संवेदनाओं के मापन के लिए किया। इस विधि को समीकरण विधि भी कहते हैं क्योंकि इसमें प्रयोज्य तुलनीय उद्दीपक को घटा-बढाकर स्टैण्डर्ड उद्दीपक के समान करता है। मध्यमान त्रुटि विधि की प्रयोग प्रक्रिया सरल है। इसमें एक स्टैण्डर्ड और एक तुलनीय उद्दीपक प्रयोज्य के सामने प्रस्तु किये जाते हैं। प्रयोज्य का कार्य तुलनीय उद्दीपक को इस प्रकार समायोजित करना होता है कि उसका मूल्य स्टैण्डर्ड उद्दीपक के समान हो जाये। प्रत्येक प्रयास में प्रयोज्य द्वारा पुनरोत्पादित उद्दीपक का मूल्य नोट कर लिया जाता है। इसमें तुलनीय उद्दीपकों के सभी मूल्यों का मध्यमान निकालते हैं।

उदाहरण-माना 40 किलोमीटर की एक स्तरमानीय रेखा है और प्रयोज्य को उसके बराबर रेखा खीचनी है। 10 विभिन्न प्रयास कराने पर उसकी त्रुटियों को निम्न विधि से नोट करेंगे-

प्रयास संख्या	**दायीं ओर**	**बायीं ओर**
1	40	42
2	42	38
3	40	36
4	37	44
5	35	41
6	40	37
7	36	39
8	37	41
9	41	43
10	36	41
कुल	384	402

बायीं ओर का औसत = 402/10 = 40.2 मिली मीटर

दायीं ओर का औसत = 384/10 = 38.4 मिली मीटर

कुल औसत = 40.2 $ 38.4/2 = 78.6/2 = 39.3

मध्यमान शुद्धि = 40.2 - 39.3 = .9 मिलीमीटर

प्राप्त परिणाम से यह पता चलता है कि 40 मिमी. लम्बाई की रेखा 50: या इससे अधिक बार प्रयोज्य द्वारा 40 मिमी. की रेखा से भिन्न दिखलाई पडेगी।

वैबर तथा फेकनर दोनों ही ने प्रयोगशाला में उद्दीपक परिवर्तनों के प्रयोग किये, अपने निष्कर्षों से उन्होंने यह भी निश्चित कर दिया कि, उद्दीपक व्यवहार को सीधा प्रभावित करता है। फेकनर को उसके निम्नलिखित तीन कार्यों के लिए याद रखा जाएगा-

1. वैबर के नियम को संशोधित तथा स्पष्ट किया।

2. सीमा के प्रत्यय को विस्तार से समझाया।

3. मनोभौतिकी की तीन विधियों का आविष्कार किया।

4.7 फ्रांसिस गाल्टन (1822-1911)

ब्रिटिश मनोविज्ञान के विकास में गाल्टन का नाम अत्यधिक प्रसिद्ध है। इनका जन्म 1822 में बरमिंघम के निकट स्पार्क ब्रुक नामक स्थान में हुआ था। प्रारम्भ में उन्होंने चिकित्साशास्त्र का अध्ययन किया। वह वैज्ञानिक बनना चाहते थे, इसलिए जीवन के आरम्भिक समय में बहुत अधिक यात्राऐं की । कई वर्षों तक वह अफ्रीका महाद्वीप में खोजों के लिए भ्रमण करते रहे। जब वह अफ्रीका में अनुसन्धान कार्यों में व्यस्त थे, उसी समय उनकी रूचि विज्ञान से हटकर मानवशास्त्र एवं मनोविज्ञान की ओर आकर्षित हुई। इंग्लैण्ड की कई वैज्ञानिक संस्थाओं के महत्वपूर्ण पदों पर उन्होंने कार्य किया। 1884 में केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में मानवशास्त्रीय मापन हेतु एक प्रयोगशाला की स्थापना की।

4.7.1 गाल्टन के योगदान -

मनोविज्ञान में गाल्टन योगदानों को निम्नलिखित रूप से समझ सकते है-

1.मानव विकास - गाल्टन पहले व्यक्ति थे जिन्होंने मानव विकास से सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन किया। उन्होंने मनुष्यों तथा प्रजातियों के अध्ययन में विभेद, चयन तथा अनुकूलन के सिद्धान्तों का उपयोग किया। गाल्टन ने पैतृक परम्परा के अध्ययन के लिए बहुत सी प्रजातियों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि वातावरण के परिवर्तन के कारण जब जीवों को भिन्न-भिन्न वातावरण के साथ समायोजन स्थापित करता पडता है तो नई-नई प्रजातियों का विकास होता है।

2.संस्कृति - विभिन्न संस्कृति के लोगों में काफी अन्तर होता है तथा एक ही संस्कृति के विभिन्न लोगों में भी काफी अन्तर होता है। उनकी रूचि मानव स्वभाव के अध्ययन में थी आधुनिक मनोविज्ञान के लिए उनकी ये रूचि एक देन साबित हुई।

3.मानसिक वंशागति या आनुवंशिकता - गाल्टन के अनुसार मानसिक क्षमताऐं व्यक्ति को विरासत में मिलती हैं और फिर अगली पीढी को वैसी ही क्षमताऐं स्वंय मिल जाती है। मानसिक क्षमताऐं अर्जित नहीं होती है बल्कि एक पीढी से दूसरी पीढी को अपने आप मिलते जाती है। अपनी पहली पुस्तक '' हेरेडिटी जिनियस '' में उन्होंने 300 ब्रिटिश परिवारों से कुल 537 श्रेष्ठ व्यक्तियों को अध्ययन के लिये चुना। इनमें वैज्ञानिक, अभियंता, लेखक, जज आदि को प्रयोज्य के रूप में चुना गया। इस अध्ययन में वंशावली विधि, जीवनी लेखनी विधि, पारिवारिक इतिहास विधि, जुडवा-समानता विधि तथा प्रजातियों की तुलना विधि आदि का प्रयोग किया गया। इसके बाद गाल्टन इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि मानसिक क्षमता व्यक्ति में अर्जित नहीं बल्कि जन्मजात होती है। इस तरह की क्षमता के विकसित होने में प्रशिक्षण की कोई भूमिका नहीं होती है। उनके अनुसार जो व्यक्ति महान होते हैं या किसी उच्च पद पर होते हैं, उनमें कुछ असाधारण क्षमता होती है और ऐसे लोग प्रतिकूल वातावरण के मिलने के बावजूद भी महान हो जाते हैं (क्योंकि इन्हें महानता का गुण विरासत में मिला होता है)। उनका कहना था कि प्रतिभाशाली माता-पिता की सन्तान प्रतिभाशाली होती है। सामान्य बुद्धि के माता-पिता की सन्तान सामान्य तथा मूर्ख पिता की सन्तान मूर्ख होती है। इसमें वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि व्यक्ति के गुणों के विकास में वंशानुक्रम सबसे महत्वपूर्ण है।

4. मानसिक परीक्षण एवं सांख्यिकीय विधियां- गाल्टन ने मानसिक वंशागत सम्बन्धी कई अध्ययन किये और इसके आधार पर गाल्टन इस निषकर्ष पर पहुंचे कि मानव में मानसिक गुण तथा शारीरिक गुण दोनों मं े वैयक्तिक विभिन्नता होती है। उन्होंने सबसे पहली बार मानसिक परीक्षण का निर्माण किया और इसलिये उन्हें मानसिक परीक्षण का जनक कहा है। मानसिक परीक्षण का उद्देश्य वैयक्तिक विभिन्नता का पता लगानाहै।इसमें कुछ मापन शारीरिक था। जैसे-शरीर की ऊंचाई तथा भार का मापन तथा मांसपेशीय शक्ति का मापन आदि कुछ ऐसे मापन के उदाहरण है। इसके अलावा मनोवैज्ञानिक चरों जैसे-संवेदी क्षमताऐं, प्रतिक्रिया समय तथा आदतों के निर्माण, प्रत्याह्वान का मापन किया गया।

5. सांख्यिकीय विधियां- इन मानसिक एवं शारीरिक परीक्षणों से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण करने के लिए सांख्यिकीय विधियों को भी गाल्टन ने बताया जो निम्नलिखित हैं

क. श्रेणीकरण की विधि के सहारे व्यक्ति को उनके निष्पादन के अनुसार उच्चतम से न्यूनतम में श्रेणीबद्ध किया गया।

ख. सहसम्बन्ध द्वारा व्यक्तियों के निष्पादनों के बीच उच्च या निम्न सम्बन्ध का पता लगाया गया।

6. मानसिक प्रतिमा से सम्बन्धित अध्ययन- गाल्टन के सबसे महत्वपूर्ण योगदानों में मानसिक प्रतिमा से सम्बन्धित अध्ययन है। गाल्टन ने मानसिक प्रतिमा का अध्ययन प्रश्नावली द्वारा किया। उन्होंने पहली बार प्रश्नावली विधि का प्रयोग मनोवैज्ञानिक मापन के लिए किया। इस प्रश्नावली में प्रयोज्य को अपने सामने किसी ठोस वस्तु जैसे-टेबुल, कुर्सी आदि की कल्पना करने के लिए कहा जाता था और उसके बाद उससे जो प्रतिमा उसके मन में आये, उनका वर्णन करने को कहा जाता था। वह बताता था कि प्रतिमा स्पष्ट हैं या धुंधली, रंगीन हैं या रंगहीन, स्थिर हैं या अस्थिर आदि। प्राप्त प्रतिमाओं को गाल्टन ने उसकी तीव्रता या उसमें उत्पन्न समान संवेदन के आधार पर '0' से '100' तक एक क्रम में व्यवस्थित किया। इसका विश्लेषण करने के बाद गाल्टन ने यह पाया कि कुछ व्यक्तियों में यहां तक कि कुछ पेन्टरों में मानसिक प्रतिमा का अभाव पाया गया जबकि कुछ अन्य व्यक्तियों में तीव्र मानसिक प्रतिमाऐं पायी गयी। मानसिक प्रतिमाओं के अध्ययन में गाल्टन की मुख्य अभिरूचि वैयक्तिक विभिन्नता के अध्ययन के साथ ही साथ आनुवंशिक समानता का पता लगाना था। उन्होंने अपने इस अध्ययन में पाया कि एक ही माता-पिता के बच्चों के मानसिक प्रतिमाओं में अधिक समानता होती है।

7.साहचर्य से सम्बन्धित अध्ययन- ने साहचर्य के क्षेत्र में भी कई योगदान दिये। गाल्टन ने साहचर्य पर किये गये अपने एक प्रयोग में 75 शब्दों की एक सूची तैयार की और प्रत्येक शब्द को एक-एक अलग कागज के टुकडे पर लिखा। इस प्रयोग में वे प्रयोज्य स्वयं थे। इन परचों में से वे एक-एक परचा उठाते गये और परचे के शब्द को देखकर दो साहचर्य शब्द या कोई विशेष प्रतिमा को लिखते गये। इसके बाद उन्होंने इन विचारों या साहचर्य की उत्पत्ति के स्रोत का पता लगाने तथा उनका उद्दीपन शब्द के साथ सम्बन्ध का पता लगाने की कोशिश की । इस प्रयोग में उन्होंने 75 शब्दों की सूची को एक-एक महीने के अन्तराल पर चार बार साहचर्य शब्दों या प्रतिमाओं को लिखा। परिणाम में देखा गया कि उन्होंने कुल 505 शब्द, साहचर्य या विचार उत्पन्न किये। जिसमें 29 शब्द या विचार ऐसे थे जो सभी चारों प्रयास या बारी में उत्पन्न हुए थे। 36 ऐसे थे जो मात्र तीन प्रयासों में उत्पन्न हुए थे। 57 ऐसे थे जो मात्र दो प्रयासों में तथा 107 ऐसे थे जो मात्र एक प्रयास में उत्पन्न हुए थे। इनमें जो शब्द या विचार अधिक बार उत्पन्न हुए थे, वे बाल्यावस्था तथा प्रौढावस्था के थे तथा जो मात्र एक बार उत्पन्न हुए थे, वे हाल की अनुभूतियों से सम्बन्धित थे। विश्लेषण से यह भी पता चला कि 32 प्रतिशत शब्दों या विचारों का सम्बन्ध किसी विशेष क्रिया या व्यवहार से था। गाल्टन ने ये साबित किया कि, साहचर्य का प्रयोगात्मक अध्ययन सम्भव है

4.8 अभ्यास प्रश्न

I. प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का विकास .... में प्रारम्भ हुआ।

II. बेबर का पहला प्रयोग .... पर था। 4

III. फेकनर का जन्म.. में हुआ था।

IV. फेकनर का समीकरण है ....

V. बेबर का नियम है ....

VI. फेकनर ने दृष्टि एवं त्वचा सम्बन्धी संवेदनाओं के मापन के लिये .... विधि का उपयोग किया।

VII. .... के अनुसार मनुष्य के विकास में उसकी आनुवांशिकता विशेष महत्व रखती है।

VIII. नामक पुस्तक के लेखक .... थे।

4.9. सारांश

- मनोविज्ञान में प्रयोगात्मक विधि के प्रयोग से मनोभौतिकी का विकास हुआ।
- इसके लिए बेबर ने महत्वपूर्ण कार्य किया।
- बेबर ने तापमान, घ्राण, श्रवण, दृष्टि, स्पर्श व पेशी आदि की संवेदनाओं पर प्रयोग करके उनमे केवल पहचानने योग्य अन्तर का पता लगाया।
- बेबर ने जिस नियम का प्रतिपादन किया उसे ' बेबर नियम ' कहा जाता है।
- फेकनर को मनोभौतिकी का जनक कहा जाता है।
- फेकनर ने मनोभौतिकी द्वारा मानसिक एवं दैहिक क्रियाओं के बीच के सम्बन्ध पर प्रकाश डाला है।
- इस सम्बन्ध को मापने के लिये उन्होंने निम्न मनोभौतिकी विधियों का प्रतिपादन किया- 1. सीमा विधि 2. सतत् उद्दीपन की विधि 3. औसत त्रुटि की विधि
- फेकनर को पहला प्रयोगात्मक मनोवैज्ञानिक माना जाता है।
- फेकनर ने उद्दीपन की तीव्रता तथा संवेदन की तीव्रता के बीच एक लघुगणकीय सम्बन्ध बताया। इस नियम को बेबर-फेकनर नियम कहा जाता है।
- गाल्टन ने मनोविज्ञान के क्षेत्र में व्यक्तिगत विभिन्नता के ऊपर काफी अध्ययन किये।
- आधुनिक मनोविज्ञान के विकास के सम्बन्ध में गाल्टन का नाम प्रसिद्ध है।
- गाल्टन ने कला की योग्यता पर आनुवांशिकता के प्रभाव का भी अध्ययन किया।
- उन्होंने मानसिक योग्यताओं की जांच करके कई मानसिक परीक्षणों का निर्माण किया।
- उन्होंने वर्ण-साहचर्य का भी अध्ययन किया।

4.10. शब्दावली

उद्दीपक - प्राणी के बाहरी तथा आन्तरिक पर्यावरण में होने वाला परिवर्तन

प्रतिमा - प्रतिमा का सम्बन्ध पूर्व अनुभवों से होता है, ये पूर्व अनुभव जब मानस पटल पर चित्रों के रूप में आते हैं तो उन्हें प्रतिमा कहते हैं।

प्रत्यक्षण - यह एक मानसिक प्रक्रियाहै। यह संवेदन तथा व्यवहार करने की क्रिया के बीच होती है।

संवेदना - यह मानसिक प्रक्रिया है जो विभिन्न उत्तेजनाओं (बाहरी सूचनाओं) के कारण उत्पन्न होती है।

4.11. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

I. जर्मनी
II. स्पर्श संवेदना
III. जर्मनी
IV. S=CLogR

I. ΔR/R
II. मध्यमान त्रुटि विधि
III. गाल्टन
IV. गाल्टन

4.12. निबंधात्मक प्रश्न

I. मनोविज्ञान के विकास में बेबर व फेकनर के योगदानों को समझाइयें।
II. मनौभौतिकी से क्या समझते है ?
III. गाल्टन के क्या-क्या योगदान मनोविज्ञान के विकास में रहे हैं ?
IV. मनोभौतिकी की विभिन्न विधियों को समझाइये।

4.13. सन्दर्भ पुस्तकें

1. अरूण कुमारसिंह, आशीष कुमारसिंह -मनोविज्ञान के संप्रदाय एवं इतिहास, मोतीलाल बनारसी दास

2. डा0 आर0के0ओझाा मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं सम्प्रदाय, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. के0एन0शर्मा -मनोवैज्ञानिक विचारधाराऐं -हर प्रसाद भार्गव, आगरा ।
4. डॉ0 रामनाथ शर्मा -मनोविज्ञान का इतिहास - लक्ष्मी नारायण प्रकाशन, आगरा। डॉ0 रामपाल सिंह वर्मा -मनोविज्ञान के सम्प्रदाय - विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

इकाई- 5 विलहेल्म वुट एवं टिचनर का मनोविज्ञान में योगदान (Contribution of Wilhelm Wundt and Tichner in Psychology)

इकाई की रूपरेखा

5.0 प्रस्तावना

5.1 उद्देश्य

5.2 संरचनात्मक मनोविज्ञान

5.3 विलियम वुण्ट का क्रमबद्ध मनोविज्ञान

5.3.1 विलियम वुण्ट के योगदान

5.3.2 वुण्ट एक व्यवस्थित मनोवैज्ञानिक के रूप में

5.3.3 वुण्ट एक प्रयोगकर्ता के रूप में

5.4 टिचनर

5.4.1 टिचनर के योगदान

5.5 अभ्यास प्रश्न

5.6 सारांश

5.7 शब्दावली

5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

5.10 सन्दर्भ पुस्तकें

5.0 प्रस्तावना

विलियम वुण्ट ने 1873-74 में मनोविज्ञान को एक स्वतंत्र प्रयोगात्मक शाखा के रूप में स्थापित किया। 1879 में उन्होंने विश्व की पहली मनोविज्ञान की प्रयोगशाला की स्थापना की। 1890 में उन्होंने मनोविज्ञान को पूर्णरूप से विज्ञान बना दिया था। वुण्ट ने मनोविज्ञान के अध्ययन क्षेत्र को निश्चित किया और इसकी विधि को भी सीमाबद्ध किया था। उनके अनुसार मनोविज्ञान के तीन लक्ष्य हैं-

1. चेतना से सम्बन्धित प्रक्रियाओं का अध्ययन तत्वों के माध्यम से होना चाहिए।
2. सभी तत्व आपस में संगठित कैसे होते हैं।

3. इन तत्वों के संगठन सम्बन्धी नियमों को खोजना।

वुण्ट ने प्राचीन मनोविज्ञान की नीवं डाली और मनोविज्ञान को एक नवीन और संशोधित विज्ञान बनाया। विलियम वुण्ट के शिष्य टिचनर थे। उन्होंने भी कार्नेल विश्वविद्यालय में एक प्रयोगशाला की स्थापना की। उन्होंने वुण्ट के मनोविज्ञान को संरचनावाद कहा । संरचनावाद इन दोनों की विचारधारा का मिलाजुला रूप है। इन दोनों की अध्ययन सामग्री ने इस सम्प्रदाय की नींव रखी थी। इन्होंने मनोविज्ञान की सामग्री को व्यवस्थित किया और उसे वैज्ञानिक बनाया। वुण्ट एवं टिचनर दोनों के अनुसार मनोविज्ञान चेतन अनुभूति के अध्ययन का विज्ञान है। इन्होंने मनोविज्ञान की प्रमुख विधि अन्तर्निरीक्षण, प्रेक्षण तथा प्रयोग को माना । दोनों मनोवैज्ञानिकों ने मनोविज्ञान के स्वरूप को प्रयोगात्मक बनाने का बहुत प्रयास किये।

5.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप विलियम वुण्ट एवं टिचनर के महत्वपूर्ण योगदानों का अध्ययन कर सकेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:-

1.संरचनात्मक मनोविज्ञान के बारे में जान सकेंगे।

2. मनोविज्ञान में विलियम वुण्ट के बारे में तथा उनके योगदानों को जान सकेंगे।

3.मनोविज्ञान में टिचनर के बारे में तथा उनके योगदानों को जान सकेंगे।

5.2. संरचनात्मक मनोविज्ञान

संरचनावाद के अनुसार मनुष्य की चेतना विभिन्न मानसिक क्षमताओं का योग होती है। चेतना की व्याख्या करते हुए विभिन्न मानसिक क्रियाओं का विश्लेषण किया जाता है। चेतना के स्वरूप में मानसिक तत्वों का विशेष स्थान होता है। ये मानसिक तत्व होते हैं। योग से चेतना बनती है। संरचनावादी मनोविज्ञान को अस्तित्ववादी मनोविज्ञान और अन्तर्दर्शनात्मक मनोविज्ञान भी कहते हैं। संरचनात्मक मनोविज्ञान का प्रतिपादन वुण्ट और टिचनर द्वारा किया गया। इन दोनों ने इस सम्प्रदाय की नीव रखी है।

5.3 विलियम वुण्ट क्रमबद्ध मनोविज्ञान

विलियम वुण्ट प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के जन्मदाता रहे। वुण्ट और टिचनर ने मनोविज्ञान की सामग्री को व्यवस्थित किया तथा उसे अधिक से अधिक वैज्ञानिक बनाया। इन दोनों ने मनोविज्ञान की अध्ययन -सामग्री को सरल रूप में परिभाषित किया। इन्होंने अन्तर्दर्शन विधि के साथ-साथ निरीक्षण और प्रयोगात्मक विधि को भी महत्व दिया। वुण्ट का जन्म 1832 में जर्मनी में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा में धार्मिक दृष्टिकोण था, क्योंकि उन्हें एक पादरी के संरक्षण में रखा गया था। 1852 में उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त की। यहाँ उन्होंने शरीर क्रिया विज्ञान का अध्ययन किया। 1879

में उन्होंने विश्व की सबसे पहली मनोविज्ञान की प्रयोगशाला की स्थापना की। वुण्ट ने मनोविज्ञान का अध्ययन क्षेत्र निश्चित किया और मनोविज्ञान की विधि को समझाया। मनोविज्ञान की परिभाषा एवं विषय-वस्तु-वुण्ट के अनुसार मनोविज्ञान अनुभूति का विज्ञान है। उन्होंने अनुभूति को दो भागों में बॉटा है-

1. **तात्कालिक अनुभूति-** तात्कालिक अनुभूति से वुण्ट का तात्पर्य स्वयं की अनुभूति से था। वुण्ट ने तात्कालिक अनुभूति को चेतन अनुभूति भी कहा।
2. **मध्यवर्ती अनुभूति-** मध्यवर्ती अनुभूति से तात्पर्य वैसे अनुभूति से था जिसके सहारे व्यक्ति किसी चीज की स्थिति निर्धारण कर पाता है। जैस-सिर में दर्द का अनुभव होना एक तात्कालिक अनुभूति का उदाहरण है। जब इस दर्द के आधार पर व्यक्ति के सिर में दर्द के कारण का पता लगता है तो यह मध्यवर्ती अनुभूति का उदाहण होगा। वुण्ट के अनुसार मनोविज्ञान की विषय-वस्तु तात्कालिक अनुभूति है न कि मध्यवर्ती अनुभूति।

5.3.1. विलियम वुण्ट के योगदान

5.3.1.1. वुण्ट एक व्यवस्थित मनोवैज्ञानिक के रूप में- वुण्ट के योगदानों को पांच भागों में बॉटकर अध्ययन किया जाता है -

1.वुण्ट की पद्धति - वुण्ट के जीवन का अध्ययन करने पर पता चलता है कि उसका योगदान स्वंय में एक तन्त्र या सिद्धान्त है। इनको चार भागों में रखा गया है-

I. **पूर्व पद्धति निर्माण काल -** प्रथम काल को पूर्व पद्धति निर्माण काल कहते हैं। वुण्ट के मनोवैज्ञानिक विचार का यह युग 1860 में पाया जाता है। इसके अन्तर्गत उन्होंने ‘‘अचेतन अनुमान के सिद्धान्त ’’ को पूर्ण रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने प्रत्यक्षीकरण और भावनाओं की क्रियाओं को एक-दूसरे से भिन्न बताया और यह भी कहा कि इन दोनों की क्रियाओं में भिन्नता के साथ-साथ एक विशेष अन्तर भी होता है।

II. **मनोवैज्ञानिक सम्मिश्रण का सिद्धान्त-** दूसरी विचारधारा के अन्तर्गत उसका मनोवैज्ञानिक सम्मिश्रण करने का सिद्धान्त है। उन्होंने बताया कि चेतना में बहुत से तत्व पाये जाते हैं, जैसे भावना, संवेदना, इच्छा आदि। साहचर्य के आधार पर ये तत्व आपस में मिश्रण की क्रिया के माध्यम से संगठित हो जाते है और चेतना को क्रियाशील करते है। चेतना के इन तत्वों के आधार पर यौगिक का निर्माण होता है।

III. **भावना का त्रिविमीय सिद्धान्त-** यह वुण्ट की तीसरी विचाराधारा है। उनके विचार में भावना की तीन विभाऐं है। सुख-दुख, खिंचाव-विश्रान्ति तथा उत्तेजना-प्रशान्त।

IV. **भावना का नवीन सिद्धान्त तथा सम्प्रत्यक्ष का प्रत्यय-** यह उनकी चौथी विचारधारा थी। संप्रत्यक्ष से तात्पर्य यह है कि मस्तिष्क में नवीन प्रकार के प्रयोग आत्मसात् होते है।

यह मानसिक अवस्था प्रत्यक्षीकरण के पश्चात आती है। इसके द्वारा प्रत्यक्षीकरण बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है। उन्होंने संवेदना, भावना तथा संप्रत्यक्ष में अन्तर बताया।

V. **व्यवस्थित आधार-** उनके अनुसार मनोविज्ञान "अनुभव" का विज्ञान है। इस मत के द्वारा उन्होंने मनोविज्ञान को दर्शन से अलग कर दिया। वह मनोविज्ञान को भौतिकी से भी अलग मानते थे। उनका कहना था कि भौतिकी में बाह्य पदार्थ का अध्ययन किया जाता है। जबकि मनोविज्ञान में आन्तरिक अनुभव का अध्ययन किया जाता है। अन्तःदर्शन को उन्होंने मनोविज्ञान के अध्ययन की प्रमुख विधि माना। इसके साथ ही साथ यह भी बताया कि अन्तःदर्शन के द्वारा पूर्ण रूप से मानव स्वभाव का अध्ययन नहीं किया जा सकता है। इसलिये प्रयोगों का सहारा लेना अति आवश्यक है। इसलिए उन्होंने अन्तःदर्शन को प्रयोगों से सम्बद्ध कर दिया। मनोविज्ञान का अन्तिम उद्देश्य मन का विश्लेषण करना है।

VI. **मानसिक प्रक्रियाऐं -** वुण्ट ने मन तथा मस्तिष्क में अन्तर बताया। उनके विचार में मन का प्रत्येक तत्व मानसिक प्रक्रिया है। उन्होंने कहा कि मानसिक प्रक्रियाऐं वास्तविक है।

VII. **मानसिक नियम** - उनके अनुसार प्रत्येक मानसिक प्रक्रिया का कोई न कोई कारण होता है। वुण्ट ने इस सिद्धान्त को सामान्य नियम के रूप में बताया। इस नियम के द्वारा उन्होंने प्रत्येक प्रकार की चेतन क्रियाओं को और उनके पारस्परिक आदान-प्रदान को समझाया। उन्होंने कहा कि मानसिक घटनाऐं भौतिक घटनाओं से भिन्न होती हैं। भौतिक घटनाओं को पदार्थ की सहायता से समझाया जा सकता है, जबकि मानसिक घटनाओं को नहीं।

VIII. **संप्रत्यक्ष** - वुण्ट ने संम्प्रत्यक्ष को स्पष्ट प्रत्यक्ष या स्पष्ट चेतना माना है। उनके अनुसार प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रियाओं के बाद सम्प्रत्यक्ष की क्रियाऐं होती है।

1. संम्प्रत्यक्ष एक ज्ञान है।
2. संम्प्रत्यक्ष एक सक्रियता है।
3. संम्प्रत्यक्ष एक घटना है।

वुण्ट ने संम्प्रत्यक्ष को वास्तविक माना है और इसे घटनाओं का एक स्वरूप कहा है। चेतना के अन्दर बहुत सारी क्रियाऐं होती है और चेतना जब अधिक स्पष्ट हो जाती है तो वह सम्प्रत्यक्ष का प्रारूप होती है।

5.3.1.2. वुण्ट एक प्रयोगकर्ता के रूप में

वुण्ट के प्रयोगों से सम्बन्धित उनके योगदानों को निम्न प्रकार से समझाया गया है-

दृष्टि तथा श्रवण का मनोविज्ञान और दैहिकी:- वुण्ट ने प्रयोगों के माध्यम से नेत्र गति, रेटिना की क्रियाशीलता की अवधि, श्रवण क्रिया के आदि पर बहुत सा कार्य किया। उन्होंने कुछ प्रयोग त्वचा और पेशीय संवेदनाओं पर भी किये।

प्रतिक्रिया काल:-वुण्ट की प्रयोगशाला में प्रतिक्रिया काल पर बहुत से प्रयोग किये गये। वुण्ट ने प्रतिक्रिया काल के प्रयोगों द्वारा विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं को समझाया था। उन्होंने प्रतिक्रिया काल की सहायता से आत्मबोध सम्बन्धी क्रियाओं का अध्ययन किया। उन्होंने संवेदी तथा पेशीय दोनों प्रकार के प्रतिक्रिया काल को ज्ञात किया।

अवधान-वुण्ट ने अवधान के दो पक्षों पर कार्य किया-(1) ध्यान का विचलन तथा (2) ध्यान का विस्तार। इन दोनों पक्षों के अध्ययन के लिये उन्होंने कई प्रकार के प्रयोग किये। उन्होंने अवधान को द्वि-विमीय बताया-(3) समकालीन तथा (4) परम्परागत। उनका मानना था कि अवधान का विस्तार दोनों दिशाओं में होता है।

साहचर्य: - वुण्ट ने शब्द-साहचर्य को दो भागों में बॉटा-

i. आन्तरिक साहचर्य-आन्तरिक साहचर्य वह है जिससे दो शब्दों के अर्थ में एक आन्तरिक सम्बन्ध होता है। उदाहरणः-परिभाषाऐं आन्तरिक साहचर्य होती है। प्रत्युत्तर शब्द का अर्थ उसी प्रकार के उद्दीपक से मिलता-जुलता होता है, जैसे- कुत्ता उद्दीपक शब्द बोला जाये और उत्तर हो पशु।
ii. बाह्य साहचर्य- बाह्य साहचर्य वे होते हैं जिनमें उद्दीपक और प्रत्युत्तर के बीच में आकस्मिक सम्बन्ध होता है जैसे- मोमबत्ती उद्दीपक शब्द बोला जाय और उसका उत्तर दीपावली हो।

वुण्ट ने बाल-मनोविज्ञान तथा पशु-मनोविज्ञान पर भी प्रयोग किये । इसके अलावा उन्होंने जन-मनोविज्ञान पर भी अपने विचार बताये। जन-मनोविज्ञान के अन्तर्गत उन्होंने सभ्यता तथा समाज का अध्ययन किया। उन्होंने बताया कि विभिन्न प्रकार के सम्प्रदाय, सभ्यता और समाज में भाषा पर विकास किस प्रकार होता है तथा लिपि और बोलने का ढंग किस प्रकार विकसित होता है।

5.4. टिचनर

संरचनावाद जर्मनी से प्रारम्भ हुआ था और टिचनर के प्रयत्नों एवं गहन अध्ययन के बाद अमेरिका में इसका विकास हुआ। मनोविज्ञान के संरचनावाद सम्प्रदाय का आरम्भ टिचनर से माना जाताहै।इसे टिचनर का संरचनावाद या टिचनर सम्प्रदाय भी कहा जाता है। जर्मनी में तो यह 1879 में ही आरम्भ हो चुका था और वुण्ट के प्रयत्नों से इसका विकास हो रहा था, अमेरिका में इसका आरम्भ लगभग सन् 1890 से माना जाता है। टिचनर का जन्म-स्थान इंग्लैण्ड था और यहीं पर ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में बी0ए0 तक उसकी शिक्षा हुई थी बाद में वह जर्मनी चले गये थे और वहां पर लीपजिंग विश्वविद्यालय में उन्होंने मनोविज्ञान का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया। उन दिनों लीपजिंग में वुण्ट भी मनोविज्ञान में अनुसन्धान कार्य कर रहे थे। टिचनर को यहां पर वुण्ट के निर्देशन में कार्य करने का मोका प्राप्त हुआ। 1892 में उन्होंने मनोविज्ञान में डॉक्टेªट की डिग्री प्राप्त

की। उनकी रूचि शारीरिक और प्रयोगात्मक मनोविज्ञान में थी। साहचर्यवादी मनोविज्ञान में उनकी रूचि नहीं थी। 1892 में उन्होंने अमेरिका के कार्नेल विश्वविद्यालय में अध्यापन-कार्य सम्पादित किया। यहीं पर कार्य करते हुए उन्होंने बहुत से महत्वपूर्ण तथ्य प्रतिपादित किये और संरचनावाद सम्प्रदाय को जन्म दिया। संरचनावाद मनोविज्ञान का प्रारम्भ टिचनर द्वारा किया गया। इसके अन्तर्गत उनके निम्नलिखित विचार है-

1. मनोविज्ञान का उद्देश्य तथा विषय-सामग्री-टिचनर के अनुसार प्रत्येक मनोवैज्ञानिक घटना के दो पक्ष होते है- 1. संरचना 2. कार्य। उन्होंने बताया कि मनोविज्ञान चेतना का अध्ययन है। इसलिये मनोविज्ञान का उद्देश्य चेतना की रचना का अध्ययन करना ही होना चाहिए। उनके अनुसार जब तक हम पूर्णरूप से यह नहीं जान लेते हैं कि चेतन प्रक्रियाऐं क्या हैं, तब तक हम यह जाने की इच्छा नहीं करते हैं कि वे जीव के लिए क्या करती है। इस विचारधारा के आधार पर उन्होंने मनोविज्ञान का उद्देश्य निश्चित किया। चेतना के तत्वों का, उनके गुणों का तथा उससे सम्बन्धित भावना एवं अनुभूति आदि का अध्ययन करना मनोविज्ञान का उद्देश्य है।

२. संरचनात्मक मनोविज्ञान की समस्याऐं- टिचनर ने संरचनात्मक मनोविज्ञान के अन्तर्गत चार समस्याओं का अध्ययन किया -

i. संरचना के तत्वों और उनके यौगिकों
ii. उसके सम्मिश्रण का रूप
iii. सामान्य यौगिकों के प्रकार की रचनात्मक विशेषताऐं
iv. अवधान की प्रकृति एवं कार्य।

3. संरचनात्मक मनोविज्ञान की विधियां-वुण्ट की तरह उन्होंने भी अन्तर्दर्शन विधि को प्रमुख और महत्वपूर्ण बतलाया। उनके अनुसार वे विधियां, जो मानसिक और शारीरिक क्रियाओं का अध्ययन करती है उनका प्रयोग संरचनात्मक मनोविज्ञान में किया जाना चाहिए। उन्होंने अन्तर्दर्शन पर बल दिया। उन्होंने यह भी कहा कि इस विधि का प्रयोग करने वाले प्रशिक्षित अन्तर्दर्शनकर्ता होने चाहिए।

4. मनोविज्ञान चेतन-अनुभव का विज्ञान है-टिचनर का कहना है कि, मनोविज्ञान चेतन अनुभव का विज्ञान है। उनके विचार में मनोवैज्ञानिक विज्ञान के अन्तर्गत चेतना का अध्ययन किया जाता है, जबकि जैविक विज्ञानों के द्वारा 'व्यवहार' का अध्ययन किया जाताहै।चेतन अनुभव का सम्बन्ध व्यक्ति की आन्तरिक प्रक्रियाओं से होता है जिनका संचालन एवं नियन्त्रण तन्त्रिका-तन्त्र करता है। उनके विचार में चेतन अनुभव वातावरण से सम्बन्धित नहीं होते हैं, जबकि व्यवहार का सम्बन्ध सीधा वातावरण से होता है। इस प्रकार वह मनोविज्ञान को 'व्यवहार' का विज्ञान नहीं मानते थे। परन्तु ये मानते थे कि व्यवहार एवं मनोविज्ञान में सम्बन्ध होता है।

5.4.1. टिचनर के योगदान

मनोविज्ञान के लिये टिचनर के प्रमुख योगदान निम्न प्रकार है-

1. **मानसिक संरचना -** व्यक्ति के अनुभवों की इकाई मानसिक तत्व है। संरचनावादी मनोविज्ञान में मन और चेतना को इन्हीं मानसिक तत्वों का योग माना जाता है। मन और चेतना का अध्ययन इन्हीं मानसिक तत्वों के आधार पर किया जाता है। मन की संरचना तीन मानसिक तत्वों के योग से हुई है-
2. संवेदना -संवेदन प्रत्यक्ष ज्ञान का आधार होता है। प्रत्यक्ष ज्ञान संवेदन के माध्यम से होता है। व्यक्ति अपनी इन्द्रियों से जो भी ज्ञान प्राप्त करता है, वह सभी संवेदन के आधार पर होता है। जैसे-सुनना, देखना, सूंघना, स्पर्श करना इत्यादि।
3. **भावना-**दूसरा मानसिक तत्व भावना होती है, जिससे मन की संरचना होती है। भावना व्यक्ति के संवेगों में पायी जाती है। अन्य शब्दों में, संवेग का आधार भावना होती है। अतः संवेग के लाक्षणिक तत्वों को भावना कहते हैं। उदाहरण के लिए प्रेम, आनन्द, घृणा, इत्यादि किसी भी संवेग को लिया जा सकता है और उसके आधार पर भावना को अनुभव किया जा सकता है।
4. **प्रतिमा-** तृतीय मानसिक तत्व प्रतिमा होता है। प्रतिमा का सम्बन्ध स्मृति और कल्पना से होता है। ये विचार के विशेष तत्व होते हैं। स्मृति और कल्पना का अधार प्रतिमा होती है और इसके े बिना ये दोनों ही सम्भव नहीं हैं। वास्तव में पूर्व प्रतिमाओं का सममरण ही स्मृति है और इनके आधार पर भावी घटनाओं और सम्भावनाओं पर कल्पना की जाती है। मानसिक तत्वों में चार प्रमुख विशेषताऐं पायी जाती हैं जो निम्न प्रकार है-

I. गुण- गुण वह विशेषता होती है जो एक वस्तु को दूसरी से पृथक करती है। यह विशेषता उपर्युक्त तीनों मानसिक तत्वों में पायी जाती है।

II. गहनता- इस विशेषता के द्वारा वस्तु के गुण की मात्रा का अनुमान होताहै।यह भी तीनों मानसिक तत्वों में पायी जाती है। यह वस्तुओं में विभिन्न मात्राओं में होती है और इसे न्यूनतम से अधिकतम दोनों सीमा बिन्दुओं के बीच कहीं भी मापा जा सकता है।

III. अवधि- यह विशेषता भी सभी मानसिक तत्वों में उपस्थित होती है। यह किसी मानसिक तत्व के विकास, स्थिरता और ह्रास को समय की दृष्टि से बतलाती है।

IV. स्पष्टता- इस विशेषता से यह पता लगता है कि कोई मानसिक तत्व कितनी स्पष्टता से व्यक्ति की चेतना में उपस्थित है। यह मूलरूप से संवेदन और प्रतिमा में दिखाई देती है।

2. **व्यक्तिगत अनुभव-**टिचनर व्यक्तिगत अनुभव को बहुत महत्व देते है। उनके अनुसार व्यक्ति के अनुभवों द्वारा ही मनोविज्ञान की अध्ययन सामग्री का संकलन होता है। इसलिए

मनोविज्ञान एक ऐसा विज्ञान है जो व्यक्तिगत अनुभव का अध्ययन करता है। व्यक्ति के अनुभवों का विश्लेषण करने से पूर्व उस व्यक्ति की शारीरिक संरचना का अध्ययन भी आवश्यक है। तन्त्रिका तन्त्र के अध्ययन से मानसिक प्रक्रियाओं की कार्य प्रणाली को समझने में सहायता मिलती है।

3. **शारीरिक संरचना और मानसिक प्रक्रियाऐं**-मानसिक प्रक्रियाऐं शरीर की रचना से सम्बन्धित होती है। टिचनर का कहना है कि पांचों ज्ञानेन्द्रियों की रचना का व्यक्ति की मानसिक अवस्था से और उसकी कार्य-प्रणालियों से सीधा सम्बन्ध होता है। इसी प्रकार तन्त्रिका-तन्त्र का और मस्तिष्क की रचना का मानसिक प्रक्रियाओं की प्रकृति और गतिविधियों से सम्बन्ध होता है। शारीरिक रचनाओं में होने वाले परिवर्तन मानसिक प्रक्रियाओं में परिवर्तन उत्पन्न कर देते है और दोनों प्रकार के परिवर्तन मन की व्यवस्था में परिवर्तन ला देते है। शरीर और मन मिलकर मानसिक प्रक्रियाओं का संचालन करते है। उसके विचार में मन और शरीर में समानान्तर सम्बन्ध होता है।

4. **वैज्ञानिक आधार-** टिचनर ने अपने अध्ययन का आधार वैज्ञानिक बनाया। वह मूल रूप से वैज्ञानिक विचारक था और उसकी दार्शनिक मनोविज्ञान में रूचि नहीं थी। अतः संरचनावाद का आधार भी वैज्ञानिक है और वैज्ञानिक पद्धति की वस्तुनिष्ठता के आधार पर ही यह अध्ययन किया गया कि मानसिक दशाओं का एक अनुक्रम है। ये दशाऐं वे होती हैं जिनकी मनुष्य को चेतना होती है। जिस मानसिक दशा की मनुष्य को चेतना नहीं होती, उसका अस्तित्व ही नहीं होता। चूंकि व्यक्ति अपनी मानसिक दशाओं का स्वयं ही अनुभव करता है, अतः मानसिक दशाओं का स्वतन्त्र अस्तित्व होता है और ये दशाऐं व्यक्ति की चेतना में होती है। इस दशाओं के क्रम को मन और चेतना कहते है। इनका अध्ययन अन्तर्दर्शन पद्धति में किया जाता है। यह पद्धति पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है।

5. **अनुभव**-मनोविज्ञान की विषयवस्तु व्यक्ति के अनुभव होते है। उसमें इन्हीं का अध्ययन किया जाता है। ये अनुभव 'कर्ता' पर निर्भर होते हैं। और सदैव व्यक्ति विशेष से सम्बन्धित होते हैं। व्यक्ति ही नहीं होगा तो अनुभव कहां से होंगे?

6. **स्नायुमण्डल -** संरचनावाद में अनुभव के आधार स्नायुमण्डल को माना गया है। स्नायु मण्डल के माध्यम से ही व्यक्ति को अनुभव प्राप्त होते हैं और व्यक्ति के अनुभवों का अध्ययन करने के साथ ही साथ उसके स्नायुमण्डल और मस्तिष्क प्रक्रिया का भी अध्ययन किया जाता है।

7. **मन और चेतना -** मन की व्याख्या करते हुए संरचनावाद में इसे व्यक्ति के जीवनभर में हुए मांनसिक अनुभवों को योग कहा गया है। जीवनभर की मानसिक प्रक्रियाऐं मिलकर मन और किसी समय विशेष की मानसिक क्रियाऐं मिलकर चेतना बनती है। मन और चेतना में यही अन्तर होता है। संरचनावाद में मन और चेतना के स्वरूप का अध्ययन विश्लेषण द्वारा होता है क्योंकि मन और चेतना की संरचना का ज्ञान प्राप्त करने के लिए इनका विश्लेषण अत्यावश्यक है।

8. मन और शरीर - संरचनावाद में मन और शरीर को एक दूसरे के समानान्तर माना गया है। मन के द्वारा शारीरिक परिवर्तन सम्भव नहींहै।शरीर द्वारा कोई मानसिक क्रिया नहीं होती। किन्तु शरीर और मन मिलकर ऐसी व्यवस्था करते हैं जिससे मानसिक क्रियाऐं होती है।

9. ध्यान - ध्यान का अध्ययन चेतना के प्रतिमान के रूप में किया जाता है। ध्यान को चेतना में बनने वाला प्रतिमान कहा गया है। चेतना में अनुभवों का ऐसा प्रतिमान बन जाता है कि व्यक्ति का ध्यान किसी विषय अथवा विचार की ओर आकर्षित हो जाता है।

10. अन्तर्दर्शन विधि - संरचनावादी मनोविज्ञान की अध्ययन पद्धति अर्न्तदर्शन है। टिचनर ने इस पद्धति के बारे में बतलाया है कि वास्तव में यह पद्धति नहीं है एक प्रकार का प्रेक्षण है। संरचनावादी मनोविज्ञान का आधार वैज्ञानिक है। इसलिए इसकी अध्ययन पद्धति प्रेक्षण पर ही आधारित होनी चाहिए। जब व्यक्ति विशेष अपने अनुभवों का प्रेक्षण करता है तो इसे अन्तर्दर्शन कहते है। यह एक ऐसा प्रेक्षण है जिसमें व्यक्ति नियन्त्रित दशा में और एक निश्चित विषय के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करता है। टिचनर के संरचनावाद ने मनोविज्ञान में जो योगदान दिया है वह बहुत महत्वपूर्ण है। प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के विकास में संरचनावाद से बहुत लाभ प्राप्त हुआ।

5.5. अभ्यास प्रश्न

I. टिचनर एक संरचनावादी मनोवैज्ञानिक थे।
(सही/गलत)

II. क्या यह सही क्रम में है:- विलियम वुण्ट - विलियम जेम्स - टिचनर - जान डिवी
(सही/गलत)

III. प्रकार्यवाद व संरचनावाद द्वारा अन्तनिरीक्षण को मनोविज्ञान की एक मुख्य विधि माना गया है। (सही/गलत)

IV. विलियम वुण्ट के अनुसार मनोविज्ञान में तात्कालिक अनुभूति का अध्ययन किया जाता है। (सही/गलत)

V. विलियम वुण्ट के अनुसार जब कई तरह की संवेदनायें आपस में मिल जाती हैं, तो भाव की उत्पत्ति होती है।
(सही/गलत)

VI. टिचनर द्वारा उद्दीपन त्रुटि संप्रत्यय का विकास किया गया।
(सही/गलत)

VII. वुण्ट के योगदानों को 2 भागों में बांटा गया - 1. क्रमबद्ध मनोविज्ञान, 2. प्रयोगात्मक मनोविज्ञान।
(सही/गलत)

VIII. अर्थ का सन्दर्भ सिद्धान्त विलियम वुण्ट द्वारा दिया गया।
(सही/गलत)

IX. संप्रत्यक्षण या आत्म बोध का सिद्धान्त टिचनर द्वारा प्रतिपादित किया गया। (सही/गलत)

X. टिचनर, विलियम वुण्ट के शिष्य थे। (सही/गलत)

5.6. सारांश

- मनोविज्ञान के इतिहास में प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का विकास सबसे अधिक महत्वपूर्ण घटना है।
- विलियम वुण्ट को प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का जनक माना गया है।
- उनके योगदानों को दो भागों में बांटा गया है- 1. वुण्ट का क्रमबद्ध मनोविज्ञान 2. एक प्रयोगकर्ता के रूप में वुण्ट का योगदान।
- उन्होंने संवेदन, प्रत्यक्षण, प्रतिक्रिया, समय, साहचर्य, भाव प्रयोग एवं मनोभौतिकी पर महत्वपूर्ण प्रयोग किये।
- वुण्ट ने प्रत्ययों व विचारों को उनके गुणों के आधार पर वर्गीकृत किया। उनके अनुसार विचार तीन प्रकार के होते है- 1. गहन विचार 2. देश विचार 3. कालगत विचार।
- टिचनर, विलियम वुण्ट के शिष्य थे, उन्होंने संरचनावाद की स्थापना की।
- टिचनर ने भी वुण्ट की तरह चेतन तत्वों का विश्लेषण किया।
- उनके अनुसार चेतन के तीन मूल तत्व होते हैं- 1. संवेदन 2. प्रतिमा. 3. भाव।
- 1915 में टिचनर ने ' अर्थ का सिद्धान्त ' प्रतिपादित किया।
- वुण्ट तथा टिचनर दोनों ने ही मनोविज्ञान के स्वरूप को प्रयोगात्मक बनाने की दिशा मंे सराहनीय प्रयास किये।

5.7. शब्दावली

अन्तदर्शन विधि - इसका अर्थ होता है अन्दर का निरीक्षण । जब कोई व्यक्ति अपने भीतर की अनुभूतियों का निरीक्षण स्वंय करता है।

प्रयोगात्मक विधि- इस विधि द्वारा व्यवहार एवं मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन नियंत्रित अवस्था में किया जाता है।

ज्ञानेन्द्रियां - ये वातावरण से उत्तेजनाओं को ग्रहण करती है और वातावरण एवं शरीर के भीतर होने वाले परिवर्तन का ज्ञान कराती है।

रेटिना - मानव नेत्र की महत्वपूर्ण रचना है। इसमें दण्ड एवं शंकु पाये जाते हैं जो कि, प्रकाश व अन्धकार में देखने के लिये जिम्मेदार होते हैं।

तंत्रिका तंत्र - ये एक जटिल संरचना होती है जो शारीरिक प्रक्रिया को नियंत्रित तथा नियमित करती है।

5.8. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

I. सही
II. गलत
III. सही
IV. सही
V. गलत
VI. सही
VII. सही
VIII. गलत
IX. गलत
X. सही

5.9. निबंधात्मक प्रश्न

I. एक क्रमबद्ध मनोवैज्ञानी के रूप में विलयम वुण्ट के योगदानों को बताइये।
II. एक प्रयोगकर्ता के रूप में विलियम वुण्ट के योगदानों को बताइये।
III. टिचनर द्वारा प्रतिपादित संरचनावाद के प्रमुख योगदानों का वर्णन करिये।
IV. वुण्ट तथा टिचनर का तुलनात्मक अध्ययन करिये।

5.10. सन्दर्भ पुस्तकें

1. अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह - मनोविज्ञान के संप्रदाय एवं इतिहास दृ मोतीलाल बनारसी दास
2. डॉ0 आर0के0ओझा- मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं संप्रदाय . विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. के0एन0शर्मा - मनोवैज्ञानिक विचारधारायें . हर प्रसाद भार्गव, आगरा ।

इकाई- 6 विलियम जेम्स एवं इविंगहॉस का मनोविज्ञान में योगदान (Contribution of William James and Ebbinghaus in Psychology)

इकाई की रूपरेखा

6.0 प्रस्तावना

6.1 उद्देश्य

6.2 विलियम जेम्स

6.2.1. विलियम जेम्स का योगदान

6.3. हरमान एबिंहास

6.3.1. हरमान एबिंगहास का योगदान

6.4 अभ्यास प्रश्न

6.5 सारांश

6.6 शब्दावली

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.8 निबन्धात्मक प्रश्न

6.9 संदर्भ पुस्तकें

6.0 प्रस्तावना

उन्नसवी सदी के अन्तिम वर्षों में अमेरिका में दो चलन प्रचलित हुवे जो बीसवीं सदी के प्रारम्भ तक चले। इसमें एक टिचनर का संरचनावाद था। जिसे आप इससे पूर्व की इकाई में जान चुके हैं। दूसरा था विलियम जेम्स का प्रकार्यवाद। प्रकार्यवाद की शुरूआत संरचनावाद के विपरीत एक क्रान्ति के रूप में हुई। विलियम जेम्स प्रकार्यवाद के जन्मदाता रहे। प्रकार्यवाद का मुख्य उद्देश्य अमेरीका में टिचनर एवं विलियम वुण्ट के प्रभुत्व को समाप्त करना था। प्रकार्यवाद के अन्तर्गत मानसिक क्रियाओं के कार्य और प्राकृतिक वातावरण में इन मानसिक क्रियाओं का अध्ययन आता है।

एबिंगहास ने जर्मनी में उच्चतर मानसिक प्रक्रिया जैसे-स्मृति का अध्ययन किया। उन्होंने स्मृति के क्षेत्र में अनेक अध्ययन कार्य किये। स्मृति के मापन में उन्होंने फेकनर की विधि का प्रयोग किया। स्मृति के क्षेत्र में उन्होंने क्रान्तिकारी परिवर्तन किये। साहचर्यवादियों द्वारा साहचर्य के नियमों की व्याख्या की गई थी, परन्तु एबिंगहास ने उन नियमों की जांच प्रयोगात्मक ढंग से की। विलियम

वुण्ट की तरह ही एबिंगहास का योगदान प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के क्षेत्र में रहा है। प्रस्तुत इकाई में आप विलियम जेम्स तथा एबिंगहास के योगदानों का विस्तृत रूप से अध्ययन कर सकेंगे।

6.1 उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत हम निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति कर सकेंगेः-

i. मनोविज्ञान में विलियम जेम्स के योगदानों को जान सकेंगे
ii. मनोविज्ञान में एबिंगहास के योगदानों को जान सकेंगे

6.2 विलियम जेम्स

विलियम जेम्स का जन्म सन् 1842 में हुआ। उसके पिता का नाम हेनरी जेम्स था। इनके परिवार में अध्ययनशीलता परम्परागत रूप से ही थी, अतः विलियम जेम्स के बौद्धिक विकास की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया। विलियम को अंग्रेजी, फ्रेंच व जर्मन भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान हो गया। विलियम जेम्स ने अध्ययन को अपना व्यवसाय चुना। विलियम जेम्स का जन्म एक धनी परिवार में हुआ था। धनवान होने के साथ-साथ वह परिवार शिक्षित था। विलियम जेम्स को अमेरिका में आधुनिक मनोविज्ञान को आरम्भ करने का श्रेय जाता है। जेम्स पहले मनोविज्ञानी है, जिन्होंने अमेरिका के नवीन एवं आधुनिक मनोविज्ञान की नींव डाली। विलियम जेम्स ने शरीर विज्ञान और चिकित्साशास्त्र का अध्ययन किया था इसलिए मनोविज्ञान को वैज्ञानिक दृष्टि से समझने में उन्हें बहुत सहायता मिली। विलियम जेम्स का नाम मनोविज्ञान के इतिहास में प्रसिद्ध है। अमेरिका में नवीन मनोविज्ञान का उन्हें संस्थापक कहा जाता है। जिस प्रकार वुण्ट ने जर्मनी में मनोविज्ञान की प्रथम प्रयोगशाला की स्थापना की उसी प्रकार विलियम जेम्स ने अमेरिका में मनोविज्ञान की सर्वप्रथम प्रयोगशाला की स्थापना की।

6.2.1 विलियम जेम्स का योगदान -

विलियम जेम्स ने चेतना, आत्मा, और बौद्धिक प्रक्रिया, तीनों का विस्तृत अध्ययन किया। मनोविज्ञान में विलियम जेम्स के योगदान का विवरण निम्नलिखित हैः-

1. **चेतना की व्याख्या-** मनोविज्ञान में चेतना-प्रवाह का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। मनोविज्ञान का अध्ययन तुरन्त हुए अनुभव से किया जा सकता है, न कि आत्मा या मस्तिष्क से। विलयम जेम्स के अनुसार मनोविज्ञान का प्रारम्भिक बिन्दु तुरन्त हुआ अनुभव ही है। इसी से चेतना का अध्ययन किया जा सकता है। चेतना निरन्तर एक प्रवाह के रूप में चलती है। विलियम जेम्स के अनुसार चेतना की निम्नलिखित विशेषताऐं है।

i. **यह वैयक्तिक होती है-** विलियम जेम्स के अनुसार चेतना की मुख्य विशेषता उसका वैयक्तिक होना है। चेतना के अध्ययन के लिए उसे व्यक्ति विशेष से अलग नहीं किया जा सकता। वास्तव में, व्यक्ति के बिना तो चेतना का अस्तित्व ही नहीं है। चेतना विचारों को

कहते हैं और विचार व्यक्ति से अलग नहीं हो सकते। अतः चेतना का अध्ययन किसी व्यक्ति विशेष के विचारांे पर ही आधारित हो सकता है।

ii. **यह परिवर्तनशील होती है-** विलियम जेम्स के अनुसार चेतना की दूसरी विशेषता परिवर्तनशीलता हैं। विचार अपने पूर्व-विचारों की तरह नहीं होते । चेतना सम्बन्धी विचारों का परिवर्तन होता रहता है, पर चेतना-प्रवाह स्थिर रहता है। कोई भी भौतिक अनुभव बिल्कुल उसी रूप में दुबारा नहीं हो सकता। इसी तरह विचारों में भी समानता नहीं होती, यदि कोई दो विचार बिलकुल समान हैं पर उनमें पूर्ण रूप से समानता असम्भव है।

iii. **यह निरन्तर होती है-**चेतना की तीसरी विशेषता निरन्तरता है। चेतना सदैव एक प्रवाह के रूप में होती है और यह कभी भी खण्डित नहीं हो सकती तथा न ही इसमें किसी प्रकार की रूकावट ही आ सकती है। चेतना के विभिन्न भागों में गति का अन्तर होने के कारण कई बार चेतना-प्रवाह छूटता हुआ अनुभव होता है, परन्तु वास्तव में यह बिलकुल एक सरिता की तरह निरन्तर होता है।

iv. **यह किसी विषय से सम्बन्धित होती है-** विलियम जेम्स के अनुसार चेतना बाह्य विषयों या वस्तुओं की ओर आकर्षित होती है और यह कभी भी स्वयं में लीन नहीं हो सकती । इसके लिए किसी विषय का होना आवश्यक होता है।

v. **यह चयन करती है**- विलियम जेम्स के अनुसार चेतना की पांचवीं विशेषता यह है कि यह चयन करती है। बहुत से विषयों में से चेतना उन्हीं को चुनती है जिनकी आवश्यकता होती है, असम्बन्धित विषय सदैव छोड दिये जाते हैं।

2.आत्मा का स्वरूप - विलियम जेम्स ने आत्मा के तीन रूपों का वर्णन किया है। ये तीनों रूप हैं

i. **भौतिक आत्मा-**विलियम जेम्स ने भौतिक आत्मा को मुख्य भाग शरीर को माना है और शरीर व वस्त्रों के सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए उसने भौतिक आत्मा में वस्त्रों को भी सम्मिलित कर लिया है। व्यक्ति जिन भौतिक वस्तुओं के सम्पर्क में रहता है, वे उसकी आत्मा का अंश बन जाती है। घर या पूर्ण सुसज्जित निवास व्यक्ति को सुख प्रदान करता है। इससे उसके अन्दर सुन्दर तथा सुखद भावनाऐं जन्म लेती है। अर्थात वह सभी आवश्यकताऐं जो शारीरिक सुख प्रदान करती हैं भौतिक आत्मा का अंग होती है।

ii. **सामाजिक आत्मा-** विलियम जेम्स के अनुसार सामाजिक आत्मा व्यक्ति के सामाजिक सम्बन्धों पर निर्भर होती है। किसी व्यक्ति के जितने अधिक सामाजिक सम्बन्ध होंगें, उसकी उतनी ही अधिक सामाजिक आत्माऐं होंगी। प्रेम सामाजिक आत्मा का एक महत्वपूर्ण भाग होता है। सामाजिक आत्मा का सम्बन्ध व्यक्ति के सामाजिक सम्बन्धों से होता हैं। उनके अनुसार सामाजिक आत्मा का विकास व्यक्ति की सामाजिक

अन्तःक्रियाओं पर आधारित होता है अर्थात व्यक्ति का सामाजिक जीवन एंव सामाजिक सम्बन्ध उसकी सामाजिक आत्मा का अंग होते हैं। एक व्यक्ति के मन में दूसरे व्यक्ति के लिए क्या विचार हैं, यह सामजिक आत्मा है। प्रेम सम्बन्धों से जब सुख मिलता है तो मन को संतोष मिलता है और उससे निराशा मिलती है तो मन को कष्ट होता है। इस प्रकार यश, सम्मान, आदर आदि से सामाजिक आत्मा का विकास होता है।

iii. **आध्यात्मिक आत्मा-**आत्मा का तीसरा रूप आध्यात्मिक होता है। आध्यात्मिक आत्मा व्यक्ति की आत्मा का एक भाग है जिसका कार्य बौद्धिक और भावात्मक है। अपने बारे में चिन्तन करना भी आध्यात्मिक आत्मा का एक महत्वपूर्ण पहलू है।आध्यात्मिक आत्मा के विषय में जेम्स कहते हैं कि आत्मा अनुभव मूलक होती है। इसका सम्बन्ध चेतना की सभी दशाओं, मानसिक शक्तियों और सम्पूर्ण संग्रहित गुणों से होता है।

3. **संवेग व अनुभूति-** विलियम जेम्स ने संवेग का अध्ययन करते हुए उसकी उत्पत्ति के विषय में यह बतलाया है कि बाह्य उद्दीपन द्वारा शरीर में परिवर्तन की क्रियाऐं होती है और इनके फलस्वरूप भाव उत्पन्न होते हैं। अतः भावों का आधार शारीरिक होता है। उन्होंने 1884 में संवेग सिद्धान्त प्रतिपादित किया। उनके सिद्धान्तों में सबसे अधिक प्रसिद्ध सिद्धान्त संवेग का है। संवेग के विषय में उन्होंने यह विचार व्यक्त किया कि बाह्य उदीपक के कारण मनुष्य के अन्दर शारीरिक परिवर्तन होते हैं और शरीर में होने वाली परिवर्तन क्रियाओं के कारण संवेग उत्पन्न होते है। हम एक शेर को देखते है, शेर के देखते ही भागते हैं, इसके बाद हमें डर लगता है। शेर बाह्य उद्दीपक है, भागने के लिए शारीरिक क्रियाऐं करनी पडी जो शारीरिक परिवर्तन है। भय लगा, यह संवेग है। अर्थात शेर के देखते ही हम अपनी जान बचाने के लिए भागते हैं। भागने के कारण हमारे मन में भय उत्पन्न होता है। संवेग में शारीरिक परिवर्तन उनकी अनुभूति के कारण होते हैं न कि संवेग के कारण, संवेग तो परिणाम है। शारीरिक परिवर्तन इतने साधारण नही होते, वे सम्पूर्ण परिस्थिति पर निर्भर करते हैं। यदि शेर छूटा हुआ है, और हम अकेले हैं तो हमें भय का संवेग होगा और यदि वह पिंजरे में बन्द है, या हमारे पास बन्दूक हो और हम पेड पर हों तो संवेग नहीं होगा। संवेग आकस्मिक परिस्थिति के कारण उत्पन्न होता है। उससे क्रिया होती है। बाद में मस्तिष्क में संवेग की अनुभूति होती है ।

परिस्थिति ——————→ क्रिया ——————→ संवेग

4. **मनोवैज्ञानिक विधियां -** मनोविज्ञान में अनुसन्धान की विधियों में से विलियम जेम्स ने अन्तर्दर्शन की विधि को सर्वप्रथम मानाहै।उसके अनुसार मनोवैज्ञानिक विधियों में यह सरल विधि है। जेम्स के अनुसार अन्तर्दर्शन वह प्राकृतिक क्रिया है जो प्रत्येक क्षण को पकड लेती है। विलियम जेम्स स्वयं तो प्रयोगवादी नहीं थे किन्तु मनोविज्ञान की प्रयोगवादी विधि में विश्वास रखते थे। इसके अतिरिक्त उसने तुलनात्मक विधि में अन्तर्दर्शन व प्रयोगवादी दोनों विधियों को पूरक माना है।

5. **चेतना** का विश्लेषण- जेम्स के विचार में चेतना को विभाजित नहीं किया जा सकता है। यह तो केवल एक प्रकार का विचार का स्रोत होती है जो जीवन भर प्रवाहित होती रहती है। यह एक नदी की धारा के समान निरन्तर बहती रहती है। चेतना की दूसरी विशेषता यह होती है कि यह परिवर्तनशील होती है। वह कहते हैं कि चेतना नदी के बहते जल के समान है, जिस प्रकार पानी बदलता रहता है, उसी प्रकार चेतना में भी परिवर्तन होते रहेते हैं। मनुष्य की भावनाओं और विचारों में समानता हो सकती है, किन्तु एक से नही हो सकते है। चेतना की तीसरी विशेषता निरन्तरता होती है। जिस प्रकार नदी निर्रन्तर बहती रहती है, उसी प्रकार मनुष्य की चेतना एक क्षण के लिए भी नहीं रूकतीहै।चेतना का सम्बन्ध किसी वस्तु या विषय से होता है।

6. **मन का विश्लेषण-** उनका विचार है कि सभी मानसिक प्रक्रियाऐं अपने आप होती है और इनमें एक प्रकार का प्रवाह बना रहता है। विचारों की प्रक्रिया में भी एक प्रकार का प्रवाह चलता रहता है। विचारों में तन्त्रिका तन्त्र के महत्व को समझाते हुए वह कहते हैं कि तन्त्रिका तन्त्र की क्रियाओं में भी निरन्तर प्रवाह बना रहता है। चेतना के अध्ययन के लिए मन का अध्ययन करना आवश्यक है।

7. **संकल्प या इच्छाशक्ति का सिद्धान्त-** जेम्स ने बतलाया कि संकल्प शक्ति का सम्बन्ध विचारों से होता है। पहले मनुष्य के मन में विचार बनते है और उसके बाद वह उन्हें कार्य रूप में लाने का प्रयास करता है। जेम्स ने संकल्पशक्ति का आधार शरीर को नही बल्कि विचारों को माना है। जितने मजबूत विचार व्यक्ति में बनेंगे उतनी ही मजबूत संकल्पशक्ति होगी। अपने विचारों के कारण वह कार्य करने के लिये प्रेरित होता है। प्रेरणा उसमें इच्छाशक्ति का विकास करती है। संकल्प शक्ति के साथ-साथ उन्होंने निर्णय करने की योग्यता को भी बताया। उन्होंने निर्णय के पांच रूप बताये-

i. सबसे पहले व्यक्ति तर्क द्वारा निर्णय लेता है।
ii. दुविधा में पड़ा हुआ व्यक्ति शीघ्र निर्णय लेना चाहता है ताकि उसे दुविधा की स्थिति से तुरन्त छुटकारा मिल सके।
iii. आकस्मिक स्थिति में उसे अन्दर से शक्ति मिलती है और वह शीघ्र निर्णय लेता है।
iv. जब अनुभव के आन्तरिक परिवर्तन के कारण मूल्यों या प्रेरणाओं का मानदण्ड बदल जाता है तब निर्णय लिया जाता है।
v. व्यक्ति सोच-विचार करके निर्णय लेता है और यह विश्वास कर लेता है कि उसने जो निर्णय लिया है, वह ठीक है।

8. स्मृति से सम्बन्धित विचार- विलियम जेम्स का यह विचार था कि स्मृति का आधार धारण क्षमता होती है। धारण क्षमता को जेम्स ने मस्तिष्क संरचना से सम्बन्धित माना है। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में मस्तिष्क संरचना एक समान होते हुए भी धारण क्षमता अलग-अलग होतीहै।धारण क्षमता को प्रशिक्षण के द्वारा विकसित नहीं किया जा सकता है। एक सामग्री को

सीखने में जो अभ्यास किया जाताहै।वह दूसरे प्रकार की सामग्री के याद करने में भी सहायक नहीं हो सकता है।

9. **संज्ञान-** संज्ञान को जेम्स मन का प्राथमिक कार्य समझते थे। संवेदनाऐं भी संज्ञानात्मक होती हैं। संवेदना में वस्तुऐं तथा गुण होते हैं, और उनका कार्य जानना होता है। मन का कार्य ज्ञान प्राप्त करना होता है जिसमें प्रत्यक्ष ज्ञान या बाह्य वस्तु जगत ज्ञान ही प्रमुख है। इस प्रकार सम्पूर्ण ज्ञान में उनके अनुसार व्यक्ति, तन्त्रिका तन्त्र व जगत सभी सम्मिलित थे।

6.3 हरमान एविंगहांस

इविंगहास का जन्म 1850 ई0 में हुआ था। उन्होंने उच्चतर मानसिक प्रक्रिया जैसे स्मृति के ऊपर बहुत अध्ययन किये। जर्मनी में एबिंगहौस का स्थान उसी प्रकार माना जाता है जैसे अमेरिका में विलयिम जेम्स का । वे सृजनात्मक व्यक्ति थे। उनका स्मृति पर कार्य अनोखा था। इसी कारण वे स्मृति व अधिगम के क्षेत्र में सबसे अधिक माने जाते हैं। उनके सिद्धान्त के बिना अधिगम व स्मृति अध्ययन अधूरा ही माना जाता है। स्मृति के क्षेत्र में उन्होंने अनेकों प्रयोग किये और मनोविज्ञान को नयी दिशा दी।

6.3.1 हरमन एबिंगहौस के योगदान

स्मृति व अधिगम-स्मृति के क्षेत्र में इविंगहास ने बहुत अध्ययन एवं प्रयोग किये। उन्होंने भौतिकी से सांख्यिकी विधि को लेकर उसका प्रयोग मनोविज्ञान में प्रेक्षणों की परिशुद्धता जांच करने के लिए किया। इस विधि द्वारा औसत से प्रेक्षणों में होने वाले परिवर्तनशीलता के आधार पर प्रेक्षणों की परिशुद्धता की माप की जाती है। इस विधि द्वारा आवृत्त प्रेक्षणों में होने वाले परिवर्त्य त्रुटि अपने आप दूर हो जाती है। उन्होंने प्राप्त आंकडों में गुणात्मक परिवर्त्य चर को शब्दों की जगह पर निरर्थक पद का उपयोग करके दूर किया। उनके अनुसार शब्दों को सीखने की सूची में शामिल किया जाता है, तो ऐसा संभव है कि शब्द का पिछले साहचर्य के कारण उसे सीखना व्यक्ति के लिए आसान हो। इसके जगह पर उन्होंने निरर्थक पद उपयोग किया। निरर्थक पद तीन अक्षरों का अर्थहीन पद होता है जिसके बीच में स्वर तथा अलग-अलग व्यंजन होते है। जैसेर्-न्ठए ज्ञाच् आदि। इविंगहांस ने ऐसे 2000 निरर्थक पदों को बनाया। ऐसे पदों की कठिनाई स्तर समान होती है। इसीलिये इस पर आधारित प्रयोगों को मनचाहा बार दोहराया जा सकता है तथा एक औसत परिणाम प्राप्त किया जा सकता है। उन्होंने स्वंय अपने ऊपर प्रयोग करके पाया कि वे एक प्रयास में करीब 7 पदों तक प्रत्याह्वान कर सकते हैं। उन्होंने सीखने की विधि का भी प्रतिपादन किया। जिसमें उन्होंने ये बताया कि कितने निरर्थक पदों को याद करने के लिए कितने प्रयासों या उसे कितने बार दोहराने की आवश्यकता होती है। उन्होंने पाया कि 12 निरर्थक पदों के लिए 15 प्रयास या आवर्तन की तथा 30 निरर्थक पदों के लिए 50 आवर्तन की आवश्यकता होती है। एबिंगहौस ने मनोभौतिकी विधियों को अपनाकर स्मृति पर प्रयोग किये। स्मृति में पुनरावृत्ति के महत्व को उन्होंने प्रयोग द्वारा समझाया। वे साहचर्य को स्मृति में आवश्यक मानते थे अर्थात स्मृति साहचर्य

द्वारा ही होती है। किसी भी वस्तु को जब हम दूसरी से जोड देते हैं तो वह जल्दी याद हो जाती हैं। साहचर्य द्वारा ही किसी वस्तु या अनुभव को हम आसानी से समझ सकते हैं तथा उसका अर्थ ग्रहण कर सकते हैं। एबिंगहौस ने भिन्न-भिन्न लम्बाई के अर्थहीन पद तैयार किये, जैसे- तीन, चार, पांच आदि अक्षरों के, तथा उनकी विभिन्न लम्बाईयों की सूचियां तैयार की, जैसे- आठ, दस, बारह, सोलह पदों की सूची। प्रयोग करके उन्होंने प्रत्येक सूची का स्मरण समय भी ज्ञात किया। उससे यही निष्कर्ष निकाला कि जैसे-जैसे अक्षरों की पदों की संख्या बढती है या पदों की संख्या बढती है, स्मरण समय भी बढता जाता है। इसलिये अधिक सामग्री को अधिक समय तक याद नहीं रखा जा सकता। इसके लिये पुनरावृत्ति की आवश्यकता हो जाती है। अधिगम में एबिंगहौस ने बचत प्रणाली भी दी। उन्होंने प्रयोगों द्वारा ये बताया कि एक बार याद की गई सामग्री को किसी विशेष समय बाद कितना याद रखा जा सकता है। उसके बाद पुनरावृत्ति कराके स्मृति व धारणा के सम्बन्ध को ज्ञात किया। एबिंगहौस ने अधिगम के लिये नई-नई विधियां खोजने का प्रयास किया जिससे अच्छी अधिगम विधि का पता लगाया जा सके। एबिंगहौस ने विस्मरण वक्र को भी बताया जो आज भी बडा प्रमुख है। यदि किसी याद की हुई वस्तु को दुहरायें नहीं तो भूलने लगते हैं। ये भूलने का प्रतिशत निम्न प्रकार से होता है-

समय	**विस्मरण % में**
1/2 घंटा	42
1 घंटा	55
8 घंटा	65
1 दिन	68
2 दिन	72
3 दिन	75
30 दिन	80

आधे घण्टे में 42 प्रतिशत, एक घण्टे में 55 प्रतिशत, आठ घण्टे में 65 प्रतिशत, एक दिन में 68 प्रतिशत, दो दिन में 72 प्रतिशत, तीन दिन में 75 प्रतिशत, तीस दिन में 80 प्रतिशत विस्मरण होता है। इसी के अनुसार उन्होंने अर्थहीन पद, विस्मरण व काल(समय) में सम्बन्ध ज्ञात किया।

२.प्रकाश व दृष्टि- सन् 1890 से एबिंगहौस ने प्रकाश तीव्रता तथा दृष्टि पर भी प्रयोग किये, जिनमें वेबर के नियम का प्रयोग किया। सन् 1893 में उन्होंने रंग दृष्टि सिद्धान्त प्रतिपादित किया।

3.बुद्धि- शिक्षा के क्षेत्र में भी एबिंगहौस का योगदान रहा। विद्यार्थियों की बुद्धि मापन का भी परीक्षण उन्होंने तैयार किया, जिसे पूर्णन परीक्षण' कहा गया है। इसके द्वारा विभिन्न बालकों को

पढने के लिए समय निश्चित करना था। इसके अनुसार पहले बालकों की मानसिक क्षमता ज्ञात की जाती थी, फिर उन्हें सलाह दी जाती थी कि वे कितने घण्टे पढें। इस परीक्षण में बालक को कोई पद्य या गद्य का टुकडा दिया जाता था, तथा बीच-बीच में उसमें से कई अक्षर व शब्द भरने होते थे।

6.4 अभ्यास प्रश्न

1. प्रकार्यवाद की स्थापना में विलियम जेम्स का महत्वपूर्ण योगदान है।
(सही/गलत)

2. एबिंगहास ने स्मृति से सम्बन्धित कई कार्य किये।
(सही/गलत)

3. व्यवहारवाद को अमेरिकन मनोविज्ञान का प्रथम सुस्पष्ट एवं संगठित स्कूल माना है। (सही/गलत)

4. टिचनर को नवीन साहचर्यवादी के रूप में जाना जाता है।
(सही/गलत)

5. विलियम जेम्स द्वारा अमेरिकन साइको लाजिकल एसोसियेशन की स्थापना की गई। (सही/गलत)

6. जेम्स के अनुसार - मनोविज्ञान मानसिक जिन्दगी की घटना तथा अवस्थाओं दोनों का ही विज्ञान है। (सही/गलत)

6.5 सारांश

- विलियम जेम्स ने दर्शन, मनोविज्ञान, शरीर विज्ञान आदि अनेक विषयों पर अध्ययन एवं अध्यापन कार्य किया।
- उन्होंने चेतना, आत्मा व बौद्धिक प्रक्रिया का विस्तृत विश्लेषण किया। ?
- जेम्स को प्रकार्यवाद का अग्रदूत माना गया है। उनके योगदानों में 'उपयोगितावाद' पर अधिक बल डाला गया है।
- उनके योगदानों में चेतन सरिता को सबसे अधिक महत्व दिया गया है।
- आत्मा के तीन रूप है- भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक।
- उनका संवेग सम्बन्धी सिद्धान्त ' जेम्स-लांजे ' सिद्धान्त के रूप में प्रसिद्ध है।
- हरमन एबिंगहास ने उच्चतर मानसिक प्रक्रिया अर्थात स्मृति पर कई अध्ययन किये।

- 1885 में उनकी प्रसिद्ध पुस्तक' ऑन मैमोरी ' प्रकाशित हुई।
- उनके द्वारा स्मृति-विचार का मापन और सीखने की विधि का भी प्रतिपादन किया गया।

6.6 शब्दावली

1. अन्तर्दर्शन विधि - इसका अर्थ है आन्तरिक निरीक्षण । जब कोई व्यक्ति अपने भीतर की अनुभूतियों का स्वंय निरीक्षण करता है।

2. तंत्रिका तंत्र - एक जटिल संरचना होती है जो शारीरिक प्रक्रिया को नियंत्रित तथा नियमित करती है।

3. धारण - यह स्मृति का धनात्मक पक्ष है। जब मस्तिष्क में कोई भी सामग्री संचित होती है तो उसे धारण कहते हैं।

4. अधिगम - अधिगम का अर्थ 'सीखना' है। इसके द्वारा जीव नई प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करता है।

5. साहचर्य - इसका अर्थ सम्बन्ध या संयोजन से है। साहचर्य के द्वारा व्यक्ति के विचार, भावनायें आपस में सम्बन्धित हो जाते हैं।

6.7 अभ्यास प्रश्न के उत्तर

I. सही
II. सही
III. गलत
IV. गलत
V. सही
VI. सही

6.8 निबंधात्मक प्रश्न

I. विलियम जेम्स के योगदानों का वर्णन करिये।
II. चेतना सरिता से विलियम जेम्स का क्या तात्पर्य था ? जेम्स के महत्व के कारणों पर प्रकाश डालिये।
III. एक मनोविज्ञानी के रूप में एबिंगहास के योगदानों का वर्णन करिये।

6.9 सन्दर्भ पुस्तकें

1. डॉ0 रामपाल सिंह वर्मा -मनोविज्ञान के सम्प्रदाय-विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
2. डॉ0 राजकुमार ओझा -मनोविज्ञान के सम्प्रदाय-विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह-मनोविज्ञान के संप्रदाय एवं इतिहास मोतीलाल ` बनारसी दास
4. डॉ0 आर0के0ओझा-मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं संप्रदाय. विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. के0एन0शर्मा -मनोवैज्ञानिक विचारधारायें. हर प्रसाद भार्गव, आगरा।

इकाई-7 मनोविश्लेषण: नव-फ्रायडवाद (एडलर, युग, हॉर्नी) (Psychoanalysis: Neo Freudian-Adler, Jung, Horney)

इकाई की संरचना

7.0 प्रस्तावना

7.1 उद्देश्य

7.2 फॉयड और मनोविष्लेषणवाद

7.3 स्वप्न का सिद्धान्त

7.4 मनोयौनिक सिद्धान्त

7.5 अन्य क्षेत्रों में मनोविष्लेषणवाद का योगदान

7.6 वैयक्तिक मनोविज्ञान

7.7 विष्लेषणात्मक मनोविज्ञान

7.8 मनोविष्लेषण में नवीन प्रवृत्तियाँ

7.9 **सारांश**

7.10 मूल्यांकन प्रश्न

7.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 प्रस्तावना

सिगमण्ड फ्रॉयड (Sigmund Freud 1856-1939)

सिंगमण्ड फॉयड का जन्म सन् 1856 में मुरबिया नामक स्थान में एक यहूदी परिवार में हुआ था। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त करने के बाद उसने इटली के वियना नगर में जाकर चिकित्साशास्त्र का अध्ययन आरम्भ किया। यहीं उसका सम्पर्क प्रसिद्ध चिकित्सक अर्नेस्ट बुरक से हुआ जिसने फ्रॉयड को चिकित्साशास्त्र के अध्यन में विशेष सहायता प्रदान की। सन् 1884 में फ्रॉयड ने एक स्थानीय अस्पताल में सहायक चिकित्सक के पद पर कार्य करना स्वीकार किया और इसी पद पर कार्य करते हुए अपने अनुसन्धान द्वारा उसने पता लगाया कि कोकीन के इन्जेक्शन द्वारा शरीर के किसी अंग को पीड़ा-विहीन बनाया जा सकता है। फ्रॉयड की इस खोज से ऑपरेशन इत्यादि में होने वाली भयानक पीड़ा से रोगियों को मुक्ति मिली। चिकित्सा के इतिहास में इस अनुसन्धान का

विशेष महत्व है। अगले ही वर्ष अर्थात् सन् 1885 में फ्रॉयड पेरिस चला गया और यहाँ उसने प्रोफेसर शार्को निर्देशन में स्नायुमण्डल सम्बन्धी अध्ययन किया।

फ्रॉयड ने मनोविज्ञान में मनोविश्लेषणवाद का सूत्रपात और उसका विकास किया। उसने मनोविश्लेषण विधि के द्वारा रोगियों की चिकित्सा की और साथ ही साथ अपने मनोविश्लेषण सम्बन्धी विचारों को लेखों तथा पुस्तकों के रूप में प्रकाशित भी किया। फलस्वरूप, धीरे-धीरे उसकी प्रसिद्धि होने लगी और बहुत से नवयुवक उसके पास शिक्षा के लिए आने लगे जिनमें से एडलर और स्टीक्रेल विशेष प्रसिद्ध है। सन् 1908 में फ्रॉयड के मनोविश्लेषणवाद के सिद्धान्तों के प्रसार के लिए एक विधिवत् आन्दोलन का सूत्रपात हुआ और अमेरीका में भी फ्रॉयड के कार्यों व सिद्धान्तों की चर्चा होने लगी। फ्रॉयड ने मनोविज्ञान में अपने मनोविश्लेषणवाद से जो अंशदान दिया है वह मनोविज्ञान के इतिहास में अमर है।

अन्य मनोविष्लेषणवादी मनोवैज्ञानिक

19वी शताब्दी के बाद मध्य यूरोप में और 1911 के बाद संसार भर में फ्रॉयड के शिष्य बिखरे हुए थे। इनमें दो मनोवैज्ञानिक बड़े प्रसिद्ध हुए- युंग और एडलर बाद में अनेक बातों को लेकर इनका फ्रॉयड से मतभेद हो गया और इन्होंने अपने को मनोविश्लेषणवाद से पृथक कर लिया। मनोविश्लेषणवाद में कुछ अन्य वैज्ञानिकों ने भी महत्वपूर्ण बातों की खोज की। इसमें उल्लेखनीय है अब्राहम, फैंरेजी, अलेक्जैण्डर, ड्यूश, राइक, हार्नी, एरिक फ्रॉम, अन्ना फ्रॉयड इत्यादि । संयुक्त राष्ट्र अमेरीका में स्टेनली हाल ने मनोविश्लेषणवाद का विशेष प्रचार किया। न्यूयार्क के चिकित्सक ए.ए. ब्रिल ने भी अमरीका में मनोविश्लेषणवाद के प्रचार में विशेष योगदान दिया। इंग्लैंण्ड में मनोविश्लेषणवादी विचारों का प्रचार करने में अर्नेस्ट जोन्स प्रमुख था। आज संसार में सब कहीं मनोविश्लेषणवादी फैले हुए हैं। मानसिक चिकित्सा के क्षेत्र में तो लगभग प्रत्येक चिकित्सक मनोविश्लेषणवादी ही होता है। अन्तर्राष्ट्रीय मनोविश्लेणवादी सोसाइटी से लगी हुई संस्थाएँ संसार में सब कहीं बिखरी हुई है। अनेक पत्र-पत्रिकाएँ विशेष रूप से मनोविश्लेषणवादी लेखों को ही प्रकाशित करती हैं।

मनोविज्ञान के तीन रूप

मनोविश्लेषण तीन रूपों में देखा जा सकता है। एक तो वह मनुष्य के चेतन और अचेतन मानसिक जीवन के गतिशास्त्र में खोज करने की एक विधि है। दूसरे, यह एक प्रकार की मानसिक चिकित्सा है। इससे असामान्य व्यक्तियों और मानसिक रोगियों को फिर से सामान्य बनाने और सामान्य लोगों को अपने जीवन को बेहतर और अधिक सुखी बनाने में सहायता मिलती है। तीसरे, यह मनोविज्ञान में एक विशेष मत अथवा सम्प्रदाय भी है। इसमें विशेष दृष्टिकोण से व्यवस्थित मनोविज्ञान उपस्थित किया गया है। इसमें मानव की चेतन प्रक्रियाओं का ही नहीं बल्कि विशेष रूप से अचेतन प्रक्रियाओं का विश्लेषण किया है।

7.1 उद्देष्य

- इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप
- फ्रॉयड का मनोविश्लेषणवाद क्या है आप जान पायेंगे।
- युंग और एडलर के विचारों से अवगत हो पायेंगे।
- मनोविश्लेषण में किन-किन मनोवैज्ञानिकों ने नवीन प्रवृत्तियाँ दी हैं, जान पायेंगे।
- नव विश्लेषणवाद फ्रॉयड के मनोविश्लेषण से कितना अलग है बता पायेंगे।

7.2 फ्रॉयड और मनोविष्लेषणवाद

- **अचेतन:**व्यक्तित्व में फ्रॉयड ने अचेतन की प्रक्रिया पर जोर दिया है। फ्रॉयड के अनुसार हमारी मानसिक प्रक्रियाओं का क्षेत्र तीन प्रकार का होता है-चेतन, पूर्व-चेतन, और अचेतन । फ्रॉयड का अचेतन का सिद्धान्त मनोविज्ञान में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मनोविश्लेषणवाद ने अचेतन का विश्लेषण करके मनोविज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।
- **अचेतन क्या है?:** फ्रॉयड के अनुसार, जिस तरह समुद्र में तैरते हुए एक बर्फ के पहाड़ का केवल दसवाँ हिस्सा पानी के ऊपर रहता है और दस में नौ भाग पानी के अन्दर छिपा रहता है, उसी तरह मनुष्य मन का अचेतन स्तर उसके मन का एक बड़ा भाग है जिसकी क्रियाएँ हमसे छिपी रहकर चेतन स्तर की बहुत-सी क्रियाओं को संचालित करती हैं। इन क्रियाओं को समझने के लिए उनके स्रोत को अचेतन में ढूँढ़ना पड़ेगा। फ्रॉयड ने अचेतन मन में खोज करने की विधि निकाली। यही विधि मनोविश्लेषण की विधि कहलाती है। फ्रॉयड के अनुसार, हमारे अचेतन में हमारे वे अनुभव हैं जो दुखदायक होने के कारण दमन कर दिये गये हैं। इनके साथ ही अचेतन में वे मूल प्रवृत्तिजन्य वासनाएँ भी हैं जिनको अभी तक चेतन स्तर पर आने का अवसर नहीं मिला। ये प्रवृत्तियाँ यौन सम्बन्धी और अहं सम्बन्धी हैं। फ्रॉयड के अनुसार, अचेतन की प्रवृत्तियों, वासनाओं, विचार आदि में अधिकतर यौन सम्बन्धी है। एडलर के अनुसार ये शक्ति की इच्छा से सम्बन्धित हैं।
- **सामूहिक अचेतन:** अचेतन की फ्रॉयड की व्याख्या को युंग ने बड़ा सीमित माना है। युंग के अनुसार अचेतन का विस्तार इतना अधिक है कि उसको पूरी तरह कभी नहीं जाना जा सकता। फ्रॉयड ने केवल ऐसे अचेतन का उल्लेख किया है जो व्यक्ति के जीवन-काल में ही चलता है। युंग के अनुसार यह अचेतन का एक छोटा-सा भाग है। अचेतन का एक बड़ा भाग लेकर हम पैदा होते हैं। युंग के अनुसार अचेतन उन सब चैत्य व्यापारों की समग्रता है जिनें चेतन का गुण नहीं होता।

मानव-व्यक्तित्व

इद, इगो और सुपर इगो

व्यक्तित्व की संरचना में फ्रॉयड ने तीन तत्वों पर जोर दिया है- इद, इगो और सुपर इगो । फ्रॉयड के अनुसार मनुष्य की दमित इच्छाएँ अचेतन में चली जाती हैं और वहाँ से अभिव्यक्ति के सुअवसर ढूँढ़ा करती है इनमें अधिकतर इच्छाएँ कामुक होती हैं। कामेच्छाएँ ही मनुष्य के अनेक कार्यों का कारण हैं। इस काम-शक्ति को फ्रॉयड ने लिबिडो का नाम दिया है। लिबिडो ही मानव जीवन की प्रेरक शक्ति है। इस प्रकार फ्रॉयड के अनुसार मानव का अचेतन अन्तरंग मूल प्रवृत्तियों, अतृप्त इच्छाओं और दमित अनुभूतियों का भण्डार है। यह परिवेश के सम्पर्क में नहीं है। इसको फ्रॉयड ने इद कहा है। इद में मानव की प्रेरक शक्तियाँ रहती हैं। प्रारम्भ में फ्रॉयड इद को केवल सुखोन्मुख मानता था परन्तु बाद में उसने उसमें मृत्यु-प्रवृत्ति का भी अस्तित्व माना। इस प्रकार इद में मानव की जीवन तथा मृत्यु दोनों से सम्बन्धित प्रवृत्तियाँ विशेष इच्छाओं का रूप धारण कर लेती हैं जो परिवेश की ओर उन्मुख होती हैं और इस प्रकार व्यक्ति के चेतन जीवन को प्रभावित करती है। इद के अन्तर्गत इन इच्छाओं में अधिकतर काम सम्बन्धी होती हैं।

इगो की प्रकृति और कार्य

फ्रॉयड ने यह देखा कि जिन रोगियों का विश्लेषण किया गया उन्हें स्वयं अपने प्रतिरोधों का आभास नहीं था। चेतन रूप में वे अपने गत अनुभव को स्मरण करने में कोई भी प्रतिरोध नहीं उपस्थित कर रहे थे। इससे यह स्पष्ट हुआ कि प्रतिरोध अचेतन है। इस प्रकार फ्रॉयड इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि दमन और प्रतिरोध करने में अहं अचेतन है। अतः इस संशोधित मत के अनुसार इगो अंशतः चेतन ओर अंशतः अचेतन होता है। चेतन पक्ष संशोधित मत के सम्पर्क में रहता है। परिवेश में अहं का सम्पर्क इन्द्रियों के द्वारा होता है और वह मांसपेशियों द्वारा परिवेश के प्रति अनुक्रिया करता है। वह प्राणी के अन्तर्मानस से भी सम्बन्धित रहता है। यह अन्तरंग अचेतन है। अह के इससे सम्पर्क का प्रमाण चेतन दुख-सुख से मिलता है। फ्रॉयड के अनुसार चेतन के स्तर में और अचेतन के स्तर में परस्पर संघर्ष रहता है। अंशतः चेतन और अंशतः अचेतन होने के कारण अहं इन दोनों जगत में मध्यस्थता करता है। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में फ्रॉयड ने लिखा है कि अहं जगत में और इद में मध्यस्थता करने का, इद द्वारा जगत की मांग को पूरा करने का और पैशिक क्रियाओं द्वारा जगत का इद की इच्छाओं से अनुकूलन करने का प्रयास करता है। इद सुख की खोज में रहता है। वह सुख के सिद्धान्त के अनुसार अन्धा होकर सुख की खोज करता है। परन्तु इद को अहं के माध्यम से काम करना पड़ता है और अहं वास्तविकता के सिद्धान्त से चलता है।

सुपर इगो की प्रकृति और कार्य

सुपर इगो अथवा श्रेष्ठ अहं साधारण अर्थों में अन्तर्चेतना कहा जा सकता है। यह अहं-आदर्श भी कहलाता है। अपने रोगियों के व्यवहार के विश्लेषण में फ्रॉयड ने कभी-कभी अत्यधिक अपराधी भावना पायी। अतः उसको इद तथा इगो के अतिरिक्त एक सुपर इगो की भी उपकल्पना करनी पड़ी। अन्तर्चेतना या अन्तरात्मा ;पददमत बवदेबपमदबमद्ध के समान श्रेष्ठ अहं इगो पर अनेक नियम तथा निशेध लादने की चेष्टा करता है। वह यह निर्देश देने की चेष्टा करता है कि क्या करना है और क्या नहीं करना है। ये आदेष व्यावहारिक आवश्यकता पर आधारित नहीं होते। ये निरपेक्ष आदेश होते हैं जो इद और उसके आन्तरिक जगत से लिये हुए होते हैं।

इगो और सुपर इगो में अन्तर

अहं और श्रेष्ठ अहं में बड़ा अन्तर यह है कि श्रेष्ठ अहं केवल मानव प्राणियों में ही विकसित होता है जबकि अहं सब प्राणियों में पाया जाता है। इसका कारण यह है कि मानव बहुत दिनों तक बाल्यकाल में रहता है और उसकी यौन-शक्ति लिबिडो को वयस्क यौन जीवन में अपने लक्ष्य पर पहुँचने से पूर्व बहुत समय लगता है। फ्रॉयड के अनुसार अहं व्यक्ति के जीवन में ही विकसित होता है जबकि श्रेष्ठ अहं का उद्गम आदिम मनुष्य से माना जाता है। यह व्यक्ति को परस्परागत रूप से प्राप्त होता है।

फ्रॉयड से एडलर और युंग का मतभेद

इद, इगो और सुपर इगो के विषय में उपर्युक्त विचार फ्रॉयड के मत के अनुसार हैं। एडलर और युंग अनेक बातों में उससे सहमत नहीं है। उदाहरण के लिए,जबकि फ्रॉयड ने इगो को वास्तविकता के सिद्धान्त के अनुसार काम करने वाला माना है, एडलर के अनुसार इगो वास्तविकता के अनुसार नहीं चलता। युंग ने फ्रॉयड के लिबिडो को बड़े व्यापक अर्थों में लिया और उसको भौतिक शक्ति से मिला दिया। मानसिक व्यवहार की व्याख्या में फ्रॉयड की यह उपकल्पना बड़ी सहायक सिद्ध हुई है, विशेषतया असामान्य व्यवहार के विश्लेषण में।

सामाजिक मनो-जैविकीय सिद्धान्त

फ्रॉयड के अनुसार व्यक्तित्व के विभिन्न कारकों की उपर्युक्त व्याख्या से स्पष्ट है कि इस सम्बन्ध में फ्रॉयड का सिद्धान्त केवल मनोवैज्ञानिक ही नहीं है बल्कि जैविकीय और सामाजिक भी है। फ्रॉयड ने मनुष्य में दो मूल प्रवृत्तियाँ मानी हैं- जीवन मूल-प्रवृत्ति ;मतवेद्ध और मृत्यु मूल-प्रवृत्ति ;जींदजवेद्ध । जीवन मूल-प्रवृत्ति की सार्वभौतिक शक्ति को उसने लिबिडो का नाम दिया है। उसने मृत्यु मूल-प्रवृत्ति को भी माना है। इसको वह घृणा मूल-प्रवृत्ति भी कहता है। ये दोनों मूल-प्रवृत्तियाँ परस्पर विरोधी हैं।

मानव मनोविज्ञान में विभिन्न यन्त्र

मानव व्यक्तित्व में उपर्युक्त परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों के होने के कारण संघर्ष की परिस्थितियाँ उपस्थित होती हैं। इन संघर्ष की परिस्थितियों से छुटकारा पाने के लिए व्यक्ति बहुत से उपाय ग्रहण करता है जो यन्त्र कहलाते हैं।

इस प्रकार के मुख्य यन्त्र निम्नलिखित हैं:

- शोधीकरण
- विस्थापन
- प्रतिक्रिया निर्माण
- दमन
- प्रतिरोध
- निरोध
- रूपान्तर
- अवगति
- युक्तिकरण
- हस्तान्तरण
- तादात्म्य
- अन्तःक्षेपण
- प्रक्षेपण

उपर्युक्त यन्त्र संधर्ष की परिस्थिति को समाप्त करने के विभिन्न उपाय हैं। इनमें हस्तान्तरण, तादात्म्य, अन्तःक्षेपण, प्रक्षेपण और विस्थापन गौण हैं और बांकी मुख्य हैं।

7.3 स्वप्न का सिद्धान्त

लोग कहते हैं कि स्वप्न दिखायी पड़ते हैं। इसलिए नींद नहीं आती। फ्रॉयड ने यह सिद्ध करने की चेष्टा की कि यदि स्वप्न दिखायी न पड़े तो नींद आये ही नहीं। इस प्रकार फ्रॉयड ने स्वप्न को निद्रा में बाधक न मानकर सहायक माना है। उसके अनुसार समस्त स्वप्न इच्छापूर्ति होते हैं। अपने स्वप्न सिद्धान्त की फ्रॉयड ने अपनी पुस्तक "The Interpretation of Dreams" व्याख्या की है। स्वप्न के फ्रॉयडीय सिद्धान्त की रूपरेखा निम्नवत् हैः

1. **स्वप्न इच्छापूर्ति है-** फ्रॉयड ने इस बात पर जोर दिया कि मनुष्य की जो इच्छाएँ बाह्य जगत में सन्तुष्ट नहीं हो पाती अथवा जिनका वह किसी कारण से दमन कर देता है, वे

समाप्त नहीं हो पातीं बल्कि अचेतन में चली जाती हैं और वहाँ से सुअवसर मिलने पर नाना प्रकार से अभिव्यक्त होने की चेष्टा करती हैं। स्वप्न इन्हीं अभिव्यक्तियों के साधनों में से एक है।

2. **स्वप्न में कामुक वासनाओं का महत्व-** फ्रॉयड के अनुसार मनुष्य की इच्छाओं में सबसे अधिक और सबसे प्रबल तथा सबसे अधिक अतृप्त इच्छाएँ काम सम्बन्धी हैं। मनुष्य एक ओर तो अपनी काम -प्रवृत्ति की सन्तुष्टि करना चाहता है और दूसरी ओर सामाजिक व नैतिक नियमों की भी रक्षा करना चाहता है। इससे उसमें दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ रहती है। इद अतृप्त इच्छाओं का भण्डार है। परन्तु सूपर इगो सामाजिक नैतिकता का प्रतिनिधि है।
3. **स्वप्न क्रिया**- स्वप्न का अव्यक्त विषय अतृप्त वासना है। सेन्सरशिप के कारण वह स्वप्न में ज्यों की त्यों व्यक्त नहीं हो सकती। प्रतिबन्धक मूल स्वप्न-इच्छा के प्रति प्रतिरोध उपस्थित करता है जिससे उसे बाध्य होकर विकृत रूप ग्रहण करने पड़ते हैं। इस प्रकार स्वप्न क्रिया वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा अचेतन अव्यक्त विषय व व्यक्त विषय का रूप धारण करता है। जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, स्वप्न-प्रतिबन्धक के कारण अव्यक्त विषय ज्यों का त्यों व्यक्त नहीं हो सकता बल्कि विकृत होकर व्यक्त होता है। यह कार्य स्वप्न क्रिया में निम्नलिखित पाँच कार्य-पद्धतियों द्वारा होता है-संक्षेपण- संक्षेपण में अव्यक्त विषय की अनेक बातें व्यक्त होने से पूर्व ही लुप्त हो जाती हैं, अनेक घटनाएँ केवल संक्षिप्त प्रतीक रूप में सामने आती हैं तथा अनेक प्रतिमाएँ सिमट कर एक हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, एक अपरिचित व्यक्ति ऐसा दिखायी पड़े जिसमें अनेक परिचितों की अनेक बातें एक साथ हों। विस्थापन-इसमें स्वप्न में अव्यक्त विषय की प्रधान बातें गौण और गौण बातें प्रधान हो जाती हैं। नाट्यीकरण-इस पद्धति से व्यक्त विषय की अमूर्त इच्छाएँ व्यक्त स्वप्न में मूर्त रूप में अभिव्यक्त होती है। 4. प्रतीकीकरण- फ्रॉयड ने अपनी पुस्तक में भिन्न-भिन्न यौन अंगों तथा विभिन्न प्रवृत्तियों के प्रतीकों का विस्तृत वर्णन किया है। परवर्ती विस्तार-मनुष्य अपनी प्रत्येक बात में एक तारतम्य, एक क्रम तथा सार्थकता देखना चाहता है। अतः जगने पर वह स्वप्न को जहाँ-तहाँ घटा-बढ़ाकर नितान्त उचित तर्कसंगत और सार्थक बना देता है। यही क्रिया परवर्ती विस्तार है। इससे स्वप्न का वास्तविक रूप सामने नहीं आता।
4. **स्वप्न की व्याख्या**-फ्रॉयड ने स्वप्नों की उपर्युक्त व्याख्या में प्रतीकों तथा मुक्त साहचर्य से उनके अर्थों का विश्लेषण करने की चेष्टा की है। मुक्त साहचर्य में स्वप्न-दृष्टा स्वप्न में देखी बात के विषय में साहचर्य करता है। इसमें उसका जो अर्थ पहले सामने आता है वही मान लिया जाता है। फ्रॉयड ने स्वप्न में देखी अधिकांश वस्तुओं को प्रतीकों के रूप में माना है। ये प्रतीक उसने लोकगीतों, पुराणों, लोकाचार आदि से लिये हैं। प्रतीकों के

कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं- यात्रा मृत्यु, पानी जन्म, राजा पिता, रानी माँ, कपड़ा नग्नावस्था, गड्ढा या खाई योनि, वृक्ष या मीनार लिंग तथा पहाड़ चोटी अथवा सीढ़ी पर चढ़ना मैथुन के प्रतीक हैं। ये प्रतीक कुछ विचित्र से लगते हैं परन्तु फ्रॉयड ने इन्हीं के आधार पर अनेक स्वप्नों की सफल व्याख्या की है।

एडलर का मत

एडलर ने स्वप्न में मानसिक संघर्ष तथा दमन का महत्व माना है परन्तु जहाँ फ्रॉयड ने काम-प्रवृत्ति को मुख्य माना है, एडलर ने स्व-स्थापन की प्रवृत्ति को मुख्य माना है। एडलर के अनुसार स्वप्न में इसी प्रवृत्ति को तृप्त करने का प्रयास किया जाता है। स्वप्नों मे व्यक्ति की जीवन-शैली अभिव्यक्त होती है जो प्रत्येक व्यक्ति के बाल्यकाल के कुछ वर्षों में ही बन जाती है।फ्रॉयड और एडलर की स्वप्न की व्याख्या में एक दूसरे में बड़ा भेद यह है कि फ्रॉयड ने स्वप्नों का सम्बन्ध व्यक्ति के अतीत से माना है और एडलर उनको व्यक्ति के भविष्य से सम्बन्धित मानता है। उसके अनुसार व्यक्ति स्वप्न में अपने भावी जीवन के कार्यों का रिहर्सल करता है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति अपने भावी विवाह के विषय में चिन्तित था। उसने स्वप्न देखा कि उसे बन्दी बना लिये जाने की धमकी के साथ दो देशों की सीमाओं के बीच में रोक लिया गया है।

युंग का मत

युंग के अनुसार मनुष्य में एक सामान्य जीवन-शक्ति होती है जो विभिन्न प्रवृत्तियों में अभिव्यक्त होती रहती है। इस प्रकार स्वप्न किसी एक मूल-प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति न होकर इसी सामान्य जीवन-शक्ति की अभिव्यक्ति है जो भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों के रूप में प्रकट होती है। युंग ने फ्रॉयड के समान स्वप्नों में अचेतन के महत्त्व को स्वीकार किया है, परन्तु जहाँ फ्रॉयड ने एक व्यक्तिगत अचेतन को माना है, युंग ने उसको गौण मानकर सामूहिक अथवा प्रजातीय अचेतन पर जोर दिया है। फ्रॉयड तथा युंग के मत में एक अन्य अन्तर यह है कि जहाँ फ्रॉयड ने स्वप्न के लिए प्रवृत्तियों के दमन को आवश्यक माना है, युंग के अनुसार दमन के बिना भी स्वप्न हो सकते हैं। उसके अनुसार स्वप्न एक सामान्य मानसिक क्रिया है जिसमें व्यक्ति के सामूहिक अचेतन में संचित प्रजातीय विशेषताओं के संस्कार सहज रूप में अभिव्यक्त होते रहते हैं। स्वप्नों को फ्रॉयड और एडलर ने क्रमशः भूत और भविष्य से सम्बन्धित माना है। युंग ने उनको वर्तमान से सम्बन्धित माना है। युंग के अनुसार स्वप्न वर्तमान समस्यओं की ओर व्यक्ति की अचेतन मनोविवृत्ति के परिचायक हैं।

7.4 मनोयौनिक सिद्धान्त

फ्रॉयड के अनुसार मनुष्य में यौन-प्रवृत्ति का जैविकीय के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक महत्व भी होता है। मानसिक रोग उत्पन्न करने वाली अधिकांश प्रवृत्तियों को फ्रॉयड ने मनोयौनिक और आक्रामकता को माना है। फ्रॉयड के अनुसार मनुष्य में यौन-प्रवृत्ति शैशवास्था से ही दिखायी पड़ने लगती है और इसलिए शैशवास्था से ही मनुष्य में हताशाओं का भी सूत्रपात होता है। फ्रॉयड ने यह सिद्धान्त उपस्थित किया कि मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से सामान्य और असामान्य व्यक्तियों मे कोई भी अन्तर नहीं है और उनके व्यवहार की व्याख्या करने के लिए एक से सिद्धान्त प्रयोग किये जाने चाहिए। मानसिक रोगियों का विकास सामान्य व्यक्तियों से प्रकार में किसी प्रकार से भी भिन्न नहीं होता। फ्रॉयड का यह सिद्धान्त सामान्य और रोगी बालकों के निरीक्षण से सिद्ध हो चुका है जिस तरह वयस्क व्यक्तियें में यौन सम्बन्धी समस्याएँ पायी जाती हैं और असामान्यताएँ दिखायी पड़ती हैं उसी प्रकार बालकों में भी इनको देखा जा सकता है। आज असामान्य मनोविज्ञान में यह बात सर्वमान्य हो चुकी है कि प्रत्येक मानसिक रोग शारीरिक पहलू और शारीरिक रोग मानसिक पहलू रखता है।

बालकों में यौन-प्रवृत्ति

बालकों में यौन-प्रवृत्ति की उपस्थिति के फ्रॉयड के सिद्धान्त का बहुत से लोगों ने तीव्र विरोध किया। परन्तु आजकल अधिकतर यौन-शास्त्री और मनोवैज्ञानिक तथा चिकित्सक इस बात को मानते हैं। फ्रॉयड ने मानव के व्यक्तित्व को सदैव परिवेश की शक्तियों से क्रिया-प्रतिक्रिया करने वाले एक जीव के रूप में देखा है। इस क्रिया-प्रक्रिया में व्यक्ति को बराबर हताशाएँ भुगतनी पड़ती हैं जिनसे उसके व्यक्तित्व में भारी परिवर्तन होता है।

यौन-प्रवृत्ति के विकास की अवस्थाएँ

यौन-प्रवृत्ति के विकास में फ्रॉयड ने पाँच अवस्थाएँ बतलायी हैः

- मौखिक अवस्था-इसमें मुँह से काटना और चुसना अधिक होता है।
- गुदा अवस्था- इसमें दो प्रवृत्तियाँ दिखायी पड़ती हैं-मल-मुत्र त्याग करना और उनको रोकना। इस अवस्था में बालक को सफाई की शिक्षा दी जाती है जिसका उसके व्यक्तित्व पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। अत्यधिक दमन होने पर इस अवस्था में उसमें बहुत-सी असामान्यताएँ आ सकती हैं।
- लैंगिक अवस्था- इस दिशा में अधिकतर हताशाएँ आलोचित हस्त-मैथुन से सम्बन्धित होती है।
- सुप्तावस्था- इसमें योनिकता के अनुभव अधिकतर दमित होते हैं।

- यौनिक अवस्था-इसमें यौनिकता दुबारा दिखायी पड़ती है। इसके बाद यौन प्रवृत्ति सामान्य वयस्क के भिन्नलिंगीय सम्बन्धों में प्रकट होती है।

यौन विकास महत्व का महत्व

मानव व्यक्तित्त्व के सामान्य विकास के लिए उसकी यौन-प्रवृत्ति का सामान्य विकास बड़ा आवश्यक है। यदि यह विकास असामान्य अथवा कुण्ठित हुआ तो अनेक मानसिक रोग होने की सम्भावना है। किशोरावस्था में यौन समायोजन बड़ा महत्वपूर्ण होता है। इसके लिए यौन-शिक्षा दी जानी चाहिए।

दैनिक जीवन की भूलों का मनोविज्ञान

फ्रॉयड ने सन् 1914 में प्रकाशित अपनी पुस्तक Psycho Pathology of Life' में देनिक जीवन की सामान्य गलतियों, जैसे किसी का नाम भूल जाना, जबान का फिसल जाना, कलम से कोई गलत बात लिख जाना, वायदों को भूल जाना, वस्तु को कहीं और रख देना आदि के पीछे अचेतन के मनोविज्ञान की व्याख्या की है। इसमें फ्रॉयड का सिद्धान्त यह है कि जो बातें हमें अप्रिय लगती हैं अथवा जिनसे हमें दुःख होता है, हम अचेतन रूप से उनका दमन करते हैं और उनको भूल जाते हैं। इस प्रकार फ्रॉयड के अनुसार यदि कोई व्यक्ति किसी वायदे को भूल जाता है तो अचेतन रूप में वास्तव में वह उसे भूल ही जाना चाहता है। इस प्रकार की गलतियाँ दैनिक जीवन में सभी से होती है और मानसिक रोगियों से विशेष रूप से होती हैं। इनके विश्लेषण में विशेषतया मानसिक रोगियों के अचेतन की बहुत-सी बातों का पता लगाया जा सकता है।

7.5 अन्य क्षेत्रों में मनोविष्लेषणवाद का योगदान

मनोविश्लेषणवाद मनोविज्ञान का एक सम्प्रदाय है और साथ ही साथ निरीक्षण की एक पद्धति तथा चिकित्सा की एक मनोवैज्ञानिक विधि भी है। इसके मूल में मानव की मौलिक प्रवृत्तियों के विषय में फ्रॉयडीय सिद्धान्त है जो समस्त मानव व्यवहार के गतिशास्त्र ;कलदंउपबेद्ध का विश्लेषण करता है। समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के क्षेत्र में फ्रॉयड के अतिरिक्त अन्य महत्वपूर्ण मनोविश्लेषणवादियों मे से कुछ मुख्य हैं- एरिक फ्रॉम, हॉर्नी, ग्लोवर, हॉपकिन्स, डोलार्ड और ब्राउन। इनके ग्रन्थ समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए बड़े ही महत्वपूर्ण है।

फ्रॉयड के सिद्धान्त में कमियाँ

मनोविश्लेषणवाद एक मनोवैज्ञानिक पद्धति न होकर एक चिकित्सा पद्धति है। यही उसका महत्व है और यही उसकी दुर्बलता है। यहाँ यह ध्यान में रखने की बात है कि अन्य विद्धानों के समान मनोविश्लेषणवाद में भी पिछले पचास वर्षों से बराबर परिवर्तन और विकास होता रहा है। इस विकास में अनेक कठिनाइयों को सुलझाया जा चुका है। इस प्रकार मनोविश्लेषणवाद के विभिन्न प्रत्ययों के महत्व के विषय में आज भी मतभेद दिखायी पड़ता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि

मनोचिकित्सा-विज्ञान के विकास के साथ फ्रॉयड के अनेक प्रत्ययों को छोड़ देना पड़ा है और बहुतों का संशोधन और रूपान्तर करना पड़ा है, फिर भी किसी भी वैज्ञानिक मनोचिकित्सा विज्ञान की आधारभूमि फ्रॉयड के ही सिद्धान्त होंगे। स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में सिंगमण्ड फ्रॉयड सदैव सबसे महान और व्यवस्थित तथा सबसे पहला अनुसन्धानकर्ता माना जायेगा। जिन-जिन क्षेत्रों में फ्रॉयड ने मनोविश्लेषण विधि का प्रयोग किया उनमें उसके विचार चाहे सर्वमान्य भले ही न हो सकें परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसके विचारों ने एक क्रान्ति सी उत्पन्न कर दी है और वैज्ञानिकों को फिर से सोचने को मजबूर किया है। मनोविज्ञान के इतिहास में मनोविश्लेषणवाद का शाश्वत योगदान है और मनोचिकित्सा-विज्ञान की तो वह आधारशिला ही है। सिंगमण्ड फ्रॉयड के विचार और मनोविश्लेषणवादी पद्धति सदैव महत्वपूर्ण रहेंगे और भावी अनुसन्धानकर्ताओं को निर्देशित और प्रेरित करते रहेंगे।

7.6 वैयक्तिक मनोविज्ञान

एडलर ने वैयक्तिक मनोविज्ञान की स्थापना की। उसके अनुसार व्यक्तियों में अन्तर का मूल कारण उनकी रचनात्मक शक्ति में अन्तर है। रचनात्मक शक्ति को अभिव्यक्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति अलग-अलग जीवन शैली अपनाता है। व्यक्तित्व के विकास में इस जीवन-शैली का बड़ा महत्व है। व्यवहार को समझने में व्यक्ति के जीवन-लक्ष्य को समझना भी बड़ा आवश्यक है। विकृत जीवन-शैली ही मनोस्नायु विकृति का मुख्य कारण है। मानव जीवन की मुख्य समस्याएँ सामुदायिक जीवन, व्यवसाय और यौन-प्रेम से सम्बन्धित होती हैं । शिशु के जीवन में पारिवारिक परिवेश और उसमें भी जन्म-क्रम और पारिवारिक स्थिति का बड़ा महत्व है। मनुष्य में अग्रधर्मी प्रेरणा प्रबल होती है यद्यपि वह उसको बदल भी सकता है। किसी भी प्रकार की कमी हीनता-भावना उत्पन्न करती है और व्यक्ति उसकी सम्पूर्ति का प्रयास करता है। श्रेष्ठता की भावना हीन-भावना की पूरक है और सभी मनुष्यों में पायी जाती है। मानव व्यक्तित्व में गत स्मृतियों का बड़ा महत्व है। एडलर ने दिवास्वप्नों का वर्गीकरण किया और उनकी व्याख्या की। उसने स्वप्न-विश्लेषण और मानसिक उपचार की स्वतन्त्र विधियाँ प्रस्तुत की। उसने स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए आन्दोलन किया और समाजवाद की आकर्षक व्याख्या की। उसके सिद्धान्त शिक्षा के क्षेत्र में बड़े उपयोगी सिद्ध हुए हैं। बोलमैन के अनुसार उसकी सबसे अधिक महत्वपूर्ण देन व्यक्ति की सम्पूर्णता पर बल देना है।

7.7 विष्लेषणात्मक मनोविज्ञान

युंग ने साहचर्य परीक्षण के विषय में अनुसन्धान किया। सन् 1907 में उसकी फ्रॉयड से भेंट हुई। शीघ्र ही उन दोनों में सहयोग हो गया। परन्तु कुछ ही वर्षों में युंग का फ्रॉयड से मतभेद हो गया जिसके भूल में मनमुटाव के अतिरिक्त लिबिडो की धारणा, व्यक्तिगत विभिन्नताएँ, मनोस्नायु, विकृति का निदान, मानसिक रोगों की उपचार-विधि, मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा योन प्रवृत्ति के महत्व को लेकर मतभेद था। युंग ने मानव मनोविज्ञान में परस्पर विरोधी धुरव माने हैं। उसने

सामाजिकता के आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण किया। उसने सामूहिक अचेतन की धारणा प्रस्तुत की और व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास पर जोर दिया। उसके विचारों में धार्मिकता और रहस्यवाद का पुट मिलता है। युंग ने स्वप्न-विश्लेषण के लिए फ्रॉयड से भिन्न व्याख्या प्रस्तुत की। मानव मनोविज्ञान में उसकी पैठ बड़ी गहरी थी।

7.5 अन्य क्षेत्रों में मनोविष्लेषणवाद का योगदान

एडलर और युंग के अतिरिक्त अन्य अनेक मनोवैज्ञानिकों ने फ्रॉयड के विचारों का अध्ययन किया और प्रतिक्रियास्वरूप नवीन विचार उपस्थित किये। जहाँ अनेक विषयों में वे फ्रॉयड से सहमत थे वहाँ अन्य अनेक में उसके विरूद्ध भी थे। उन्होंने विश्लेषणवाद के विकास में अनेक नवीन प्रवृत्तियों को जन्म दिया। इन मनोवैज्ञानिकों में ऑटो रॉक, सैण्डर फेरेंजी, विल्हेम राइक, करेन हार्नी, एरिक फ्रॉम और हैरी स्टैक सुलीवान विशेष उल्लेखनीय है। यहाँ इन्हीं विचारों का विवेचन किया जायेगा।

ऑटो रांक

ऑटो रांक का जन्म इटली के वियना नगर में सन् 1884 में हुआ था और उसने वियना विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट प्राप्त की। तत्पश्चात् उसने वियना में ही एक मनोचिकित्सक के रूप में कार्य प्रारम्भ किया और मनोविश्लेषण सम्बन्धी दो पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। इसके अतिरिक्त उसने वियना में अन्तराष्ट्रीय मनोविश्लेषण संस्थान की स्थापना की तथा पाँच वर्षों तक इस संस्था के निर्देशक के पद पर रहते हुए कार्य किया। इस संस्था की स्थापना सन् 1919 में हुई थी। रांक का देहावसान सन् 1939 में हुआ। ऑटो रांक फ्रॉयड का अनुयायी एवं प्रबल समर्थक था तथा वर्षों तक उसके आन्तरिक मण्डल का सदस्य रहा था। कालान्तर में एडलर और युंग की भाँति उसने भी फ्रॉयड के विचारों से मतभेद प्रकट किया और सन् 1920 के लगभग वह भी फ्रॉयड से पृथक हो गया।

मनोविज्ञान में योगदान

- जन्म-त्रास का सिद्धान्त ऑटो रांक का सबसे प्रसिद्ध सिद्धान्त जन्म-त्रास है। इस सिद्धान्त के आधार पर उसने मानव जीवन में जन्म को चिन्ता का कारण माना है। रांक ने बताया कि जब शिशु का जन्म होता है तब उसे अत्यन्त कठोर त्रास का अनुभव होता है और साथ ही साथ उसे माता के गर्भ में जो आराम प्राप्त थे उनका अन्त हो जाता है। यही त्रास उसके जीवन में चिन्ता का रूप धारण कर लेता है। रांक ने इसे अभिघातक बताया है और यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया है कि जन्म के पश्चात जीवन में कोई भी चिन्ता आती है तो वह इस आधारभूत जन्म-चिन्ता का ही परिणाम होती है। इस विषय में यह उल्लेखनीय है कि फ्रॉयड ने भी इस तथ्य पर प्रकाश डाला था कि जन्म की प्रक्रिया शिशु के लिए दुःखदायक होती है और इसी के परिणामस्वरूप शिशु में चिन्ता का उदय होता है। किन्तु

फ्रॉयड ने जन्म-त्रास का उल्लेख नहीं किया था। जन्म-त्रास के सिद्धान्त के आधार पर रांक ने बताया कि मनस्ताप रोग का कारण भी जन्म-त्रास ही है। इसी सम्बन्ध में उसने ईडिपस गाथा का उल्लेख किया। ईडिपस गाथा का मूलाधार यह है कि व्यक्ति पुनः अपनी माता से सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। इस प्रवृत्ति का मूल कारण यह है कि शिशु को जो सुरक्षा व आराम गर्भ में प्राप्त थे वे जन्म के साथ ही नष्ट हो जाते हैं और इसी कारण उसे त्रास का अनुभव होता है। परिणामस्वरूप, ईडिपस ग्रन्थि के आधार पर माता व पुत्र में सम्बन्ध स्थापित होने लगता है। ?

- संकल्प- शक्ति रांक के अनुसार जन्म-त्रास से मनुष्य तब मुक्ति पाता है जब वह अपनी संकल्प-शक्ति का प्रयोग स्वतन्त्र रूप से करने लगता है। संकल्प -शक्ति की तीन अवस्थाएँ होती हैं-
    - विरोधी संकल्प-इस अवस्था में व्यक्ति अपने शैशवकाल में माता पिता तथा पर्यावरण का विरोध करता है।
    - प्रतिस्पर्द्धात्मक संकल्प- संकल्प शक्ति की यह दूसरी अवस्था बालक के जीवन के उस भाग से सम्बन्धित है जब उसकी विचार-शक्ति का विकास होने लगता है और बालक उन्हीं कार्यों को करना चाहता है जो परिवार तथा समाज में वांछनीय हैं और जिनका समाज में कुछ मूल्यहै।
    - विधायक संकल्प- जब व्यक्ति निश्चित रूप से अपने संकल्पों के आधार पर कार्य करने लगता है तो उस अवस्था को विधायक संकल्प कहा गया है। व्यक्ति का पूर्ण विकास होता ही तब है जब वह अपनी संकल्प-शक्ति का रचनात्मक रीति से प्रयोग करता है।
    - आवेग और संवेग रांक के मतानुसार व्यक्ति में आवेग जन्मजात होता है। जब नवजात शिशु पर्यावरण के उद्दीपनों से प्रभावित होता है तब वह अपने भीतर तनाव अनुभव करताहै । जिससे उसके अंग में ऊर्जा की अभिव्यक्ति होती है। प्रत्येक तनाव से ऊर्जा की अभिव्यक्ति होती है और इसी आधार पर शिशु को दुःख अथवा सुख का अनुभव होता है। जब आवेगों की अभिव्यक्ति में रूकावट आती है तब-तब वे संवेग का रूप धारण कर लेते हैं। ये संवेग दो प्रकार के हो सकते हैं- एक तो वे जो संगठन उत्पन्न करते हैं और दूसरे वे जो विघटन उत्पन्न करते हैं। प्रेम, सौहार्द्र, कोमलता आदि संगठक संवेग हैं और क्रोध, घृणा व भय आदि विघटक संवेग हैं। मनुष्य के व्यक्तित्व में संवेगों का भी पर्याप्त प्रभाव होता है। जिस व्यक्ति में संगठक संवेग अधिक मात्रा में पाये जाते हों उसका स्वभाव सरल एवं सौम्य होता है और जिसमें विघटक संवेग अधिक मात्रा में हों, वह व्यक्ति कठोर एवं अप्रिय होता है।

- **व्यक्तित्व का विकास-**रांक ने व्यक्तित्व के विकास का अध्ययन करते हुए इस तथ्य पर प्रकाश डाला कि मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास तीन दशाओं में होता है। पहली दशा में व्यक्ति के शैशवकाल की अवधि आती है। इस दशा में शिशु अपने माता-पिता तथा सम्बन्धित पर्यावरण से अपना सम्बन्ध स्थापित करता है और सामाजिक दबाव होने के कारण समंजन का प्रयास करता है। इस दशा में काम प्रवृत्ति का भी अनुभव होता है। व्यक्तित्व-विकास की दूसरी अवस्था में बालक अपने सामाजिक जीवन के अनुकूल आदर्शों तथा मूल्यों ग्रहण करने का प्रयास करता है। यदि कभी उसे इस सम्बन्ध में किसी बाधा का सामना करना पड़ता है तो उसमें कभी-कभी अपराधी भावना उत्पन्न हो जाती है। व्यक्तित्व के विकास की तीसरी अवस्था में व्यक्ति प्रौढ़ता प्राप्त कर लेताहै।वह पूर्ण रूप से अपने आप को स्वतन्त्र अनुभव करने लगता है, परिणामस्वरूप उसकी संकल्प-शक्ति भी स्वतन्त्र रूप से कार्य करने लगती है।

व्यक्तित्व के प्रकार

- सामान्य
- मनस्तापी
- सर्जनात्मक

इन तीनों प्रकार के व्यक्तियों में से सर्जनात्मक व्यक्तित्व श्रेष्ठ हैं और रांक ने इसे सर्वोच्च स्थान दिया है।

सैण्डर फेरेंजी-सैण्डर फेरेंजी भी फ्रॉयड का शिष्य था। उसने मनोविश्लेषण सम्बन्धी शिक्षा फ्रॉयड से प्राप्त की थी। फेरेंजी के मनोविश्लेषण सम्बन्धी विचार फ्रॉयड की अपेक्षा रांक से अधिक प्रभावित है।

मनोविज्ञान में योगदान

फेरेंजी ने व्यक्ति के विकास का अध्ययन करते हुए इस तथ्य पर प्रकाश डाला कि व्यक्ति के विकास में यथार्थ सम्बन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान को विशेष महत्व प्राप्त है। उसके अनुसार यथार्थ सम्बन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान की चार दशाएँ होती हैं

1. अनुपाधिक सर्वशक्तिमत्ता- यथार्थ सम्बन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान की यह दशा गर्भ में स्थित भ्रूण से सम्बन्धित है। फेरेंजी के अनुसार जन्म से पूर्व ही शिशु की इच्छाएँ उत्पन्न हो जाती हैं और भ्रूण की इन इच्छाओं की पूर्ति स्वयमेव हो जाती है।

2. इन्द्रजाल सर्वशक्तिमत्ता-यथार्थ सम्बन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान की यह अवस्था वह है जब शिशु का जन्म होता है। इस अवस्था में भी शिशु की लगभग सभी इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं। इस अवस्था के विषय में यह स्मरणीय है कि शिशु में विचार-शक्ति का अभाव होता है।
3. इन्द्रजाल अंगविक्षेप सर्वशक्तिमत्ता-यथार्थ समबन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान की यह तीसरी अवस्था वह है जबकि बालक को जीवन की परिस्थितियों की यथार्थता का थोड़ा-बहुत ज्ञान होने लगता है। वह अपनी इच्छाओं की तुष्टि के लिए रूदन करता है। उसका यह रूदन ही इन्द्रजाल अंगविक्षेप है। उसे इस बात का अनुभव होता है कि रोने से उसकी इच्छा की पूर्ति हो जायेगी।
4. विचारों और शब्दों का इन्द्रजाल- इस अवस्था में बालक में भाषा-क्षमता आ जाती है और वह इसी माध्यम से अपनी इच्छाओं की पूर्ति का प्रयास करता है। आयु में तथा अनुभव में वृद्धि हो जाने के कारण उसे इस बात का बोध हो जाता है कि अब रूदन जैसे व्यवहार से इच्छा-पूर्ति सम्भव नहीं रही। वह भाषा के द्वारा अपनी इच्छाओं को अभिव्यक्त करता है। ऐसा करते समय उसे यथार्थ का कुछ न कुछ बोध अवश्य होता है। इस अवस्था में भी उसके मन में सर्वशक्तिमत्ता की भावना विद्यमान होती है।

मानसिक चिकित्सा-विधि

फेरेंजी फ्रॉयड की मानसिक चिकित्सा-विधि से सहमत नहीं था। अतः उसने अपनी एक पृथक मानसिक चिकित्सा-विधि की रचना की जिसमें उसने विश्रान्ति ;तमसंगंजपवदद्ध को मानसिक चिकित्सा के लिए आवश्यक माना। उसके मतानुसार मानसिक रोग की चिकित्सा की दो अवस्थाएँ होती हैं। पहली अवस्था में मानसिक रोगी में रोग के प्रति प्रतिक्रिया उत्पन्न कर दी जाती है ताकि वह अपनी भावनाओं और संवेगों को प्रकट करे। दूसरी अवस्था में फेरेंजी ने बताया कि रोगी तथा चिकित्सक में सम्बन्ध हो जाना अनिवार्य होना चाहिए। इसका कारण यह है कि फेरेंजी मानसिक चिकित्सकों को ऐसी प्रक्रिया मानता था जिसमें रोगी तथा चिकित्सक दोनों भाग लेते हैं। इस प्रकार फेरेंजी ने मनोविश्लेषण के क्षेत्र में मानसिक चिकित्सा की एक नवीन विधि प्रतिपादित की । उसने मनोविश्लेषण में ऐसे नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जिनका प्रभाव अन्य समकालीन मनोविश्लेषकों पर पर्याप्त रूप से पड़ा।

विल्हेम राइक- विल्हेम राइक ने मनोविश्लेषण के क्षेत्र में सामाजिक तथा सांस्कृतिक तत्वों पर विशेष जोर दिया। यद्यपि राइक फ्रॉयड का शिष्य था किन्तु फिर भी उसने ऐसे तथ्यों एवं सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला जो फ्रॉयडीय विचारधारा से भिन्न थे। राइक की प्रमुख मान्यता यह थी कि व्यक्तित्व-विश्लेषण करते हुए उस व्यक्ति विशेष के वैयक्तिक जीवन के इतिहास के अध्ययन के साथ-साथ उसके समाजिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण का भी अध्ययन करना चाहिए। इसका कारण यह है कि व्यक्तित्व का विकास सामाजिक तथा सांस्कृतिक पर्यावरण के आधार पर होता है। राइक ने मनस्तापी रोगियों के चरित्र का गहन अध्ययन किया था। उसने इस तथ्य पर जोर दिया

कि व्यक्ति की काम-वृत्ति तथा मनस्तापी रोग में सह-सम्बन्ध है। जिस व्यक्ति की काम-वृत्ति असन्तुष्ट होती है, उसमें यह रोग पाया जाता है। इस सम्बन्ध में राइक ने मनोविश्लेषण के क्षेत्र में सामाजिक व सांस्कृतिक तथ्यों पर विचार करना आवश्यक माना। उसका यह मत कि व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास का उचित अध्ययन तभी सम्भव है जबकि उसके सामाजिक व सांस्कृतिक पर्यावरण तथा आर्थिक परिस्थितयों का भलीभाँति अध्ययन किया जाये। इस प्रकार राइक ने मनोविश्लेषण में एक नई प्रवृत्ति को जन्म दिया जिसे सामाजिक और सांस्कृतिक प्रवृत्ति कहते हैं। मानसिक रोगियों की चिकित्सा के लिए राइक ने एक नवीन विधि का आविष्कार किया। यह विधि इस तथ्य पर आधारित थी कि मानसिक रोगी अपनी सुरक्षा के लिए ऐसी प्रक्रियाओं को विकसित करता है जो असामान्य होती हैं। अतः मानसिक रोग दूर करने के लिए यह आवश्यक होता है कि रोगी की असामान्य प्रक्रियाओं को रोका जाये तथा उसे इस तथ्य से अवगत कराया जाय कि उसके रोग का मूल कारण ये असामान्य प्रक्रियाएँ ही हैं।

करेन हार्नी-करेन हार्नी मानसिक चिकित्सक थी। उसने वर्षों तक फ्रॉयडीय पद्धति के अनुसार मानसिक चिकित्सा का कार्य किया था। सन् 1639 में हार्नी ने अपनी **पुस्तक** New Ways in Psychoanalysis प्रकाशित की जिसमें उसने मनस्ताप तथा संस्कृति के पारस्परिक सम्बन्ध पर प्रकाश डाला। उसने बताया कि व्यक्ति मनस्तापी तब बनता है जबकि उसके मन में विरोधी प्रवृत्तियों की उत्पत्ति होती है। उसके विचारानुसार मनस्ताप का मूल कारण नैतिक संघर्ष है। इस विषय पर उसकी पुस्तक व्नत प्ददमत ब्वदसिपबजेष् सन् 1945 में प्रकाशित हुई।

मनोविज्ञान में योगदान

अभिव्यक्तियाँ

जब व्यक्ति में नैतिक संघर्ष उत्पन्न होता है तब उसमें दो प्रकार की अभिव्यक्तियाँ पायी जाती हैं। पहली अभिव्यक्ति के अन्तर्गत व्यक्ति मनस्तापी हो जाने पर दूसरे लोगों से सम्बन्ध बढ़ाने की ओर अग्रसर होता है। दूसरी अभिव्यक्ति में वह अपने आप का प्रत्याहरण कर लेना चाहता है। आन्तरिक संघर्ष की इन दो अभिव्यक्तियों के अतिरिक्त एक तीसरी अभिव्यक्ति भी होती है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति दूसरों का विरोधी बन जाता है।

व्यक्तियों के प्रकार- इन्हीं तीन अभिव्यक्तियों के आधार पर हार्नी ने व्यक्तियों का निम्नलिखित वर्गीकरण किया है-

1. **अनुपालक प्रकार:** अनुपालक प्रकार के व्यक्ति अन्य लोगों से सम्पर्क बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं। उनका सदैव यही प्रयास रहता है कि उन्हें स्नेह व प्रेम की प्राप्ति हो। उन्हें ऐसे सहयोगियों की आकांक्षा होती है जिन पर निर्भर रहा जा सके।
2. **अगधर्षी प्रकार:** अग्रधर्षी प्रकार का व्यक्ति अनुपालक से ठीक उल्टा होता है। वह हर किसी से झगड़ा मोल लेना चाहता है। उसकी दृष्टि में हर कोई उसका विरोधी हो सकता

है। ऐसे व्यक्तियों का सदैव यह प्रयास होता है कि वे दबकर न रहें। वे प्रत्येक रीति द्वारा दूसरों पर अपना प्रभुत्व जमाये रखना चाहते हैं।

3. **तटस्थ प्रकार:** तटस्थ प्रकार के व्यक्ति सदैव आत्म निर्भर रहने का प्रयत्न करते हैं। वे अपनी आत्म-निर्भरता के लिए अपनी कुछ आवश्यकताओं का दमन भी कर सकते हैं। वे एकाकीपन को श्रेष्ठ समझते हैं और किसी के साथ मिलकर कोई कार्य करने की इच्छा नहीं रखते।

फ्रॉयड के विचारों से मतभेद

हार्नी ने यह विचार प्रकट किया कि लिबिडो के अवरूद्ध हो जाने से नहीं वरन् स्नेह की कमी के कारण व्यक्ति मनस्तापी बनता है। जिस व्यक्ति को पर्याप्त मात्रा में स्नेह प्राप्त नहीं होता वही कालान्तर में मनस्तापी हो जाता है। उसने कामुकता को सर्वशक्तिमान तथ्य मानने पर भी आपत्ति प्रकट की है। उसके अनुसार प्रेम सक्रिय काम-प्रेरणा से अधिक होता है और वह ऐसी अलैंगिक तथा निष्क्रिय आवश्यकता है जिसको अवश्य स्वीकार किया जाना चाहिए। इस प्रकार हार्नी ने सुख सिद्धान्त को तो स्वीकार किया है परन्तु इसे कामुकता मानने पर आपत्ति की है।

एरिक फ्रॉम- मनोविश्लेषण के क्षेत्र में समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का समावेश विल्हेम राइक ने किया था, परन्तु इसका वास्तविक विकास एरिक फ्रॉम ने किया। फ्रॉम ने मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र का गहन अध्ययन किया था। फ्रॅम ने मनोविश्लेषण सम्बन्धी प्रशिक्षण बर्लिन के मनोविश्लेषण संस्थान से प्राप्त किया।

मनोविज्ञान में योगदान

फ्रॉम ने मनोविश्लेषण के क्षेत्र में समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण को विकसित किया। अपनी पुस्तक में उन्होंने मनोविश्लेषण में समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण पर बल दिया और इस सम्बन्ध में फ्रॉयड की आलोचना की।

- जैविक प्रवृत्तियाँ फ्रॉम ने मनुष्य की जैविक प्रवृत्तियों के विषय में बताया कि ये वृत्तियाँ समस्त मनुष्यों में समान रूप से पायी जाती हैं परन्तु उनकी तुष्टि का स्वरूप भिन्न होता है। यह व्यक्ति विशेष की सांस्कृतिक परम्परा और रीति-रिवाज पर निर्भर होता है। इस विषय में फ्रॉम ने लिखा है- "मनुष्य की प्रकृति, उसके भावावेग तथा उसकी चिन्ताएँ- सभी संस्कृति से उत्पन्न हुए है। वास्तव में, मनुष्य स्वयं सतत मानवीय प्रयत्नों की सृष्टि है, जिसके संकलन को हम इतिहास कहते हैं।"
- सम्बन्ध-स्थापना प्रक्रिया फ्रॉम ने मनोविज्ञान का केन्द्रीय विषय व्यक्ति की सम्बन्ध-स्थापना प्रक्रिया को माना है। किसी व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य उसकी सम्बन्ध-स्थापना क्षमता पर निर्भर होता है। यदि वह दूसरों से सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाता, तो

वह स्वयं असमंजित रह जाता है। दूसरी ओर, यदि वह दूसरों से अच्छा सम्बन्ध स्थापित कर सकने में सफल होता है तब उसको मानसिक तुष्टि प्राप्त होती है और उसका जीवन समन्वित हो जाता है।

- व्यक्ति का विकास फ्रॉयड के अनुसार व्यक्ति का विकास जैविक शक्तियों पर आधारित होता है। परनतु फ्रॉम ने बताया कि इनके अतिरिक्त कुछ अन्य तत्व भी है जो व्यक्ति का विकास करने में सहायक होते हैं। प्रेम, सौहार्द्र, क्रियात्मक शक्ति और चिन्तन के आधार पर भी व्यक्ति का विकास होता है।
- पलायन की प्रक्रिया जब कोई व्यक्ति मानसिक रूप से पीड़ित होता है तब वह इससे छुटकारा प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रक्रियाएँ करता है। फ्रॉम ने इन प्रक्रियाओं को पलायन की प्रक्रियाएँ माना है। उसने पलायन की चार प्रक्रियाएँ मानी हैं- स्वपीड़ा-रति, परपीड़ा-रति, ध्वंसात्मकता और अनुरूपता।

स्व पीड़ा-रति- यह पलायन की प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अपने आप को पीड़ा पहुँचाकर आनन्द का अनुभव करता है।

1. पर-पीड़ा-रति - पलायन की इस प्रक्रिया में व्यक्ति दूसरों को पीड़ा पहुँचाकर आनन्द का अनुभव करता है।
2. ध्वंसात्मकता- पलायन की यह तीसरी प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत व्यक्ति उन समस्त वस्तुओ का नाश कर देना चाहता है जो उसे अपनी दुर्बलता का बोध कराती है।
3. अनुरूपता- पलायन की चौथी प्रक्रिया अनुरूपता होती है। इसमें व्यक्ति यह प्रयास करता है कि वह अपने व्यक्तित्व को इस प्रकार से ढाले कि उसमें और अन्य व्यक्त्यिों में अनुरूपता आ जाये। वह सदैव यह प्रयास करता है कि उसमें और अन्य व्यक्तियों में कोई भेद-भाव न रह जाये।

- व्यक्तित्व व्यक्तित्व के बारे में बताते हुए फ्रॉम ने बाह्य जगत के साथ व्यक्तित्व के दो प्रकार के सम्बन्धों का उल्लेख किया है-

1. सात्मीकरण-व्यक्तित्व के सात्मीकरण का सम्बन्ध वस्तुओं से होता है। जन्मकाल से ही व्यक्ति अपने पर्यावरण की बातों के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करता है। सात्मीकरण का सांस्कृतिक पक्ष भी अत्यन्त महत्वपूर्णं है। व्यक्ति अपने सांस्कृतिक पर्यावरण के आधार पर ही वस्तुओं से अपना सम्बन्ध स्थापित करता है।
2. सामाजीकरण-सामाजीकरण का सम्बन्ध मनुष्यों से होता है। सामाजीकरण के अन्तर्गत व्यक्ति दूसरों से अपने सम्बन्ध स्थापित करता है। फ्रॉम के अनुसार व्यक्ति का विकास उसकी दूसरों से सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता पर निर्भर होता है। वास्तव

में, सात्मीकरण सामाजीकरण दोनों एक-दूसरे पर आधारित हैं। इन दोनों को फ्रॉम ने अभिस्थापन माना है। उसने इन अभिस्थापनों को ही व्यक्तियों के चरित्र का सार माना है। ये अभिस्थापन व्यक्ति के पर्यावरण द्वारा निर्मित होते हैं और यह समझना गलत है कि अभिस्थापनों का निर्धारण वंशानुक्रम से होता है।

- **चरित्र-**फ्रॉम के अनुसार व्यक्ति के चरित्र का विकास उसके जीवन के अनुभवों पर आधारित होता है। सात्मीकरण तथा सामाजीकरण की प्रतिक्रियाएँ भी चरित्र-विकास में सहयोग देती है। फ्रॉम ने लिखा है,''चरित्र के माध्यम से व्यक्ति की ऊर्जा प्रकट होती है और अपने पर्यावरण में समंजन स्थापित करते हुए वह अपनी ऊर्जा को आवश्यकताओं से तुष्टि के लिए प्रकट करता है। फ्रॉम ने व्यक्ति के चरित्र को दो प्रकार का बताया है- वैयक्तिक चरित्र-वैयक्तिक चरित्र का सम्बन्ध व्यक्ति की उन जन्मजात क्षमताओं से है जो वह अपने परिवार से प्राप्त करता है। व्यक्ति के आनुवंशिक तत्व तथा शैशवकालीन अनुभव वैयक्तिक चरित्र का निर्माण व विकास करते हैं। सामाजिक चरित्र- सामाजिक चरित्र का सम्बन्ध व्यक्ति के समाज तथा संस्कृति से होता है।

हैरी स्टैक सुलीवान

हैरी स्टैक सुलीवान की गणना उन नवीन मनोविश्लेषकों में होती है जिन्होंने मनोविश्लेषण के क्षेत्र में नवीन सिद्धान्तों एवं विचारों को प्रतिपादित करते हुए एक नवीन मनोवैज्ञानिक पद्धति स्थापित की तथा फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित अनेक आधारभूत प्रत्ययों ; जैसे- लिबिडो, इगो, इद इत्यादि को अस्वीकार किया, यहाँ तक कि उसने फ्रॉयड की शब्दावली तक को भी प्रयुक्त नहीं किया। अपने विचारों के लिए उसने बिल्कुल नवीन प्रत्ययों तथा संकल्पनाओं का निर्माण किया। इसके अतिरिक्त सुलीवान ने मानसिक चिकित्सा में सामाजिक दृष्टिकोण पर बल दिया।

मनोविज्ञान में योगदान

- व्यक्तित्व का विकास सुलीवान ने मनोविश्लेषण का गहन अध्ययन किया और तत्पश्चात मानसिक चिकित्सक के रूप में कार्य प्रारम्भ किया। रोगियों की मानसिक चिकित्सा करते हुए उसने इस तथ्य पर प्रकाश डाला कि मानसिक रोगों का प्रमुख कारण व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों का त्रुटिपूर्ण हो जाना है। इस तथ्य की व्याख्या करते हुए उसने बतलाया कि व्यक्ति के सम्बन्ध किस प्रकार विकसित होते हैं। सुलीवान के अनुसार ज्यों-ज्यों व्यक्ति दूसरों के सम्पर्क में आता जाता है त्यों-त्यों वह दूसरों से अपने सम्बन्धों को स्थापित करता जाता है। यह सिलसिला शैशवकाल से ही चला आता है। जन्म के पश्चात जिस प्रकार के व्यक्तियों के सम्पर्क में शिशु आता है, उसी आधार पर वह अपने सम्बन्ध विकसित करता जाता है। इस प्रकार शिशु का व्यक्तित्व उसके वैयक्तिक और सामाजिक जीवन से तथा सांस्कृतिक पर्यावरण से प्रभावित होता है।

सुलीवान ने मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास की छह अवस्थाएँ मानी हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैः

1. शैशव -सुलीवान के मतानुसार व्यक्तित्व के विकास की प्रथम अवस्था शैशव है। उसने बच्चे के जन्म से लेकर बोलना सीखने तक की अवधि की शैशव माना है। इस अवस्था में शिशु असीमित सुख चाहता है और साथ ही साथ अपनी शक्तियों की अभिव्यक्ति भी करता है। शैशव अवस्था में शिशु का अपनी माता से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध होता है और वह माता के व्यवहारों तथा भावों से प्रभावित होता है। परन्तु कालान्तर में धीरे-धीरे उसके सम्बन्ध अन्य व्यक्तियों से भी होने लगते हैं और शैशव के समाप्त होने तक उसमें ’स्व‘ का उदय हो चुका होता है।
2. बाल्यावस्था-व्यक्तित्व विकास की दूसरी अवस्था बाल्यकाल अथवा बचपन है। इस अवस्था में बालक अन्य बालकों से अपना सम्बन्ध स्थापित करता है और इस प्रकार उसका सामाजीकरण होने लगता है। उसके ’स्व‘ का भी पर्याप्त विकास होता है। उसकी जो इच्छाएँ अस्वीकार कर दी जाती हैं उनका वह उन्नयन कर लेता है और अतृत्प इच्छाओं के बारे में दिवास्वप्न देखता है।
3. अल्पवयस्क अवस्था- व्यक्तित्व-विकास की तीसरी अवस्था अल्पवयस्क अवस्था होती है। इस अवस्था में बालक दूसरों का आदर करना सीखता है और सर्वप्रिय बनना चाहता है। माता-पिता पर निर्भरता का प्रभाव कम होने लगता है।
4. पूर्व-किशोरावस्था-व्यक्तित्व-विकास की चौथी अवस्था पूर्व-किशोरावस्था है। सुलीवान ने इसे बालक की आयु के साढ़े आठ वर्ष से बारह वर्ष तक की अवधि को माना है। इस अवधि में बालक में प्रायः समान लिंग के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। उसमें प्रेम-भावना का उदय होता हे। वह अपनी संस्कृति तथा समाज के अनुरूप व्यवहार करने का प्रयत्न करता है।
5. किशोरावस्था- व्यक्तित्व-विकास की पाँचवीं अवस्था किशोरावस्था होती है। इस अवस्था में किशोर में काम-वासना का उदय होता है और वह भिन्न लिंग के प्रति आकर्षण अनुभव करने लगता है। काम सम्बन्धी कठिनाइयों पर विजय पा लेने पर उसमें प्रौढ़ता आ जाती है तथा वह समाज और संस्कृति के अनुरूप जीवन व्यतीत करने लगता है।
6. उत्तर-किशोरावस्था-व्यक्तित्व-विकास की अन्तिम अवस्था को सुलीवान ने उत्तर-किशोरावस्था बताया है। किशोर के व्यक्तित्व का विकास वास्तव में इसी अवस्था में होता है। व्यक्ति इस अवस्था में प्रौढ़ता प्राप्त करता है और संस्कृति तथा समाज से स्वीकृत व्यवहारों को अपनाता है। परन्तु कभी-कभी व्यक्ति अपनी जैविक तथा

भावनात्मक कठिनाइयों के फलस्वरूप संकट में पड़ जाता है। सम्भवतः इसीलिए प्रत्येक समाज में उसकी संस्कृति के आधार पर किशोरों को प्रशिक्षण दिया जाता है।

- व्यवहार सुलीवान के अनुसार सामान्य रूप से व्यक्ति के व्यवहार के दो लक्ष्य होते हैं-

1. तुष्टि - व्यक्ति अपनी जैविक आवश्यकताओं ; जैसे- भूख, प्यास, विश्राम, काम इत्यादि की पूर्ति के लिए जो व्यवहार करता है उससे उसे तुष्टि अथवा सन्तोष प्राप्त होता है।
2. सुरक्षा- व्यक्ति समाज और संस्कृति की आवश्यकताओं के अनुसार जब व्यवहार करता है तब उसमें रक्षा की भावना का उदय होता है

- अनुभव सुलीवान ने अनुभव के स्वरूप की व्याख्या करते हुए बताया कि जो कुछ व्यक्ति में घटित हो रहा है, वह अनुभव है। उसके मतानुसार अनुभव तीन प्रकार के होते हैं-

1. मूल अनुभव-व्यक्ति जो अनुभव भाषा-क्षमता और ज्ञान से पूर्व प्राप्त करता है, वे मूल अनुभव होते हैं।
2. वैयक्तिक-जब शिशु में बोलने की क्षमता आ जाती है तथा आयु और अनुभव की दृष्टि से वह कुछ विकसित हो जाता है तब उसे वैयकितक अनुभव प्राप्त होते हैं।
3. सामाजिक-जब शिशु अपने और पराये में भेद करने लगता है तथा अपने पर्यावरण की वस्तुओं और प्राणियों से परिचित हो जाता है तब उसके अनुभवों का स्वरूप सामाजिक हो जाता है।

मानसिक चिकित्सा-विधि

मानसिक चिकित्सा में सुलीवान ने सामाजिक पक्ष पर पर्याप्त बल दिया। सुलीवान मानसिक व्याधियों का कारण व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों का त्रुटिपूर्ण हो जाना मानता है। अतः किसी भी मानसिक रोगी की चिकित्सा करते हुए यह आवश्यक है कि उसके वर्तमान पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाय तथा रोगी के सामाजिक सम्बन्धों में जो बाधाएँ आ गयी है उनको दूर किया जाये। इस प्रकार सुलीवान ने इस बात पर बल दिया कि रोगी तथा चिकित्सक दोनों के लिए यह आवश्यक है कि वे एक-दूसरे के विचारों को भलीभाँति जानें और समझें। उनमें ऐसा पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित हो आपस की दूरी समाप्त हो जाय|

7.9 सारांश

सिगमण्ड फ्रॉयड ने मनोविश्लेषण की स्थापना की। मनोविश्लेषण जहाँ एक विधि है वहाँ मानसिक चिकित्सा और मनोविज्ञान का विशेष समप्रदाय भी। फ्रॉयड ने मानवीय क्रियाओं में अचेतन के कार्य पर जोर दिया है। अचेतन मानव मन का वह स्तर है जो प्रत्यक्ष रूप से चेतना का विषय नहीं है। युंग ने सामूहिक अचेतन का प्रत्यय उपस्थित किया है। व्यक्तित्व की संरचना में फ्रॉयड ने तीन तत्व माने हैं- इद, इगो और सुपर इगो। मानव व्यवहार इन्हीं तीन की अन्तः क्रियाओं का परिणाम है। इस सम्बन्ध में फ्रॉयड का सिद्धान्त मनोवैज्ञानिक होने के साथ-साथ जैविकीय और सामाजिक

भी है। मानव मनोविज्ञान में परस्पर विरोधी ध्रुव होते हैं। इनके कारण उत्पन्न संघर्ष से छुटकारा पाने के लिए व्यक्ति जो उपाय ग्रहण करता है वे यन्त्र कहलाते हैं। इनमें मुख्य हैं शोधीकरण, विस्थापन, प्रतिक्रिया निर्माण, दमन, प्रतिरोध, निरोध रूपान्तर, अवगति, युक्तिकरण, हस्तान्तरण, तादात्म्य, अन्तर्क्षेपण, प्रक्षेपण इत्यादि। फ्रॉयड की मानसिक चिकित्सा विधि में स्वप्न विश्लेषण का बड़ा महत्व है। फ्रॉयड के अनुसार स्वप्न इच्छापूर्ति हैं। उनमें कामुक वासनाओं का विशेष महत्व है। अव्यक्त स्वप्न क्रिया के द्वारा अभिव्यक्त होता है। स्वप्न-क्रिया में मुख्य यन्त्र है संक्षेपण, विस्थापन, नाट्यीकरण, प्रतीकीकरण और परिवर्ती विस्तार। फ्रॉयडीय विधि में मुक्त साहचर्य के द्वारा स्वप्न का विश्लेषण किया जाता है। मानसिक रोग की अधिकतर प्रवृत्तियों का उद्गम मनो-यौनिक आक्रामकता है। फ्रॉयड ने बालकों में भी यौन-प्रवृत्ति प्रबल मानी है। उसके अनुसार यौन-विकास में मुख्य अवस्थाएँ हैं- मौखिक, गुदा, लैंगिक, सुप्त और यौगिक मानव के व्यवहार में उसके यौन-विकास का बड़ा महत्व हैं फ्रॉयड ने दैनिक जीवन की भूलों के मानसिक कारणों के विषय में महत्वपूर्ण विचार उपस्थित किये हैं। मनोविष्लेषणवाद ने केवल मानसिक चिकित्सा के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि सौन्दर्यषास्त्र, साहित्य, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र और धर्म के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। परन्तु जहाँ फ्रॉयड के विचारों का भारी स्वागत हुआ है वहाँ उनकी तीव्र आलोचना भी हुई है। फ्रॉयड के सिद्धान्तों में मुख्य कमियाँ अनेक प्रयत्नों की अस्पष्टता और काम-वासना पर एकांगी जोर है। फिर भी निस्सन्देह बहुत कम मनोवैज्ञानिकों ने मानव मनोविज्ञान के विषय में इतनी अधिक जानकारी दी है जितनी फ्रॉयड के विचारों से मिलती है।

- ऑटो रांक रांक ने जन्म-त्रास का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। जन्म-त्रास से मुक्ति पाने के लिए संकल्प-शक्ति का स्वतन्त्र उपयोग होना चाहिए। संकल्प-शक्ति की तीन अवस्थाएँ होती हैं। - विरोधी संकल्प, प्रतिस्पर्धात्मक संकल्प और विधायक संकल्प।
- सेण्डर फेरेंजी फेरेंजी ने यथार्थ सम्बन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान की चार दशाएँ मानी हैं- अनुपाधिक, सर्वशक्तिमता इन्द्रजाल, सर्वशक्तिमता, इन्द्रजाल अंगविक्षेप सर्वशक्तिमता तथा विचारों और शब्दों का इन्द्रजाल। फेरेंजी की मनोचिकित्सा-विधि का मूल आधार विश्रान्ति है। विलहेम राइक राइक ने मानव व्यक्तित्व में सामाजिक तथा सांस्कृतिक प्रभावों पर विशेष जोर दिया। मानसिक रोगों की चिकित्सा के लिए उसने नई विधि निकाली।
- करेन हार्नी हार्नी ने नैतिक संघर्ष और उसकी अभिव्यक्तियों पर जोर दिया और अभिव्यक्ति की विभिन्नताओं के आधार पर अनुपालक, अग्रधर्षी और तटस्थ प्रकार के व्यक्तित्व में अन्तर किया। हार्नी ने सुख के सिद्धान्त की व्यापक व्याख्या की।
- एरिक फ्रॉम एरिक फ्रॉम ने मनोविश्लेषण में समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति पर जोर दिया। उसने जैविक प्रवृत्तियों की तुष्टि में व्यकित्त्व-अन्तर पर जोर दिया। उसके अनुसार मनोविज्ञान का केन्द्रीय विषय व्यक्ति की सम्बन्ध-स्थापन प्रक्रिया है। मानसिक रोग से पीड़ित व्यक्ति पलायन की तीन प्रक्रियाएँ अपनाता है-स्वपीड़ा, रति, परपीड़ा-रति और ध्वंसात्मकता

तथा अनुरूपता। बाह्य जगत से व्यक्ति के सम्बन्ध दो प्रकार के होते हैं-सात्मीकरण और सामाजीकरण। चरित्र के दो प्रकार है- वैयक्तिक और सामाजिक।

- हैरी स्टैक सुलीवान सुलीवान ने फ्रॉयड के अनेक प्रयत्नों को बिलकुल नहीं माना और नवीन प्रत्ययों का निर्माण किया। उसने व्यक्तित्व के विकास में छह अवस्थाएँ मानी- शैशव, बाल्यावस्था, अल्प-वयस्क अवस्था, पूर्व-किशोरावस्था, किशोरावस्था ओर उत्तर-किशोरावस्था। उसने व्यवहार के दो लक्ष्य माने-तुष्टि और सुरक्षा। उसके अनुसार अनुभव तीन प्रकार के होते हैं- मूल, वैयक्तिक और सामाजिक। उसने मानसिक चिकित्सा में सामाजिक पक्ष पर बल दिया।

7.10 मूल्यांकन प्रश्न

- प्रश्न 1. फ्रॉयड के मनोविश्लेषणवाद को समझायें ?
- प्रश्न 2. युंग और एडलर का मनोविश्लेषवाद फ्रॉयड के मनोविश्लेषण से किस रूप में भिन्न है ?
- प्रश्न 3. नवविश्लेषणवाद क्या है?

7.11 संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ0 रामनाथ शर्माः 'मनोविज्ञान का इतिहास' लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा-3
2. फ्रॉयड, एस. साइकिक मेकेनिज्म ऑफ हिस्टोरिकल फिनोमिना (1893)।
3. फ्रॉयड, एस. स्टडीज इन हिस्टीरिया (1895)
4. फ्रॉयड, एस. व इन्टरप्रोटेशन ऑफ ड्रीम्स, मैकमिलन (1910)।
5. फ्रॉयड, एस. साइकोपैथोलॉजी ऑफ एवडीडे लाइफ, लन्दन (1904)।
6. फ्रॉयड, एस. न्यू इन्ट्रोडक्टरी लेक्चर्स इन साइकोएनालिसिस, लन्दन (1934)।
7. वुडवर्थ, आर,एस. कन्टेम्परेरी स्कूल्स ऑफ साइकोलॉजी, रोनाल्ड प्रेस (1948)।
8. फ्रॉम, ई. द फीयर ऑफ फ्रीडम, केगनपाल, 1937 ।
9. हार्नी, के. द न्युरॉटिक पर्सनैलिटी ऑफ अवर टाइम, केगनपाल 1927 ।
10. लौरेण्ड, ए. एस.: साइकोएनालिसिस टु-डे, इन्टरनेषनल यूनीवर्सिटीज प्रेय, 1944 ।
11. मर्फी, जी. और जनमन, एफ.: एप्रोचेज टु पर्सनैलिटी, कावर्ड मैनकेन, 1932 ।

इकाई 8. व्यवहारवाद (पेवलोव, स्कीनर, गुथरी और हल) (Behaviouristic (Pavlov, Skinner, Guthri and Hull)

इकाई की रूपरेखा

8.0 प्रस्तावना

8.1 उद्देश्य

8.2 व्यवहारवाद

8.2.1 पैंवलाव

8.2.2 स्कीनर

8.2.3 **गुथरी**

8.2.4 **हल**

8.3 अभ्यास प्रश्न

8.4 सारांश

8.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.6 निबन्धात्मक प्रश्न

8.7 संदर्भ पुस्तकें

8.0 प्रस्तावना

व्यवहारवाद एक सम्प्रदाय के रूप में विकसित हुआ था। व्यवहारवाद की स्थापना वाटसन ने की थी। व्यवहार के अनुसार मनोविज्ञान की विषय सामग्री मानव व्यवहार का अध्ययन होना चाहिये ना कि चेतना। चेतना तो एक अनिश्चित परिकल्पना होती है, जिसका प्रयोग सम्भव नहीं है। व्यवहारवाद के बाद कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा नवव्यवहारवाद की स्थापना की, जिनमें पैवलाव तथा स्कीनर का नाम प्रसिद्ध है। इन्होंने 'सीखने के सिद्धान्तों' को समझाया। पैवलाव के अनुसार मनोविज्ञान का अध्ययन केवल दैहिक वैज्ञानिक ही कर सकता है, वह भी प्रतिवर्त द्वारा। स्कीनर ने अपना अध्ययन सामान्य एवं असामान्य व्यक्तियों पर ना करके पशुओं पर किया।

प्रस्तुत इकाई में आप पैवलाव एवं स्कीनर के मनोवैज्ञानिक योगदानों के साथ साथ गुथरी और हल के सिद्धांत को भी जान सकेंगे।

8.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:-

- व्यवहारवाद के अन्तर्गत पैवलाव एवं स्कीनर के योगदानों का अध्ययन कर सकेंगे।
- व्यवहारवाद के अन्तर्गत गुथरी और हल के योगदानों का अध्ययन कर सकेंगे।

8.2 व्यवहारवाद

व्यवहारवाद के अन्तर्गत बी0एफ0स्कीनर का नाम एक स्तम्भ के रूप में लिया जाता है। स्कीनर ने सीखने के नियमों एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। उनका सबसे बडा योगदान "पहेली बाक्स" है जिसके माध्यम से उन्होंने अनेक प्रयोग किये और सीखने सम्बन्धी सिद्धान्तों का विकास किया।

8.2.1 आई0पी0पैवलोव (1849-1936)-

1. सीखने के सिद्धान्तों में सबसे अधिक वैज्ञानिक तथा प्रचलित पैवलोव का 'अनुबन्धन' है। पैवलोव का जन्म रूस के एक देहात में 1849 में हुआ था। जब वह पाचन-ग्रंथियों की नाड़ियों तथा प्रतिवर्त पर अध्ययन कर रहे थे, उस समय उन्होंने एक विशेष यन्त्र का निर्माण किया। इस यन्त्र के द्वारा कुत्ते के मुंह से निकलने वाली लार, जिस समय उसके मुंह में खाना रखा जाता था, का मापन किया जाता था। इस प्रयोग में पैवलोव ने यह महसूस किया कि जैसे ही कुत्ते के पास भोजन की प्लेट लायी जाती है, तभी कुत्ते के मुंह से लार निकलने लगती है। यहां तक कि भोजन की प्लेट लाने वाले के पैरों की आहट-मात्र से ही कुत्ते के मुंह से लार टपकना शुरू हो जाता है। उसने यह पाया कि भोजन की प्लेट या लाने वाले की आहट कोई वास्तविक उद्दीपक नहीं थे जो लार प्रतिवर्त का निर्माण करते थे। यह तो केवल एक सिगनल था कि भोजन मिलने वाला है। इस प्रकार के सिगनल उस समयएक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिस समय पशु अपने वातावरण के साथ पूर्व सामंजस्य स्थापित करना चाहता है। प्रारम्भ में तो पैवलोव ने लार निकलने की क्रिया को लार-प्रतिवर्त कहा, किन्तु बाद में उन्होंने इसे अनुबन्धित-प्रतिवर्त कहा और

सिगनल (भोजन की प्लेट या पैरों की आहट) को अनुबन्धित उद्दीपक कहा। अनुबन्धन प्रतिवर्त एक सीखी हुई अनुक्रिया थी।

2. पैवलोव ने सबसे पहला प्रयोग बडे आसान तरीके से पूरा किया। कुत्ते के सामने खडे होकर हाथ में रोटी का टुकडा देखते ही लार-स्राव होने लगता है। इसके बाद उसे रोटी खाने को दी गई। लार-स्राव की अनुक्रिया होने लगी। इस अनुक्रिया को उसने स्वाभाविक प्रतिवर्ती अनुक्रिया कहा । क्योंकि इसे सीखना नहीं पडा। स्वाभाविक प्रतिवर्ती अनुक्रिया को पैवलोव ने अनुबंधित प्रतिवर्त कहा। रोटी के टुकडे को देखकर जो लार-स्राव हुआ उसे प्रतिवर्ती अनुक्रिया नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उसे सीखना पडता है। सीखी हुई अनुक्रिया को पैवलोव ने अनुबन्धित प्रतिवर्त कहा। पैवलोव के अनुबन्धन सम्बन्धी प्रयोग की तीन दशाऐं होती है-

प्रयोग के रूप में अवस्थाऐं

- **प्रशिक्षण से पूर्व की अवस्था-**

ध्वनि-तटस्थ उद्दीपक -उन्मुखता अनुक्रिया

भोजन-अनानुबन्धित उद्दीपक(UCS)- लार-स्राव- अनानुबन्धित अनुक्रिया (UCR)

- **प्रशिक्षण काल की अवस्था-**

ध्वनि-अनुबन्धित उद्दीपक (CS)

भोजन-अनानुबन्धित उद्दीपक(UCS) लार-स्राव - अनानुबन्धित अनुक्रिया(UCR)

- **प्रशिक्षण के बाद की अवस्था -**

ध्वनि- अनानुबन्धित उद्दीपक(CS)- लार-स्राव - अनानुबन्धित अनुक्रिया (UCR)

अनुबन्धित प्रतिवर्त एक अर्जित अनुक्रिया थी। पैवलोव जो भी प्रयोग कर रहा था उन पर उसका ध्यान कार्टिकल क्रियाओं पर था। इन प्रयोगों के करते-करते उसने एक और महत्वपूर्ण नियम का प्रतिपादन किया जिसे ''पुनर्बलन का नियम' कहते है ।

3. **अनुबन्धित प्रतिवर्त की देन** -वर्तमान समय में सीखने की समस्या पर सबसे अधिक कार्य किया जा रहा है। इस प्रकार के अध्ययन केवल पशुओं तक ही सीमित नहीं रहे हैं,

बल्कि मनुष्यों पर भी इस प्रकार के प्रयोगात्मक अध्ययन किये जा रहे है। मनोवैज्ञानिकों ने अनुबन्धित प्रतिवर्त की परिभाषा इस प्रकार की है। "प्रतिवर्त वह मूल प्रक्रिया है जिसमें कि कोई अनुक्रिया अनुबन्धित हो जाती है"। अनुबन्धित प्रतिवर्त ऐसी क्रिया है, जबकि स्वाभाविक उत्तेजक से जो अनुक्रिया होती है, वही कृत्रिम या अनुबन्धित उत्तेजक से आने लगे। भोजन एक स्वाभाविक उत्तेजक हे, जिसकी अनुक्रिया लार आना है, किन्तु जब यह लार जाने की क्रिया भोजन की अनुपस्थिति में कृत्रिम एवं अनुबन्धित उत्तेजक घंटी के बजने पर होने लगती है तो इसी क्रिया को अनुबन्धित प्रतिवर्त कहते (CR) है। क्लासीकल अनुबन्धित प्रतिवर्त पैवलोव के सिद्धान्त को इसी वर्ग के अन्तर्गत रखा जाता है। इसके निम्न चरण हैं -

- ❖ अनुबन्धित उद्दीपक - (CS) -घंटी--कोई उत्तर नही।
- ❖ अनानुबन्धित उद्दीपक -(UCS) -भोजन--- लार स्राव
- ❖ अनानुबन्धित उद्दीपक -(UCS) -घंटी--- लार स्राव

पैवलोव ने अपने परीक्षणों के आधार पर मानसिक क्रियाओं और ग्रन्थियों के स्राव में व्यक्तिगत भेद पाया। उसने पाया कि भोजन को देखने पर सभी कुत्तों में एक सा मानसिक स्राव नहीं होता है। यही नहीं, एक ही कुत्ता विभिन्न समय में विभिन्न मात्रा में स्राव उत्पन्न करता है। पैवलोव ने स्वंय कुत्ते पर किये गये अध्ययन में देखा कि जब कुत्ते को निरन्तर घंटी बजाने के साथ-साथ खना दिया जाता था, तो उसके मुंह से लार निकलना स्वाभाविक था, लेकिन कुछ समय पश्चात केवल घंटी के बजाने पर कुत्ते के मुंह से पहले की भांति लार निकलती थी। इस प्रकार उसने कुत्ते की लार को अनुबन्धित प्रतिवर्त कहा। पैवलाव के अनुसार सम्बद्ध प्रतिवर्त क्रिया को स्थायी बनाने के लिये पुनरावृत्ति जरूरी है। उन्होंने बताया कि हमारी कई असम्बद्ध प्रतिवर्त क्रियायें बन जाती है। पैवलाव के प्रयोग मनोविज्ञान के लिये महत्वपूर्ण देन है। इसके द्वारा अनुबन्धन की उपयोगिता से सीखने के क्षेत्र में कई लाभ प्राप्त हुए।

8.2.2 बी0एफ0 स्कीनर

स्कीनर का जन्म 1904 में हुआ था। स्कीनर की रूचि सीखने के नियमों एवं सिद्धान्तों में थी। इन प्रयोगों में प्रयोज्य के रूप में उन्होंने चूहों का प्रयोग किया गया था। उन्होंने एक विशेष बक्सा बनवाया जो बाद में स्कीनर बक्स के नाम से मनोविज्ञान में मशहूर हुआ। मनोविज्ञान के क्षेत्र में स्कीनर के द्वारा दिये गये निम्नलिखित योगदान हैं-

1. **अनुबन्धन का मनोविज्ञान**-स्कीनर द्वारा दिये गये अनुबन्धन को साधनात्मक अनुबन्धन या क्रियाप्रसूत अनुबन्धन कहा गया है। स्कीनर ने अनुक्रिया को दो भागों में बॉटा है-
   a. प्रतिवादी अनुक्रिया-प्रतिवादी अनुक्रिया वैसी अनुक्रिया को कहा जाता है जो किसी दिये गये उद्दीपन द्वारा उत्पन्न होती है।
   b. क्रियाप्रसूत अनुक्रिया -क्रियाप्रसूत अनुक्रिया में कोई विशिष्ट उद्दीपन की पहचान करना संभव नहीं हो पाता है। इन तरह की अनुक्रिया प्राणी द्वारा उत्पन्न की जाती है। स्कीनर ने सीखने में पुनर्बलन को काफी महत्वपूर्ण बतलाया है। यदि किसी क्रियाप्रसूत अनुक्रिया के करने के बाद पुनर्बलित उद्दीपन उपस्थित किया जाता है, तो इससे क्रियाप्रसूत अनुक्रिया की शक्ति बढ जाती है।
2. **स्कीनर के क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का एक मुख्य भाग पुनर्बलन-**अनुसूची है। पुनर्बलन अनुसूची से तात्पर्य एक ऐसे पुनर्बलन पैटर्न से होता है जिसे प्रयोगकर्त्ता प्राणी (या प्रयोज्य) को प्रयोग की परिस्थिति मे अनुक्रिया करने के बाद देता है। पुनर्बलन अनुसूची दो प्रकार की होती हैं-
   a. **सतत पुनर्बलन** - सतत पुनर्बलन वैसे पैटर्न को कहा जाता है जिसमें पुनर्बलन प्रत्येक सही अनुक्रिया करने के बाद प्राणी को दिया जाता है। इसका प्रयोग प्रायः प्रयोग की प्रारम्भिक अवस्था में किया जाता है।
   b. **आंशिक पुनर्बलन**- आंशिक पुनर्बलन से तात्पर्य वैसे पैटर्न से होता है जिसमें शुरू की कुछ सही अनुक्रिया के बाद पुनर्बलन दिया जाता है परन्तु बाद में सही अनुक्रिया के बाद पुनर्बलन नहीं दिया जाता है।

3. **प्रणोद -** स्कीनर ने प्रणोद को भोजन, पानी आदि के वंचन के रूप में या पशु के सामान्य शरीर वजन के रूप में बताया हैं। प्रणोद का मापन एक प्रेक्षणीय व्यवहार के रूप में किया जाता है जिसे मापा जा सकता है।
4. **संवेग-** जब किसी अनुक्रिया होने की संभावना होती है, तब प्राणी संवेग को दिखाता है। जब परिस्थिति से अनुबन्धित धनात्मक पुनर्बलन को हटा दिया जाता है, तो इससे व्यक्ति में विषाद उत्पन्न हो जाताहै।जैसे - एक परिवार में पिता धनात्मक पुनर्बलन का प्रमुख स्रोत होता हैं मगर उसकी मृत्यु हो जाती है, जो सदस्यों में विषाद की उत्पत्ति होती है। एस्टस एवं स्कीनर ने एक प्रयोग किया जिसमें यह दिखाया कि जब चूहों को बिजली से आघात पहुचाने के पहले एक सतत आवाज दी जाती थी, तो कुछ प्रयासों के बाद उसमें मात्र आवाज सुनने से ही दुश्चिंता उत्पन्न होती थी। वास्तविक जिन्दगी में हमलोग जब-जब किसी अरूचिकर परिस्थिति, अनहोनी घटना या उद्दीपन के आने की चेतावनी या सूचना मिलती है तो उससे व्यक्ति में चिन्ता होती है।
5. **व्यवहार परिमार्जन -** स्कीनर के सिद्धान्तों पर आधारित व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियां विभिन्न तरह के व्यवहारात्मक समस्याओं को दूर करने के लिए सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है।

8.2.3 एडविन रे गुथरी (1886 - 1945)

एडविन रे गुथरी एक अमेरिकी गणितज्ञ, दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने 20 वीं शताब्दी की व्यवहार परंपरा के लिए महत्वपूर्ण सिद्धांत विकसित किए। अन्य बातों के अलावा, गुथ्री के प्रस्तावों ने आदत संशोधन के लिए सीखने के सिद्धांतों और हस्तक्षेपों को प्रभावित किया .गुथरी का सन्निहित सिद्धांत यह निर्दिष्ट करता है कि "उत्तेजनाओं का एक संयोजन जो किसी आंदोलन के साथ होता है, उसकी पुनरावृत्ति पर उस आंदोलन का अनुसरण करने की प्रवृत्ति होती है"। गुथरी के अनुसार, सभी सीखना एक विशेष उत्तेजना और प्रतिक्रिया के बीच संबंध का परिणाम था।

इसके अलावा, गुथरी ने तर्क दिया कि उत्तेजना और प्रतिक्रियाएँ विशिष्ट संवेदी-मोटर पैटर्न को प्रभावित करती हैं; जो सीखा जाता है वह आंदोलन है, व्यवहार नहीं।

सन्निहितता सिद्धांत में, पुरस्कार या दंड सीखने में कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभाते हैं क्योंकि वे उत्तेजना और प्रतिक्रिया के बीच संबंध स्थापित होने के बाद होते हैं। सीखना एक ही परीक्षण (सभी या कोई नहीं) में होता है। हालाँकि, चूँकि प्रत्येक उत्तेजना पैटर्न थोड़ा अलग होता है, इसलिए सामान्य प्रतिक्रिया उत्पन्न करने के लिए कई परीक्षण आवश्यक हो सकते हैं। इस स्थिति से उत्पन्न होने वाला एक दिलचस्प सिद्धांत "पोस्टरिमिटी" कहलाता है जो निर्दिष्ट करता है कि हम हमेशा एक विशिष्ट उत्तेजना स्थिति के जवाब में आखिरी चीज़ सीखते हैं।

सन्निहितता सिद्धांत बताता है कि भूलना समय बीतने के बजाय हस्तक्षेप के कारण होता है; उत्तेजनाएँ नई प्रतिक्रियाओं से जुड़ जाती हैं।पिछली कंडीशनिंग को भय या थकान जैसी अवरोधक प्रतिक्रियाओं से जोड़कर भी बदला जा सकता है। प्रेरणा की भूमिका उत्तेजना और गतिविधि की स्थिति बनाना है जो ऐसी प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करती है जिन्हें अनुकूलित किया जा सकता है।

सन्निहितता सिद्धांत का उद्देश्य सीखने का एक सामान्य सिद्धांत होना है, हालाँकि इस सिद्धांत का समर्थन करने वाले अधिकांश शोध जानवरों पर किए गए थे। गुथरी ने अपने ढांचे (fremwork) को व्यक्तित्व विकारों पर लागू किया (उदाहरण के लिए (e.g. Guthrie, 1938).)

सन्निहितता सिद्धांत के लिए क्लासिक प्रायोगिक प्रतिमान बिल्लियों द्वारा पहेली बॉक्स से भागना सीखना है (गुथरी और हॉर्टन, 1946)। गुथरी ने एक ग्लास पैनल वाले बॉक्स का इस्तेमाल किया जिससे उन्हें बिल्लियों की सटीक हरकतों की तस्वीरें लेने की अनुमति मिली। इन तस्वीरों से पता चला कि बिल्लियाँ बॉक्स से भागने से पहले की हरकतों के समान क्रम को दोहराना सीख गईं। सुधार इसलिए होता है क्योंकि अप्रासंगिक हरकतें सीखी नहीं जातीं या उन्हें क्रमिक संबंधों में शामिल नहीं किया जाता। यह सिद्धांत बताता है कि कंडीशनिंग होने के लिए, जीव को सक्रिय रूप से प्रतिक्रिया देनी चाहिए (यानी, चीजें करना)। चूंकि सीखने में विशिष्ट आंदोलनों की कंडीशनिंग शामिल है, इसलिए निर्देश को बहुत विशिष्ट कार्य प्रस्तुत करना चाहिए। सामान्यीकृत प्रतिक्रिया उत्पन्न करने के लिए उत्तेजना पैटर्न में कई भिन्नताओं के संपर्क में आना

वांछनीय है। सीखने की स्थिति में अंतिम प्रतिक्रिया सही होनी चाहिए क्योंकि यह वह है जो जुड़ी होगी।

8.2.4 सी. एल. हल

हल ने 1915 में प्रबलन सिद्धांत का प्रतिपादन अपनी पुस्तक Principal of behavior में किया था| सिद्धांत के अर्थ को स्पष्ट करते करते हुए लिखा है सीखने का आधार आवश्यकता की पूर्ति की प्रक्रिया है| यदि कोई कार्य पशु या मानव की किसी आवश्यकता को पूर्ण करता है तो वह उसको सीख लेता है| आवश्यकता की पूर्ति के लिए हल ने आवश्यकता की कमी का प्रयोग किया है|

आवश्यकता की पूर्ति किस प्रकार सीखने की प्रक्रिया का आधार है इसको स्टोंस ने उदाहरण देकर स्पष्ट किया है एक भूखा पशु पिंजरे में बंद है पिंजरे के बाहर भोजन रखा है पिंजरा मटके को दबाने से खुलता है| अपनी भूख को संतुष्ट करने के लिए पशु क्रियाशील होता है| भोजन उसकी क्रियाशीलता को बलवती बनाता है अर्थात प्रबलन करता है| अतः पिंजरे से बाहर निकलने के लिए सभी प्रकार के प्रयास करता है| अपने प्रयासों के फल स्वरुप वह मटके को दबाकर बाहर निकलना सीख जाता है| इस प्रकार भोजन की आवश्यकता को संतुष्ट करने की प्रक्रिया द्वारा वह पिंजरे को खोलना सीख जाता है| सीखने का आधार यही है हल का कथन है सीखना आवश्यकता की पूर्ति की प्रक्रिया के द्वारा होता है|

सिद्धांत के गुण और विशेषताएं:

स्किनर ने इस सिद्धांत को वैज्ञानिक होने के कारण आदर्श सिद्धांत माना है और लिखा है अब तक सीखने के जितने भी सिद्धांत प्रस्तुत किए गए हैं उनमें यह सर्वश्रेष्ठ है| स्किनर के अनुसार हल का सीखने का सिद्धांत चालक न्यूनता का सिद्धांत है|

हल का कहना है कि जब प्राणी की कोई आवश्यकता पूर्ण नहीं होती है तब उसमें असंतुलन उत्पन्न हो जाता है, उदाहरण के लिए भोजन की आवश्यकता पूर्ण न होने पर प्राणी में तनाव उत्पन्न हो जाता है जिसके फलस्वरुप उसकी दशा असंतुलित हो जाती है साथ ही भूख का चालक उसे भोजन प्राप्त करने के लिए क्रियाशील बना देता है| कुछ समय के बाद वह ऐसी स्थिति

में पहुंच जाता है जब उसकी भोजन की आवश्यकता संतुष्ट हो जाती है| इसके फलस्वरुप भूख के चालक की शक्ति कम हो जाती है|

स्किनर के अनुसार हल का सिद्धांत उद्दीपक प्रतिक्रिया का सिद्धांत है| भोजन उद्दीपक का कार्य करता है जिसके कारण व्यक्ति विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएं करता है| हमने प्रबल के दो रूप बताए हैं जो विभिन्न अवस्थाओं में दृष्टिगोचर होते हैं| भोजन भूख के चालक को प्रबल बनता है| यह अवस्था प्राथमिक प्रबलन की है पर भूख उस समय तक शांत नहीं होती है जब तक भोजन का नहीं लिया जाता| अतः भोजन खाने से पहले भूख का चालक फिर प्रबल हो जाता है यह अवस्था द्वितीय प्रबलन की है|

यह सिद्धांत बालकों के शिक्षण में अत्यधिक बल देता है क्योंकि बालकों को प्रेरित करके ही उनके ज्ञान की आवश्यकता को पूर्ण किया जा सकता है| इस सिद्धांत की सबसे महत्वपूर्ण देन यह है कि यह बालकों को क्रिया और आवश्यकताओं में संबंध स्थापित किए जाने पर बल देता है| इसकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर ही पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाना चाहिए| इसके अतिरिक्त उनकी क्रियाओं का वास्तविक जीवन से संबंध होना चाहिए आधुनिक शिक्षा इन दोनों तथ्यों को स्वीकार करती है|

8.3 अभ्यास प्रश्न

- स्कीनर का सम्बन्ध वर्णनात्मक व्यवहारवाद से है।

  (सही/गलत)

- पैवलाव के प्रयोग में भोजन एक अनानुबन्धित उद्दीपक है।

  (सही/गलत)

- स्कीनर ने टाईप-एस एवं टाईप-आर अनुबन्धन को बताया।

  (सही/गलत)

8.4 सारांश

व्यवहारवाद की स्थापना वाटसन ने की थी। व्यवहार के अनुसार मनोविज्ञान की विषय सामग्री मानव व्यवहार का अध्ययन होना चाहिये ना कि चेतना। चेतना तो एक अनिश्चित परिकल्पना

होती है, जिसका प्रयोग सम्भव नहीं है। व्यवहारवाद के बाद कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा नवव्यवहारवाद की स्थापना की, जिनमें पैवलाव तथा स्कीनर का नाम प्रसिद्ध है। इन्होंने 'सीखने के सिद्धान्तों' को समझाया। पैवलाव के अनुसार मनोविज्ञान का अध्ययन केवल दैहिक वैज्ञानिक ही कर सकता है, वह भी प्रतिवर्त द्वारा। स्कीनर ने अपना अध्ययन सामान्य एवं असामान्य व्यक्तियों पर ना करके पशुओं पर किया ।गुथरी का सन्निहित सिद्धांत यह निर्दिष्ट करता है कि "उत्तेजनाओं का एक संयोजन जो किसी आंदोलन के साथ होता है, उसकी पुनरावृत्ति पर उस आंदोलन का अनुसरण करने की प्रवृत्ति होती है"। गुथरी के अनुसार, सभी सीखना एक विशेष उत्तेजना और प्रतिक्रिया के बीच संबंध का परिणाम था। इसके अलावा, गुथरी ने तर्क दिया कि उत्तेजना और प्रतिक्रियाएँ विशिष्ट संवेदी-मोटर पैटर्न को प्रभावित करती हैं; जो सीखा जाता है वह आंदोलन है, व्यवहार नहीं। हल ने 1915 में प्रबलन सिद्धांत का प्रतिपादन अपनी पुस्तक Principal of behavior में किया था| सिद्धांत के अर्थ को स्पष्ट करते करते हुए लिखा है सीखने का आधार आवश्यकता की पूर्ति की प्रक्रिया है| यदि कोई कार्य पशु या मानव की किसी आवश्यकता को पूर्ण करता है तो वह उसको सीख लेता है| आवश्यकता की पूर्ति के लिए हल ने आवश्यकता की कमी का प्रयोग किया है|

8.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

- सही
- सही
- सही

8.6 निबंधात्मक प्रश्न

- सीखने के उद्दीपन-अनुक्रिया सिद्धान्त में पैवलाव के योगदानों को बताइये।
- स्कीनर के योगदानों का वर्णन करिये।
- गुथरी के सिद्धान्त की विवेचना कीजिए|
- पुनर्बलन सिद्धांत का वर्णन कीजिए|

8.7 सन्दर्भ पुस्तकें

1. मनोविज्ञान के संप्रदाय एवं इतिहास - अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह - मोतीलाल बनारसी दास
2. मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं संप्रदाय - डॉ0 आर0के0ओझा - विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. मनोवैज्ञानिक विचारधारायें -के0एन0शर्मा - हर प्रसाद भार्गव, आगरा।
4. शिक्षा मनोविज्ञान- पी. डी. पाठक
5. Guthrie, E.R. (1930). Conditioning as a principle of learning. Psychological Review, 37, 412-428.
6. Guthrie, E.R. (1935). The Psychology of Learning. New York: Harper.

इकाई 9. मानवतावादी एवं अस्तित्वादी मनोविज्ञान (मैस्लो), क्षेत्र सिद्धांत (लेविन) (Humanistic and Existential Psychology (Maslow), Field theory (Levin)

इकाई की रूपरेखा

9.0 प्रस्तावना

9.1 उद्देश्य

9.2 मानवतावादी मनोविज्ञान

9.2.1 अब्राहम मैस्लो

9.2.2. कार्ल रोजर्स

9.3 अस्तित्ववादी मनोविज्ञान

9.3.1 लुइविंग विन्स वैनगर

9.3.2 मेडार्ड बांस

9.3.3 रोलो में

9.4 कर्ट लेविन का क्षेत्र सिद्धान्त

9.5 अभ्यास प्रश्न

9.6 सारांश

9.7 शब्दावली

9.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.9 निबन्धात्मक प्रश्न

9.10 सन्दर्भ पुस्तकें

9.0. प्रस्तावना

मानवतावादी मनोविज्ञान कोई संप्रदाय नहीं है बल्कि अलग-अलग स्कूलों के विभिन्न विचारो का एक समन्वित रूप है। मानवतावादी मनोविज्ञान पद का प्रतिपादन अब्राहम मैसलो ने 1962 में किया। इसमें मनुष्यों की सर्जनात्मक एवं अनतःशक्ति के विकास पर बल डाला गया है। मैस्लो

तथा रोजर्स दोनों ही मानव प्रकृति के बारे में आशावादी विचार रखते थे। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में जन्म से ही प्रेम, उदारता, दयालुता, आदि गुण होते हैं। यदि व्यक्ति को अनुकूल वातावरण प्राप्त होता है तो इन क्षमताओं का विकास होता है वरना उनकी ये क्षमतायें दमित हो जाती है। उनके अनुसार व्यक्ति अपने भाग्य का विधाता स्वंय होता है। उसका भाग्य पर्यावरणीय कारकों द्वारा निर्धारित नही होता है। प्रत्येक व्यक्ति में अपने अन्दर की अंतःशक्तियों को पहचानने की जन्मजात क्षमता होती है। अस्तित्ववादी मनोविज्ञान के अनुसार मनुष्य संसार में एक जीवित प्राणी के रूप में अपना अस्तित्व बनाने में सक्षम होता है। मनुष्य एक श्रेष्ठ प्राणी है जो कि पशुओं से बहुत अधिक श्रेष्ठ होता है। इसमें मनुष्य के वर्तमान अस्तित्व पर बल डाला गया है। कर्ट लेविन ने क्षेत्र सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया । उनके अनुसार क्षेत्र वह 'जीवन स्थान' है जिसमें व्यक्ति और उसका मनोवैज्ञानिक पर्यावरण पाया जाताहै। इसके अनुसार मानव व्यवहार के अध्ययन में उसके मनोवैज्ञानिक पक्ष पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये। मनुष्य मनोवैज्ञानिक पक्ष पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये । मनुष्य की प्रत्येक क्रिया किसी लक्ष्य प्राप्ति के लिये होती है और यह लक्ष्य उसके जीवन स्थान के क्षेत्र में पाया जाता है। यह जरूरी है कि मनोविज्ञान के अध्ययन के लिये व्यक्ति के जीवन-स्थान के क्षेत्र की सीमा को निश्चित कर लिया जाये और इसके बाद व्यक्ति के लक्ष्य या उद्देश्य को जाना जाये कि वह इन्हें प्राप्त करने के लिये क्या करता है? प्रस्तुत इकाई में आप मानवतावादी, अस्तित्ववादी मनोविज्ञान के बारे में जानेंगे तथा लेविन के क्षेत्र सिद्धान्त को समझ सकेंगे।

9.1 .उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:-

- मानवतावादी मनोविज्ञान के अन्तर्गत रोजर्स एवं मेस्लों के बारे में जान सकेंगे।
- अस्तित्ववादी मनोविज्ञान के अन्तर्गत आप विन्स वैगनर, मेडार्ड बांस, रोलो में के बारे में जान सकेंगे।
- कर्ट लेविन के क्षेत्र सिद्धान्त का अध्ययन कर सकेंगे।

9.2. मानवतावादी मनोविज्ञान

मानवतावादी मनोविज्ञान की निम्नलिखित मुख्य विशेषताऐं हैं -

- एक समग्रता के रूप में व्यक्ति-मानवतावादी मनोविज्ञान का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का एक संगठित रूप में अध्ययन करना है। मानवतावादी मनोविज्ञानी मानव के व्यवहार को समझने पर बल डालते है

- पूरे जीवन इतिहास पर बल-मानवतावादी मनोविज्ञान के अनुसार व्यक्ति कों समझने के लिए यह आवश्यक है कि उसके जीवन के पूरे इतिहास पर ध्यान दिया जाए।
- जीवन लक्ष्य के रूप में आत्म-सिद्धि -मानवतावादी मनोविज्ञान का संबंध जैविक आवश्यकताओं तथा मूल प्रवृत्ति की संतुष्टि से ही नहीं है बल्कि आत्म-सिद्धि का जीवन लक्ष्य के रूप में अध्ययन करने से है।
- व्यक्ति की आन्तरिक प्रकृति-मानवतावादी मनोविज्ञानी ने यह बतलाया है कि मानव प्रकृति मूल रूप से उत्तम होती है। व्यक्ति में बुरी तथा विध्वंसात्मक बलों की उत्पत्ति तब होती है जब उसे बुरा वातावरण का मिलता है।
- सर्जनात्मकता-मैस्लो ने सर्जनात्मकता को मानव प्रवृत्ति की एक विशेषता माना गया हे। जन्म के समय सर्जनात्मकता सभी व्यक्तियों में होती है।

9.2.1. अब्राहम मैस्लो

मानवतावादी मनोविज्ञान पद का प्रतिपादन अब्राहम मैस्लो ने 1962 में किया था। मैसलो को अमेरिका में मानवतावादी का आध्यात्मिक जनक माना जाताहै।उनके अनुसार मनुष्यों की प्रकृति आदरणीय एवं आत्म-सिद्धि से युक्त होती है। अगर पर्यावरणी अवस्थाऐं अनुकूल होती है, तो व्यक्ति में अपने भीतर छिपी अन्तःशक्तियों एवं क्षमताओं को पहचानने लगता है। इस तरह मानवतावादी मनोविज्ञान मनुष्यों के संर्जनात्मक एवं स्वस्थ अन्तः शक्ति के विकास पर बल डालता है और मानव के निराशावादी व संघर्ष आधारित विचारों का विरोध करता है। मैसलो को मानवतावादी मनोविज्ञान का जनक माना गया है। रोजर्स की तरह वे मानव प्रकृति के बारे में आशावादी विचार रखते थे। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में उदारता, स्नेह तथा दयालुता की जन्मजात क्षमता होती है। यदि उसे अनुकूल सामाजिक वातावरण मिलता है, तो ऐसी क्षमताऐं उत्पन्न होती है। परन्तु यदि उसे इस तरह का अनुकूल वातावरण प्राप्त नहीं होता है तो ऐसी अन्तः शक्तियों तथा क्षमताओं का दमन होता है। मैसलो के अनुसार सम्पूर्ण व्यक्ति किसी लक्ष्य की ओर अभिप्रेरित होता है। व्यक्ति हमेशा एक न एक आवश्यकता से हमेशा अभिप्रेरित रहता है। अगर व्यक्ति की एक आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है, दूसरी आवश्यकता अपने आप तुरंत उत्पन्न हो जाती है। ये आवश्यकता व्यक्ति के व्यवहार को निर्देशित करती है। उदाहरण-अगर भूख तथा प्यास की आवश्यकताऐं पूरी हो जाती है, तो व्यक्ति में सुरक्षा तथा रक्षा की आवश्यकता अपने आप

उत्पन्न हो जाती है। मैसलो ने व्यक्ति की मूल आवश्यकताओं को सबसे पहले पहचाना और उनका विश्लेषण किया। उनके अनुसार व्यक्ति की पांच आवश्यकताऐं होती है-

- **दैहिक आवश्यकता-** दैहिक आवश्यकता उन आवश्यकताओं को कहा जाता है जिसमें भोजन, जल, ऑक्सीजन, तापक्रम, यौन आदि की जरूरतें सम्मिलित होती है। ये आवश्यकताऐं सबसे निचले स्तर की तथा अधिक महत्व की होती है। जब तक इन आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती है, तो किसी अन्य उच्चस्तरीय आवश्यकता की उत्पत्ति नहीं हो सकती है। अगर कोई व्यक्ति भूखा है तो उसमें कभी भी अपनी सुरक्षा तथा सम्मान की बात मन में नहीं आयेगी। सबसे पहले वह अपने पेट भरने का प्रयास करेगा, इसके बाद अन्य आवश्यकताओं को सोचेगा। दैहिक आवश्यकताओं को चक्रीय आवश्यकता कहा जाता है।

  इनकी तुष्टि किसी दिये समय में पूरी हो सकती है परन्तु कुछ समय बीतने के बाद वे फिर से उत्पन्न हो सकती है। जैसे कुछ समय के बाद व्यक्ति को भूख दोबारा लग जाती है।
- **सुरक्षा आवश्यकता-**सुरक्षा आवश्यकता में दैहिक सुरक्षा की आवश्यकता, चिन्ता, खतरा तथा अस्त-व्यस्त से मुक्ति आदि की आवश्यकता सम्मिलित होती है। मैसलो के अनुसार व्यक्ति में सुरक्षा की आवश्यकता की उत्पत्ति तब होती है जब उसकी दैहिक आवश्यकताओं की तुष्टि हो जाती है। आपातकालीन परिस्थिति जैसे- युद्ध, दुर्घटना, आगजनी, आदि के दौरान सुरक्षा आवश्यकता मुख्य अभिप्रेरक के रूप में कार्य करते हैं।
- **स्नेह एवं सदस्यता की आवश्यकता -**जब व्यक्ति की दैहिक आवश्यकता एवं सुरक्षा की आवश्यकता पूरी हो जाती है, तो उसे स्नेह एवं सदस्यता की आवश्यकता होने लगती है। इस श्रेणी की आवश्यकता में दोस्ती, समूह, परिवार के व्यक्तियों को स्नेह देने की आवश्यकता आदि सम्मिलित होती है। जैसे- पत्नी या पति की आवश्यकता भी इसी श्रेणी की आवश्यकता है।
- **सम्मान की आवश्यकता-** जब पहली तीनों तरह की आवश्यकताऐं पूरी हो जाती है, तो व्यक्ति में सम्मान की आवश्यकता उत्पन्न होती है। इन आवश्यकताओं में शक्ति की आवश्यकता, आत्म-विश्वास, स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा, प्रशंसा, लोकप्रियता पाने आदि की आवश्यकता सम्मिलित होती है।

- **आत्म-सिद्धि की आवश्यकता-** आत्म-सिद्धि की आवश्यकता व्यक्ति में तब उत्पन्न होती है जब ऊपरी चारों तरह की आवश्यकताऐं पूरी हो जाती है। आत्म-सिद्धि से तात्पर्य आत्म-पूर्ति की आवश्यकता, अपनी अन्तःशक्तियों को अनुभव करने या उसका ज्ञान होने से होता है। आत्म-सिद्धि की आवश्यकता से तात्पर्य अपनी अन्तःशक्ति के शिखर पर पहुंचने से होता है ताकि वह पूर्ण रूप से एक कार्य सम्पन्न व्यक्ति बन सके। मैसलो ने इन पांच आवश्यकताओं को एक पदानुक्रम में व्यवस्थित किया। व्यक्ति के व्यवहार को अभिप्रेरित करने के लिए पहले निम्नस्तरीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है उसके बाद उच्च स्तरीय

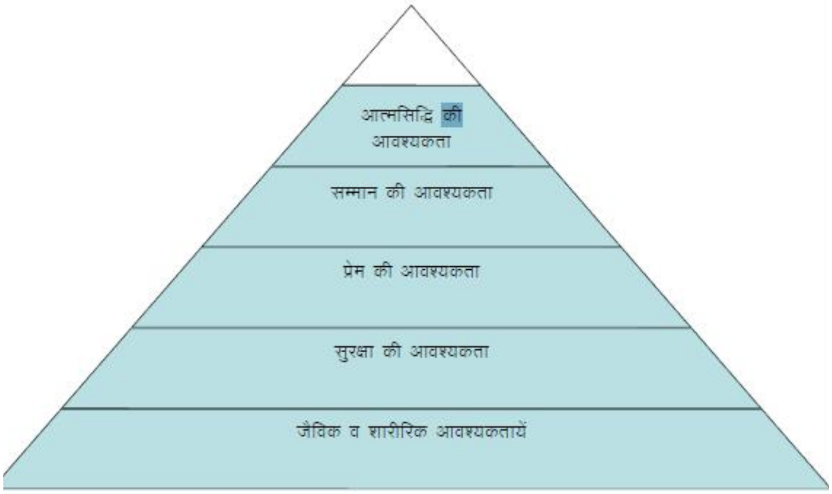

आवश्यकतायें पूरी हो पाती है। निम्नस्तरीय आवश्यकतायें यदि पूरी नही हो पायी तो उच्च स्तरीय आवश्यकता की उत्पत्ति नहीं होगी।

9.2.2. कार्ल रोजर्स

रोजर्स ने आत्मन्-सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। कार्ल रोजर्स का जन्म 1902 में इलिनोइस में हुआ था। रोजर्स ने आत्मन-सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया। उनके उपचार की विधि को क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा कहा गया। इस विधि में रोगी को क्लायंट कहा जाता है वह चिकित्सा के दौरान धीरे-धीरे अपनी मानसिक संघर्ष, इच्छाऐं एवं बलों को पहचानने लगता है। इस विधि में चिकित्सक की भूमिका निष्क्रिय होती है क्योंकि वह कभी भी रोगी को कोई सलाह अपनी ओर से नहीं देता है। रोजर्स के आत्मन्-सिद्धान्त को व्यक्ति-केन्द्रित सिद्धान्त भी कहा जाता है।

इस सिद्धान्त के निम्नलिखित मुख्य चार संप्रत्यय है-

- प्राणी- प्राणी से तात्पर्य एक ऐसे जैविक जीव से होता हे जो वातावरण के विभिन्न पहलुओं के प्रति अनुक्रिया करता है। परन्तु रोजर्स के अनुसार प्राणी से तात्पर्य उन अनुभूतियों से होता है जो किसी विशेष क्षण पूरे व्यक्ति में होते रहते हैं।

- आत्मन्-रोजर्स के अनुसार जब आत्मन् का विकास होता है तब शिशु में अच्छे तथा बुरे का ज्ञान हो जाता है। इससे वह अपनी अनुभूतियों का धनात्मक या ऋणात्मक रूप से मूल्यांकन भी करना प्रारम्भ कर देता है। रोजर्स का मत है कि किसी व्यक्ति में आत्मन् नहीं होता है बल्कि आत्मन् में ही प्राणी या जीव सम्मिलित होता है।
- आत्म-सिद्धि-रोजर्स का मत है कि प्रत्येक व्यक्ति में अपनी अनोखी अन्तःशक्ति की पहचान करने की जन्मजात प्रवृत्ति होती है। उनके अनुसार आत्म-सिद्धि एक ऐसा बल है जो व्यक्ति की आनुवंशिकता का एक हिस्सा होता है। आत्म-सिद्धि धीरे-धीरे सरलता से जटिलता की स्थिति में विकसित होते जाती है। जैसे-जैसे व्यक्ति की अनुभूतियां मजबूत होते जाती हैं उसका आत्मन् अधिक मजबूत होते जाताहै।ऐसी अनुभूतियों से व्यक्ति अधिक सर्जनात्मक हो जाता है। जिन व्यक्तियों में आत्म-सिद्धि पर्याप्त मात्रा में होती है, ऐसे व्यक्ति जिन्दगी के किसी मोड पर रूकना नहीं चाहते हैं।
- मनोविज्ञान विकास- मानव में मानसिक स्वास्थ्य तथा विकास वंशानुगत होते हैं। अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों को ठीक बनाने के लिए यह भी आवश्यक है कि वह स्वंय को भी ठीक रखें। वह स्वंय को स्वीकार करें तथा दूसरों की भी वास्तविकता को स्वीकार करें। जब दूसरे लोग उसे स्वीकार करते हैं तो वह तनाव रहित हो जाता है। विकास में बचपन से ही बाधायें आती है। प्रेरणायें आगे युवावस्था में व्यक्तित्व विकास में बाधक हो सकती है।
- सामाजिक सम्बन्ध- दूसरे व्यक्तियों के साथ अन्तःक्रिया ही उसके स्वयं या अनुभव को प्रकट करती हैं। दूसरों के साथ अन्तःक्रिया करने से ही हमारे व्यक्तित्व का पता चलता है। कुछ लोग दूसरों से दूर भागते हैं अर्थात वे दूसरों से सम्बन्ध बनाने में निपुण नहीं होते है।
- शादी- पति-पत्नी के सम्बन्ध के लिए भी पूर्ण क्रियाशीलता आवश्यक है। उनके सम्बन्धों से उन्हें संतोष मिलना चाहिए, वे उचित रूप से अपने विचार एक दूसरे तक पहुंचा सकें, एक-दूसरे की आशा पूर्ण करने में वे बाधक न हों, न ही अपनी इच्छा दूसरों पर थोपें व दोनों के स्वयं का पर्याप्त रूप से विकास हो। इसी से समर्पण भाव उत्पन्न होता है।
- संवेग- स्वस्थ्य व्यक्ति को अपने संवेगों का पता रहता है। कई बार वह सुरक्षात्मक व्यवहार करता है, जिसका पता उसे रहता है। वह उसे आत्म-छवि के लिए खतरा ही समझता है।

9.3. अस्तित्ववादी मनोविज्ञान

अस्तित्ववादी मनोविज्ञान की निम्नलिखित विशेषताऐं हैं.-

- अस्तित्व मनोविज्ञान का उद्देश्य मनुष्य का एक ऐसे व्यक्ति के रूप में अध्ययन करना होता है जो संसार में एक जीवित प्राणी के रूप में अपना अस्तित्व बनाये रखने में सक्षम होता है।
- प्रत्येक व्यक्ति की आन्तरिक जिन्दगी अनोखी होता है जिसमें अलग-अलग तरह के प्रत्यक्षण होते हैं। उसके भीतर बाह्य वातावरण के मूल्यांकन की भिन्न-भिन्न क्षमताऐं भी होती हैं। व्यक्ति की आन्तरिक जिन्दगी अनोखी होती है।
- अस्तित्ववादी मनोविज्ञान का उद्देश्य व्यक्ति को उसके पूरे अस्तित्व के बारे में समझना है।
- अस्तित्ववादी मनोविज्ञान के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपने अस्तित्व के लिए स्वंय जवाबदेह होता है। वह अपने अस्तित्ववादी विचारों का मालिक स्वयं होता है। उस पर कोई बाह्य वातावरण का प्रभाव नहीं पडता है। वह स्वयं अपने ही यह निर्णय करता है कि वह क्या करेगा या क्या नहीं करेगा।

अस्तित्ववादी मनोविज्ञानिकों के योगदान

अस्तित्ववादी मनोविज्ञान के क्षेत्र में कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा महत्वपूर्ण योगदान दिये गये हैं, जो निम्न प्रकार हैं-

9.3.1. लुडविंग विन्स वैनगर (1881-1966)

विन्सवेनगर एक स्वीस मनोवैज्ञानिक थे। उनके अनुसार एक मानव के रूप में व्यक्ति का अस्तित्व संसार से अलग नहीं होता है और संसार का अस्तित्व भी व्यक्ति से अलग हटकर कुछ नहीं होता है। मानव तथा संसार की वस्तुओं के बीच कोई स्पष्ट अन्तर नहीं होता है। इसका मतलब यह हुआ कि इन दोनों में एकरूपता होती है। उनके अनुसार व्यक्ति अपने भीतर छिपे हुए अन्तःशक्ति की पूर्ण पहचान कर सकने में समर्थ हो सकता है। जब कोई व्यक्ति अपने ऊपर दूसरों के प्रभाव को पडते देखता है या वह पर्यावरणी प्रभावों के चपेट में आ जाता है, तो उसकी वास्तविकता नहीं रह जाती है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'विइंग इन दी वर्ल्ड' में व्यक्ति के चार तरह के तरीकों का वर्णन किया गया है-

- व्यक्तिगत तरीका - इसमें व्यक्ति अकेला रहना पंसद करता है तथा वह किसी भी तरह की अन्तःक्रिया दूसरों के साथ नहीं करता है।
- द्वैध तरीका - इसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ अन्तःक्रिया करता है। इसे विन्सवेगनर ने मानव अस्तित्व का सबसे मौलिक एवं महत्वपूर्ण तरीका बतलाया है। इससे व्यक्ति के दोस्ताना संबंध विकसित होते है।
- अनेक वादी तरीका - इसमें व्यक्ति वातावरण या संसार के कई व्यक्तियों के साथ अन्तःक्रिया करता है। प्रतिस्पर्धा, संघर्ष, प्रयास आदि इस तरीका का ही परिणाम है।

- अनाभाव तरीका - इस तरीके में व्यक्ति के अपने चिन्तन या विचार थोड़ी देरे के लिए समाप्त हो जाता है और भीड़ में एक तरह से वह जाता हैं।उन्होंने वास्तविकता के तीन प्रकार बतलाये जाते है-
  - भौतिक वास्तविकता - इसमें व्यक्ति के इर्द-गिर्द की वस्तुऐं आदि सम्मिलित होती है।
  - मानवीय पर्यावरण- मानवीय पर्यावरण में वातावरण के अन्य व्यक्तियों की अन्तःक्रियाऐं होती है।
  - स्वयं व्यक्ति- स्वयं व्यक्ति अपने द्वारा किये गए क्रियाओं के बारे में सोचता है।

उनका मत था कि व्यक्ति को चयन की पूरी स्वतंत्रता होती है। अतः वह क्या करेगा क्या नहीं, इसके लिए वह स्वयं ही उत्तरदायी होता है। उनके अनुसार एक बच्चे के अस्तित्व का तरीका वयस्क के अस्तित्व के तरीका से हमेशा भिन्न होता है। इसका मतलब यह हुआ कि अस्तित्व में परिवर्तन होता है और व्यक्ति हमेशा इसे उत्तम बनाने की कोशिश करता है।

9.3.2. मैडार्ड बॉस

मेडार्ड बॉस भी एक अस्तित्ववादी मनोवैज्ञानिक थे। उन्होंने मानव अस्तित्व की निम्नलिखित विशेषताओं को बताया:-

- **स्थानिकता-** स्थानिकता से तात्पर्य मनोवैज्ञानिक निकटता या दूरी से होता है। उदाहरण - एक व्यक्ति अपने माता-पिता से हजारों किलोमीटर दूर रहने पर भी मनोवैज्ञानिक रूप से नजदीक हो सकता है।
- **अल्पकालिकता-** अस्तित्व के अल्पकालिकता से तात्पर्य इस बात से होता है कि व्यक्ति को कोई कार्य करने का समय पर्याप्त होता है या नहीं होता है।
- **शारीरिकता-** शारीरिकता से तात्पर्य सिर्फ दैहिक मानव शरीर से नहीं होता है बल्कि संसार से व्यक्ति के संबंधों से भी होता है।
- **हिस्सेदारी-** अस्तित्व के हिस्सेदारी से तात्पर्य संसार के अन्य लोगों के साथ उसकी भावनाओं एवं इच्छाओं के आदान-प्रदान से होता है।
- **मनोदशा या मेल-मिलाप-**अस्तित्व की मनोदशा से तात्पर्य इस बात से होता है कि जिस ढंग से व्यक्ति दुनिया का प्रत्यक्षण करता है, वह बहुत कुछ उस क्षण के उसकी मनोदशा पर आधारित होता है।

बॉस ने अस्तित्व की स्वतंत्रता को अधिक महत्वपूर्ण माना है। उनके अनुसार व्यक्ति सत्य और असत्य अस्तित्व में से किसी एक को चुनने के लिए पूरी तरह स्वतंत्र होता है। इन दोनों के बीच

चयन करने के लिए उसे अपनी अन्तःशक्तियों की पूरी पहचान होनी चाहिए। उनके अनुसार अस्तित्व का अर्थ होता है कि, कुछ नये रूप में आगे बढ़ने की लगातार प्रक्रिया। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो एक बिन्दु पर स्थिर हो जाते हैं और वे अपने में परिवर्तन लाने या आगे बढ़ने से इनकार करते हैं। व्यक्ति एक अस्तित्ववादी प्राणी है, अतः वह अपनी मरणशीलता को भी समझता है। मृत्यु निश्चित है और व्यक्ति द्वारा इस तथ्य की पहचान से उसमें चिन्ता होती है। बॉस के अनुसार स्वप्न के व्यक्ति में एक ही नहीं बल्कि अनेक अर्थ हो सकते हैं। बॉस ने स्वप्न को कोई गुप्त या छिपा हुआ प्रारूप नहीं माना है बल्कि इसके द्वारा अस्तित्व की अभिव्यक्ति होती है। मनोचिकित्सा के दौरान बॉस ने रोगियों के 823 स्वप्नों का विश्लेषण किया। उन्होंने देखा कि जैसे-जैसे जागृतावस्था में परिवर्तन या बदलाव होते हैं, उसी तरह से स्वप्न भी बदलते जाते हैं।

9.3.3. रोलो मे

रोले में का जन्म ओहियो में 1909 में हुआ। उन्होने मनुष्यों के अस्तित्ववादी दुनिया में बने रहने की आवश्यकता को बताया हैं। उनके अनुसार मनुष्य अपने वातावरण से अलग नहीं हो सकता है, इसलिए दोनों के बीच एक संबंध होता है। जब व्यक्ति को अपने अस्तित्व की समाप्ति का अंदाज होता है और इस अंदाज से उसे चिन्ता उत्पन्न होती है। अगर कोई व्यक्ति अपने मूल अन्तःशक्ति को पूरा करने में असमर्थ रहता है तो उससे उसमें दोष-भाव उत्पन्न होता है। मे ने व्यक्ति के भीतर दो तरह के संवेगों यथा चिंता एवं दोष-भाव, की पहचान की है-

9.4. कर्ट लेविन का क्षेत्र सिद्धान्त

कर्ट लेविन (1898-1947) का जन्म जर्मनी के मोगिलनो में हुआ था। कर्ट लैविन के अध्ययन को स्थान तथा सदिश मनोविज्ञान के नाम से जाना जाता है। वर्तमान में इसे क्षेत्र मनोविज्ञान भी कहा जाता है।

- लैविन का क्षेत्र सिद्धान्त -लैविन एक व्यक्ति को एक क्षेत्र या व्यवस्था मानता है। और इस व्यवस्था को वह बहुत सी उपव्यवस्थाओं का योग मानता है जो एक-दूसरे से अलग हो सकती है। एक-दूसरे से जुड सकती है तथा अन्तःक्रियाओं के लिए समर्थ होती है। लैविन ने अभिप्रेरणा के अध्ययन को एक नई दिशा प्रदान की जब वह बालकों के व्यवहार और विकास का अध्ययन कर रहे थे तब उन्होंने एक सूत्र (1954) का आविष्कार किया जो इस प्रकार है- $B=f(P, E)$ इस प्रकार, निम्न सूत्र की सहायता से लैविन ने व्यवहार को व्यक्ति और वातावरण पर निर्भर बताया।

लेविन के योगदान - लेविन एक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक थे। उन्होंने क्षेत्र सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। जिसमें स्थलाकृतिक मनोविज्ञान तथा सदिशात्मक मनोविज्ञान को उन्होंने

समझाया है। उन्होंने स्थान विज्ञान तथा वेक्टर जैसे पदों को गणित से लिया और उनका प्रयोग मानव व्यवहार की व्याख्या में किया।

- **लेविन का स्थलाकृतिक मनोविज्ञान-** लेविन ने स्थलाकृतिक मनोविज्ञान में उन संप्रत्ययों को बताया है जो व्यक्तित्व की संरचना से सम्बन्धित होते हैं तथा उनके व्यवहार की व्याख्या करते है। इसके तहत आने वाले प्रमुख संप्रत्ययों में निम्नलिखित चार प्रमुख हैं-
- **व्यक्ति -** लेविन के अनुसार व्यक्ति एक ऐसा तत्व या अस्तित्व है जो अपने चारों ओर वातावरण से घिरा होता है फिर भी अपने आप को उस वातावरण से अलग रखता है। चित्र में व्यक्ति यानी P को एक बन्द वृत्त में दिखलाया गया है। लेविन के अनुसार P की दो विशेषताऐं क्रमशः अपने वातावरण से अलग होना है जहाँ वह सिर्फ वातावरण से भिन्न ही नहीं होता है बल्कि भीतर से भी कुछ भागों में बंटा होता है। लेविन ने P को दो

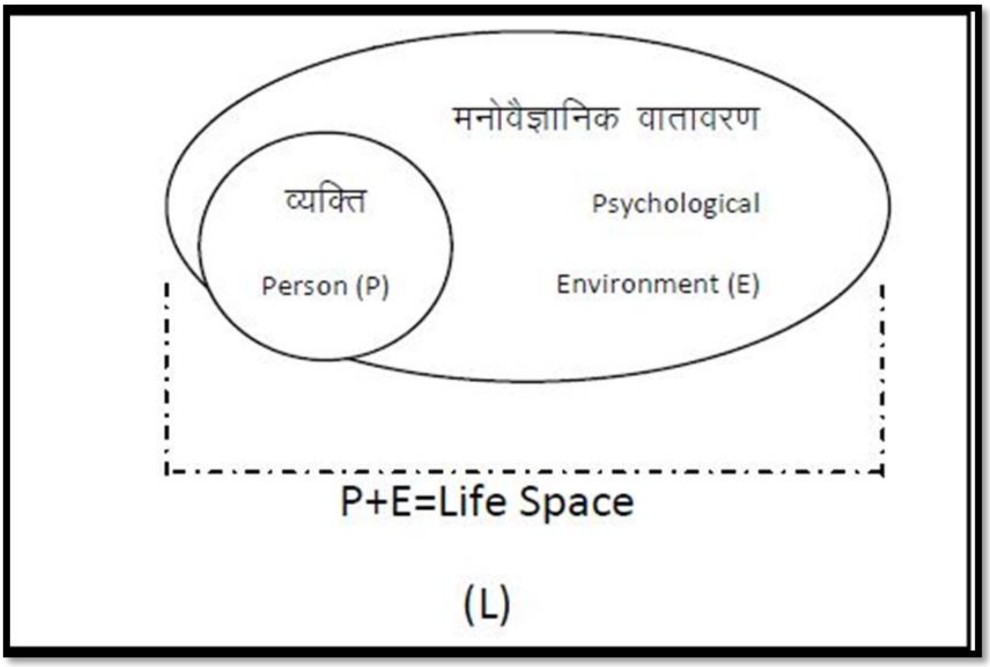

ऐसे भागों में बांटा है-

लेविन के अनुसार P अर्थात व्यक्ति केवल वातावरण से अलग नहीं होता बल्कि भीतर से भी कुछ भागों में बांटा होता है जिसके दो प्रकार प्रमुख है-:

- **प्रत्यक्षणात्मक पेशीय क्षेत्र-**यह क्षेत्र P के वृत्त के बाहर सतह पर होता है। इस क्षेत्र द्वारा प्रत्यक्षणात्मक एवं शारीरिक कियायें नियन्त्रित होती है।
- **आन्तरिक वैयक्तिक क्षेत्र** -यह क्षेत्र P के वृत्त के अन्दर का भाग है जो कई छोटे-छोटे भागों में बंटा है जिन्हें कक्षिका कहते हैं। इनमें से कुछ कक्षिकाओं की सीमा रेखा मोटी होती है और कुछ की पतली। मोटी सीमा रेखा वाली

कक्षिकाओं के अन्दर किसी तरह का प्रवेश नही होता है अर्थात वह व्यक्ति का निजी क्षेत्र होता, जिसमें वह किसी का हस्तक्षेप या प्रवेश पसन्द नही करता है। विभिन्न कक्षिकाओं द्वारा व्यक्ति के प्रेरणात्मक कार्यों पर नियन्त्रण होता है। इसे

- दिये गये चित्र द्वारा समझाया गया है।-

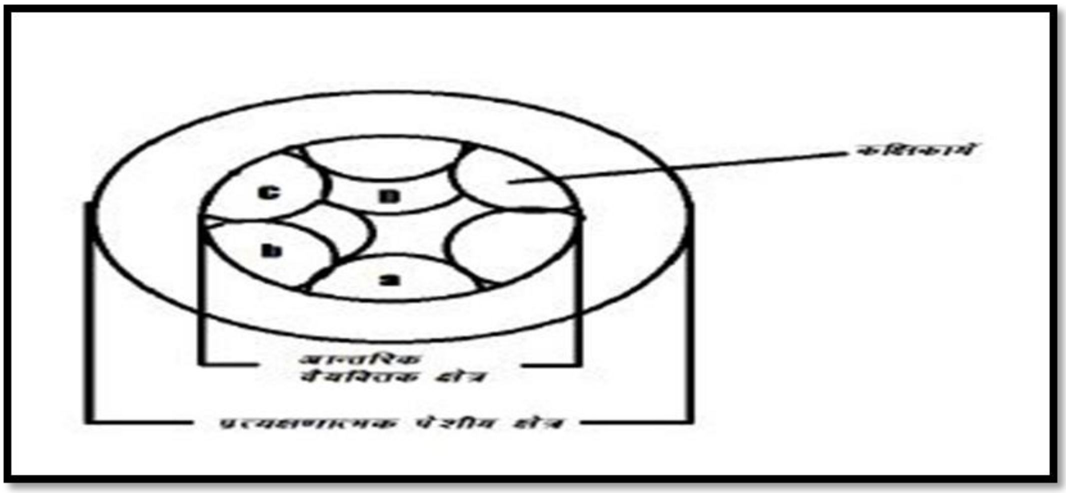

- प्रत्यक्षणात्मक पेशीय क्षेत्र द्वारा प्रतयक्षणात्मक एवं अन्य शारीरिक क्रियाऐं नियन्त्रित होती है। अतः लेविन के अनुसार P समजातीय न होकर विषमजातीय होता है।

➢ **मनोवैज्ञानिक वातावरण-** इसे लेविन ने E अक्षर से दर्शाया है। व्यक्ति द्वारा अपने वातावरण का अपने ढंग से अनुभव किया जाना ही मनोवैज्ञानिक वातावरण कहलाता है। चित्र मे P के बाहर का क्षेत्र को मनोवैज्ञानिक वातावरण के रूप में दिखलाया गया है। P के समान E को भी लेविन ने कई क्षेत्रों में बांटा है। कुछ क्षेत्र की सीमा रेखा में प्रवेश्यता होती है तो कुछ की सीमा रेखा में प्रवेश्यता नहीं होती है।

➢ **जीवन समष्टि-** लेविन ने संरचनात्मक मनोविज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण संप्रत्यय जीवन समष्टि है जिसका संकेत L रखा गया है। जब व्यक्ति अर्थात P एवं उसके मनोवैज्ञानिक वातावरण अर्थात E को एक साथ मिला दिया जाता है और इससे जिस संप्रत्यय का जन्म होता है, उसे जीवन समष्टि कहा जाता है इसमें वे सभी चीजें होती है जिनसे व्यक्ति का तात्कालिक व्यवहार प्रभावित एवं नियन्त्रित होता है। सूत्र के रूप में इस तरह कहा जा सकता है- **L=P+E** मानव व्यवहार और दोनों का प्रतिफल है। B=f (P, E) or B=f(L)

- वास्तविकता के स्तर- लेविन के अनुसार वास्तविकता तथा अवास्तविकता के कुछ स्तर होते हैं जो P तथा E पर लागू होते हैं।
  - वास्तविकता- वास्तविकता से तात्पर्य वास्तविक गमन से होता है। जैसे- कोई व्यक्ति अपने कार्य में परिवर्तन ला सकता है या वह कोई नयी राजनैतिक पार्टी में प्रवेश पा सकता है। लेविन के अनुसार इसे वास्तविकता में रखा जाएगा।
  - अवास्तविकता- कोई व्यक्ति यह कल्पना कर सकता है कि यदि वह अमुक राजनैतिक पार्टी का सदस्य होता तो अच्छा होता । इसे लेविन के अनुसार अवास्तविकता में रखा जाएगा।
- **लेविन का सदिशात्मक मनोविज्ञान-** लेविन ने सदिशात्मक मनोविज्ञान के तहत कुछ गत्यात्मक संप्रत्ययों का प्रतिपादन किया है जिससे यह पता चलता है कि किसी भी दी गयी परिस्थिति में व्यक्ति किस तरह का व्यवहार करता है।

लेविन के सदिशात्मक मनोविज्ञान में निम्नलिखित गत्यात्मक संप्रत्यय है-

- **ऊर्जा -** लेविन के अनुसार व्यक्ति एक ऊर्जा तन्त्र होताहै।इस ऊर्जा द्वारा मनोवैज्ञानिक कार्य होते है, उसे लेविन ने मनोवैज्ञानिक ऊर्जा कहा है। मनोवैज्ञानिक ऊर्जा की उत्पत्ति उस समय होती है जब व्यक्ति में तनाव बढ जाने के कारण ऊर्जा तन्त्र के किसी एक भाग में असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है और तन्त्र संतुलन स्थापित करने की दिशा में क्रियाशील हो उठता है। जब तन्त्र अपने सभी भागों में तनाव को एक समान कर लेता है, तो ऊर्जा की उत्पत्ति रूक जाती है और तन्त्र सामान्य अवस्था में आ जाता है।
- **तनाव-** तनाव व्यक्ति या P की एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें एक या एक से अधिक आन्तरिक वैयक्तिक तन्त्रों या क्षेत्रों के बलों के बीच में असंतुलन स्थापित हो जाता है।
- **आवश्यकता-** लेविन के अनुसार दो तरह की आवश्यकताऐं होती है। 1. शारीरिक आवश्यकता जैसे-भूख, प्यास की आवश्यकता आदि। 2. मनोवैज्ञानिक आवश्यकता जैसे-धनी आदमी बनने की इच्छा, अधिक-से-अधिक उपलब्धि प्राप्त करने की इच्छा। आवश्यकता से तनाव में वृद्धि या कमी होती है।
- **कषर्ण शक्ति-** लेविन के अनुसार मनोवैज्ञानिक वातावरण के विभिन्न क्षेत्र होते है और प्रत्येक क्षेत्र का मूल्य व्यक्ति के लिए या तो धनात्मक होता है या ऋणात्मक होता है। इसी मूल्य को कर्षण-शक्ति कहा जाता है। कर्षण शक्ति दो प्रकार की होती हैं-
  - **धनात्मक कर्षण शक्ति -** एक प्यासे व्यक्ति के लिए मनोवैज्ञानिक वातावरण का वह क्षेत्र जो जल से सम्बन्धित होता है, की कर्षण शक्ति धनात्मक होगी।

- **ऋणात्मक कर्षण शक्ति-** ऋणात्मक कर्षण शक्ति वाला क्षेत्र वह क्षेत्र होता है जिससे व्यक्ति में तनाव बढता है। जैसे जो व्यक्ति कुत्ते से डरता है, उसके लिए वह क्षेत्र जिसमें कुत्ता है, का कर्षणशक्ति ऋणात्मक होगी।

➢ **सदिश-**लेविन ने इस पद का प्रयोग मानव व्यवहार की व्याख्या में किया। सदिश से तात्पर्य वैसे मनोवैज्ञानिक बलों से होता है जो व्यक्ति पर अपना सीधा प्रभाव डालते हैं और उसे किसी निश्चित दिशा में कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं। अगर मनोवैज्ञानिक वातावरण के एक क्षेत्र की कर्षणशक्ति धनात्मक है तो उस क्षेत्र की दिशा में जाने के लिए व्यक्ति को सदिश प्रभावित करेगा। दूसरी तरफ यदि किसी मनोवैज्ञानिक क्षेत्र की कर्षणशक्ति ऋणात्मक है तो सदिश व्यक्ति को उस क्षेत्र से दूर हटने की दिशा में प्रेरित करेगा। जब व्यक्ति का व्यवहार एक ही समय में कई तरह के सदिश द्वारा प्रभावित होने लगता है, तो इससे व्यक्ति में मनोवैज्ञानिक संघर्ष उत्पन्न होने लगता है। ये संघर्ष व्यक्ति में निम्न तरह के होते हैं:-

➢ **उपागम-उपागम संघर्ष -** जब व्यक्ति दो धनात्मक कर्षणशक्तियों से एक ही समय में प्रभावित होने लगता है तो उससे उत्पन्न संघर्ष को उपागम-उपागम संघर्ष कहा जाता है। इस स्थिति में संघर्ष इसलिए होता है कि दोनों धनात्मक कर्षणशक्तियों से सम्बन्धित इच्छाओं की पूर्ति करना एक साथ सम्भव नही होता है। जैसे- कोई छात्र रात में अपने दोस्त की बारात में भी शामिल होना चाहता है और साथ-ही-साथ उसी समय में अपने माता-पिता के साथ खरीददारी करने भी जाना चाहता है, तो इससे उत्पन्न संघर्ष उपागम-उपागम संघर्ष होगा।

➢ **परिहार-परिहार संघर्ष-** जब व्यक्ति दो ऋणात्मक कर्षणशक्ति से प्रभावित होता है, तो उसमें परिहार-परिहार संघर्ष की उत्पत्ति होती है जैसे-यदि किसी विद्यार्थी को गणित तथा जीवविज्ञान में से किसी एक को अपने अध्ययन विषय के रूप में चुनना पड़े जबकि उसे दोनों ही विषय काफी कठिन एवं अरूचिकर लगते है, तो इससे उत्पन्न संघर्ष को परिहार-परिहार संघर्ष कहा जाता है।

➢ **उपागम-परिहार संघर्ष-** इस तरह की परिस्थिति में व्यक्ति के सामने एक ही लक्ष्य होता हैं परन्तु उससे धनात्मक कर्षणशक्ति तथा ऋणात्मक कर्षणशक्ति दोनों ही उस व्यक्ति के लिए उत्पन्न होने लगती है। जैसे-यदि किसी व्यक्ति को एक ऐसी नौकरी मिल रही हो जिसे वह काफी पसन्द करता है क्योंकि उसका वेतनमान अधिक है परन्तु वह उसमें जाना नहीं चाहता है क्योंकि उस नौकरी को वह एक जगह पर नहीं कर सकता है क्योंकि, उसमें बहुत अधिक भागदौड है, तो ऐसी परिस्थिति में उत्पन्न मानसिक संघर्ष को उपागम-परिहार संघर्ष कहा जाएगा।

- **द्वि-उपागम परिहार संघर्ष-** इस तरह की परिस्थिति में व्यक्ति अपने आप को एक साथ दो या दो से अधिक धनात्मक एवं ऋणात्मक कर्षणशक्ति से घिरा हुआ पाता है और ये दोनों तरह की कर्षणशक्तियां व्यक्ति को अपनी-अपनी ओर खींचने लगती है। जीवन की अधिकांश परिस्थितियां इसी प्रकार की होती है।
- समूह गतिकी-समूह गतिकी से तात्पर्य समूह में होने वाले सामूहिक अन्तक्रियाओं जैसे-नेतृत्व, अधिकार या शक्ति में परिवर्तन, समूह निर्णय लेने की क्षमता आदि से होता है। यह एक तरह की सामाजिक प्रक्रिया होती है जिसके सहारे समूह में लोगों के आमने-सामने होकर अन्तक्रिया करते हैं। लेविन के अनुसार व्यक्तियों का समूह तथा उसका वातावरण एक साथ मिलकर एक क्षेत्र का निर्माण करते हैं। समूह के प्रत्येक सदस्य का व्यवहार दूसरे सदस्य के व्यवहार से प्रभावित होता है। जब समूह के सदस्यों के बीच का सम्बन्ध संतोषजनक होता है, तो इससे संघटनात्मक बल की उत्पत्ति होती है परन्तु सदस्यों के बीच का सम्बन्ध संघर्षात्मक होता है तथा सदस्यों में आपस में उचित संचार भी नहीं होता है, तो इससे विघटनात्मक बल की उत्पत्ति होती है।

लेविन का क्षेत्र सिद्धान्त मनोविज्ञान में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उनके क्षेत्र सिद्धान्त का आधार भौतिकी तथा गणित है। उन्होंने बाल मनोविज्ञान का गहरा अध्ययन किया और बाल मनोविज्ञान के आधार पर क्षेत्र सिद्धान्त की व्याख्या की।

9.5. अभ्यास प्रश्न

1. किसी व्यक्ति के लिये किसी दिये हुऐ समय में मनोवैज्ञानिक कारकों के सम्पूर्ण योग को जीवन स्थान कहते है। (सही/गलत)
2. रोजर्स के सिद्धान्त को व्यक्ति केन्द्रित सिद्धान्त कहते है। (सही/गलत)
3. शीलगुण सिद्धान्त मैस्लों द्वारा प्रतिपादित किया गया है। (सही/गलत)
4. मैस्लों के पदानुक्रम मॉडल में सबसे ऊपर आत्मसिद्धिकरण है। (सही/गलत)
5. लेविन ने व्यवहार को पर्यावरण तथा व्यक्ति दोनों से ही प्रभावित होते माना है। (सही/गलत)
6. लेविन के क्षेत्र सिद्धान्त में प्रत्यक्षणात्मक पेशीय क्षेत्र सबसे महत्वपूर्ण है। (सही/गलत)
7. मानवतावादी मनोविज्ञान पद का प्रतिपादन मैस्लो द्वारा 1975 में किया गया। (सही/गलत)

8. काउंसलिंग एण्ड साइकोथैरेपी नामक पुस्तक कार्ल रोजर्स द्वारा प्रतिपादित है।
   (सही/गलत)
9. आवश्यकता अनुक्रम सिद्धान्त मैस्लों द्वारा दिया गया।
   सही/गलत)
10. अभिप्रेरण तथा अभिप्रेरण पदों को लेविन द्वारा प्रतिपादित किया गया।
   (सही/गलत)

9.6. सारांश

- मानवतावादी मनोविज्ञान का सृजन 1962 में मनोवैज्ञानिकों के एक समूह के साथ अब्राहम मैस्लो ने किया था।
- मैस्लो को अमेरिका में मानवतावादी के आध्यात्मिक जनक माना जाता है ।
- उनके अनुसार यदि व्यक्ति की पर्यावरणीय अवस्थाऐं अनुकूल होती हैं तो व्यक्ति अपने अन्दर छिपी अन्तःशक्ति व क्षमताओं को पहचनता है ।
- मानवतावादी मनोविज्ञान की निम्नलिखित विशेषताऐं हैं- एक समग्रता के रूप में व्यक्ति का अध्ययन करना, उसके जीवन इतिहास पर बल डालना, आत्मसिद्धि का अध्ययन करना, व्यक्ति की आन्तरिक प्रकृति को समझना, सर्जनात्मक अन्तःशक्ति की पहचान करना तथा मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य पर बल डालना।
- मैस्लो ने आवश्यकता-अनुक्रम सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।
- रोजर्स ने आत्मन-सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।
- उनकी उपचार पद्धति को रोगी केन्द्रित चिकित्सा कहा जाता है।
- रोजर्स के योगदानों को निम्न प्रकार बांटा गया है - 1. जीव या प्राणी, 2. आत्मन, 3. आत्मसिद्धि।
- मानवतावादी मनोविज्ञान के समान ही अस्तित्ववादी मनोविज्ञान भी एक आन्दोलन है ना कि एक संप्रदाय।
- अस्तित्ववादी मनोविज्ञान का मूल उद्देश्य संसार में अस्तित्व बनाये रखे व्यक्तियों का व्यक्तिगत रूप से अध्ययन करना है।
- अस्तित्ववादी मनोविज्ञान का सम्बन्ध व्यक्ति के चेतन, भाव, मनोदशा एवं उसकी व्यक्तिगत अनुभूति से सम्बन्धित होता है।
- क्षेत्र सिद्धान्त का प्रतिपादन कर्ट लेविन द्वारा किया गया।

- उन्होंने स्थलाकृतिक मनोविज्ञान, सदिशात्मक मनोविज्ञान एवं समूह गतिकी के क्षेत्र में सबसे अधिक योगदान दिये।
- लेविन के संरचनात्मक मनोविज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण संप्रत्यय जीवन समष्टि है।

9.7. शब्दावली

मूल प्रवृत्ति -मानसिक कार्यों में जो ऊर्जा खर्च होती है वह मूल प्रवृत्ति से प्राप्त होती है। मूल प्रवृत्ति मानसिक क्रियाओं को दिशा प्रदान करती है।

- विध्वंसात्मक बल-तोड-फोड या नष्ट करने में लगने वाली ऊर्जा।
- सर्जनात्मकता-सर्जनात्मकता एक योग्यता है और चिन्तन का एक तरीका है। यह प्रक्रिया लक्ष्य निर्देशित होती है।
- अभिप्रेरित व्यवहार -यह व्यवहार ऊर्जात्मक और जाग्रत होता है। इसमें व्यक्ति किसी लक्ष्य की ओर बढता है।
- पदानुक्रम-नीचे स्तर से ऊपरी स्तर का क्रम।
- आनुवांशिकता - माता-पिता के द्वारा उनकी सन्तानों में शारीरिक गुणों तथा संगठनों का जीन्स द्वारा होने वाले संचरण का अध्ययन करने वाला विज्ञान।

9.9. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सही
2. सही
3. गलत
4. सही
5. सही
6. सही
7. गलत
8. सही
9. सही
10. गलत

9.9. निबन्धात्मक प्रश्न

- मानवतावादी मनोविज्ञान की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करिये।

- मानवतावादी मनोविज्ञान के मुख्य योगदानों पर प्रकाश डालिये।
- कार्ल रोजर्स के योगदानों पर प्रकाश डालिये।
- एक क्षेत्र सिद्धान्तवादी के रूप में कर्ट लेविन के योगदानों की व्याख्या करिये।
- मानव व्यवहार के अध्ययन में जीवन-समस्टि के महत्व की व्याख्या करें।
- अस्तित्ववादी मनोविज्ञान के योगदानों का वर्णन करिये।
- अस्तित्ववादी मनोविज्ञान एवं मानवतावादी मनोविज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन करिये।

9.10. सन्दर्भ पुस्तकें

1. मनोविज्ञान के संप्रदाय एवं इतिहास - अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह - मोतीलाल बनारसी दास
2. मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं संप्रदाय - डॉ0 आर0के0ओझा - विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. मनोवैज्ञानिक विचारधारायें - के0एन0शर्मा - हर प्रसाद भार्गव, आगरा ।
4. मनोविज्ञान का इतिहास- डॉ. रामनाथ शर्मा - लक्ष्मीनारायण प्रकाशन, आगरा।

इकाई-10 चयनात्मक अवधान एवं दीर्घीकृत अवधान, उत्तेजन एवं सूचना संसाधन, चयनात्मक अवधान के सिद्धान्तः (Selective and Sustained Attention, Arousal and Information Processing, Theories of Selective Attention)

इकाई की रूपरेखा:

10.0 प्रस्तावना

10.1 उद्देश्य

10.2 अवधान

10.2.1 अवधान का अर्थ

10.2.2 अवधान की विशेषतायें

10.3 चयनात्मक अवधान का स्वरूप एवं गुण

10.4 चयनात्मक अवधान के सिद्धान्त

10.4.1 मार्ग विरोधी सिद्धान्त

10.4.2 नारमैन एवं बाबरो मॉडल

10.4.3 नाईसर मॉडल

10.5 दीर्घीकृत अवधान का स्वरूप

10.6 अवधान उत्तेजन

10.7 सूचना संसाधन

10.8 सारांश

10.9 शब्दावली

10.10 अभ्यास प्रश्न

10.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न

10.0 प्रस्तावना:- (Introduction)

अपने दैनिक जीवन में अधिकतर हम ध्यान या अवधान शब्दों का प्रयोग करतें है। प्राचीन साहित्य में अवधान को चेतना के ज्ञान के रूप में देखा गया| संरचनावादियों ने अवधान को चेतना में उद्दीपकों की स्पष्टता के रूप में बताया| कल्पना एवं चिन्तन की तरह अवधान भी एक मानसिक प्रक्रिया है। इस मानसिक प्रक्रिया में केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र का कार्य मुख्य होता है। अवधान की प्रकृति चंचल होती है अर्थात् एक ही पल में ध्यान कभी एक उद्दीपक पर और कभी दूसरे उद्दीपक पर चला जाता है। अवधान की प्रक्रिया के कई बाहरी एवं आन्तरिक परिवर्तन होते है। इस प्रक्रिया में व्यक्ति की ज्ञानेन्द्रियों (नाक, ऑख, कान) का झुकाव हमेशा उद्दीपक की ओर रहता है। अवधान की अवस्था में सम्बन्धित ज्ञानेन्द्रियों की मॉसपेशियों में तनाव अधिक होता है और व्यक्ति की हृदय गति, नाड़ी गति, रक्त संचार, श्वास गति और शरीर तापमान में कुछ ना कुछ परिवर्तन होते है। इस परिवर्तन के कारण ही व्यक्ति शारीरिक समायोजन कर पाता है। इस इकाई में आप अवधान के अर्थ को समझ सकेंगे, चयनात्मक अवधान के सिद्धान्तों को जान सकेंगे, दीर्घीकृत अवधान को समझ सकेंगे तथा उदोलन एवं सूचना संसाधन को समझ सकेंगें।

10.1 उद्देश्य:- (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप

- अवधान के अर्थ को समझ सकेंगे।
- चयनात्मक अवधान के स्वरूप को तथा उसके सिद्धान्तों को जान सकेंगे।
- सूचना संसाधन के बारे में जान सकेंगे।
- दीर्घीकृत अवधान को समझ सकेंगे।

10.2 अवधान (Attention)

अवधान वह प्रक्रिया है जो चेतना के बाहर के उद्दीपक या उद्दीपकों का चयन करती है तथा जिसके द्वारा उद्दीपक या उद्दीपक समूह चेतना के सीमा प्रदेश से चेतना के केन्द्र में आते हैं। अवधान प्रत्यक्षपरक संगठन को स्पष्टता प्रदान करने वाली वह स्वतन्त्र केन्द्रीय प्रक्रिया है जो सांवेदिक प्रक्रियाओं के लिए एक प्रकार से पुनर्बलन का कार्य करती है।

10.2.1 अवधान का अर्थ (Meaning of Attention)

हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ जैसे-आँख, कान, नाक, त्वचा आदि अनेकों प्रकार के उद्दीपकों द्वारा प्रभावित रहती है। परन्तु उन सभी उद्दीपकों के प्रति व्यक्ति अनुक्रिया नहीं करता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छा तथा आवश्यकता के अनुसार कुछ खास-खास उद्दीपकों को चुन लेता है और उसके प्रति

अनुक्रिया करता है। मनोविज्ञान में इस तरह की चयनात्मक प्रक्रिया को अवधान या ध्यान कहा जाता है।

मॉर्गन, किंग, विसज तथा स्कोपलर के अनुसार ''अवधान उस प्रत्यक्षज्ञानात्मक प्रक्रिया को कहा जाता है जिसके द्वारा कुछ निश्चित उद्दीपकों को दिये हुए समय में अपने चेतन अनुभूति या चेतना में लाने के लिए चुना जाता है।''

मैटलिन के अनुसार ''मानसिक क्रिया की एकाग्रता ही ध्यान है|" अवधान में हम अनेकों उद्दीपकों में से कुछ खास-खास उद्दीपकों को चुनते है और फिर उन्हें अपनी चेतना में लाते है। उदाहरण:-अभी आप जिस कमरे में बैठकर पढ रहें है वहॉ अनेकों उद्दीपक मौजूद होंगे। जैसे-बिजली का बल्ब, पंखा, किताब, कुर्सी आदि। परन्तु इस सभी उद्दीपकों पर आपका ध्यान नहीं है। आपका ध्यान इस पुस्तक के उस पेज पर है जिसे आप पढ़ रहे है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अवधान या ध्यान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके सहारे हम कुछ खास-खास उद्दीपकों को ही अपने चेतना केन्द्र में ला पाते है, सभी उद्दीपकों को नहीं। अवधान एक चयनात्मक मानसिक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति एक विशेष शारीरिक मुद्रा बनाकर किसी वस्तु को चेतना क्रेन्द्र में लाने के लिए तत्पर रहता है।

10.2.2 अवधान की विशेषतायें (Features of Attention)

- **स्वतन्त्र केन्द्रीय प्रक्रिया-** अवधान, स्मरण, कल्पना तथा चिन्तन आदि की भॉति एक केन्द्रीय मानसिक प्रक्रिया है। जिसकी प्रक्रिया स्वतन्त्र है।
- **प्रत्यक्षपरक संगठन को स्पष्टता प्रदान करने वाली प्रक्रिया-** अवधान में प्रत्यक्षीकरण अधिक स्पष्ट हो जाता है। यदि प्रत्यक्षीकरण प्रक्रिया में से अवधान प्रक्रिया को हटा दिया जाय तो प्रत्यक्षपरक संगठन की स्पष्टता समाप्त हो जाती है।
- **मानसिक प्रक्रिया-** अवधान चयनात्मक मानसिक प्रक्रिया है। यह देखा गया है कि वातावरण में उपस्थित अनेक उद्दीपकों में से व्यक्ति केवल चुनी हुई उत्तेजना के प्रति ही ध्यान देता है।
- **उद्दीपक चेतना के सीमा प्रदेश से चेतना केन्द्र में लाए जाते है-** जब एक विद्यार्थी कक्ष में बैठता है तो कक्षा में बैठे अन्य विद्यार्थी कुर्सियॅा, कमरे की दीवारें, अध्यापक, ब्लैक बोर्ड आदि सभी की चेतना उस विद्यार्थी को होती है। परन्तु उसके चेतना के केन्द्र में इन सभी उद्दीपकों में से केवल कुछ ही उद्दीपक होते है।
- **गत्यात्मक-** अवधान प्रक्रिया की प्रकृति गत्यात्मक होती है। इसी कारण से अवधान को चंचल कहा गया है। केवल एक ही क्षण में अवधान एक उद्दीपक से दूसरे पर, दूसरे से

अन्य पर अथवा एक ही उद्दीपक के एक भाग से दूसरे पर, दूसरे से तीसरे आदि पर परिवर्तित होता रहता है।

- **ध्यान में शारीरिक समायोजन-** अवधान के समय प्रयोज्य की एक विशेष मुद्रा होती है क्योंकि इस प्रक्रिया में अनेक आन्तरिक और वाह्य परिवर्तन होते है। अवधान प्रक्रिया की अवस्था में देखा गया है कि ऑख, नाक, कान आदि ज्ञानेन्द्रियों का ध्यान उद्दीपक की ओर होता है। शारीरिक मुद्रा समायोजन भी अवधान प्रक्रिया के समय देखा जा सकता है। जैसे -कक्षा में ब्लैक-बोर्ड पर ध्यान दे रहे विद्यार्थियों की एक विशेष शारीरिक मुद्रा होती है।

10.3 चयनात्मक अवधान का स्वरूप एवं गुण (Nature and Properties of Selective Attention)

चयनात्मक अवधान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति कुछ खास क्रिया या उद्दीपक पर अपनी मानसिक एकाग्रता दिखलाता है तथा अन्य क्रियाओं या उद्दीपकों पर न के बराबर ध्यान देता है। मैटलिन के अनुसार ‘‘चयनात्मक अवधान एक ऐसी घटना है जिसमें हम लोग एक क्रिया पर अपनी मानसिक क्रियाशीलता को एकाग्रचित करते है तथा अन्य क्रियाओं के बारे में बहुत ही कम ध्यान दे पाते है|” जैसे-यदि एक साथ कई व्यक्ति मिलकर बगल के कमरे में बातचीत कर रहे हों और आप उनमें से किसी एक व्यक्ति की बात पर ध्यान दे रहे हों तो इसमें आप उस व्यक्ति की बात को ही ठीक ढंग से सुन पायेंगें तथा अन्य व्यक्तियों के बातों को नहीं।

गुणः- इसमें व्यक्ति एक तरह के कार्य पर दूसरे कार्यो से बिना किसी तरह के अवरोध अनुभव किये एकाग्रचित कर सकता है इसका परिणाम यह होता है कि इससे मानसिक निष्पादन बढ़ जाता है।

10.4 चयनात्मक अवधान के सिद्धान्त (Principle of Selective Attention)

10.4.1 मार्गविरोधी सिद्धान्तः- इस सिद्धान्त का प्रतिपादन ब्रौडवेन्ट, ट्रीसमैन तथा डियूश एवं डियूश द्वारा किया गया। जिस तरह से यदि हम एक ऐसे बोतल में पानी डालने की कोशिश करते है जिसका मुह छोटा है तो पानी को भीतर जाने में एक तरह का अवरोध (बाधा) उत्पन्न होता है और कुछ मात्रा में पानी बोतल के भीतर जाता है और कुछ मात्रा में पानी बोतल के बाहर गिर जाता है, ठीक उसी तरह यदि व्यक्ति को एक ही साथ कई तरह की सूचनाओं पर ध्यान देना पड़ता है, तो वह सभी ऐसी सूचनाओं पर एक साथ ध्यान नहीं दे पाता है क्योंकि उसमें एक तरह का मार्गविरोध होता है। कुछ सूचनाएँ इस मार्गविरोध को पार करते हुए व्यक्ति के ध्यान में प्रवेश पाती है परन्तु कुछ सूचनाएँ पीछे ही रह जाती है क्योंकि वे मार्गविरोध को पार नहीं कर पाती है। जो सूचनाएँ पीछे रह जाती है वह व्यक्ति के ध्यान केन्द्र के बाहर हो जाती है और धीरे-धीरे व्यक्ति उन्हें भूल जाता है। इस सिद्धान्त को फिल्टर सिद्धान्त भी कहा जाता है। इसके अनुसार जब व्यक्ति को एक

ही साथ कई तरह की सूचनाओं पर एक ही साथ ध्यान देना होता है, तो इस आरंभिक अवस्था में ही मार्गाविरोध उत्पन्न हो जाता है। इस तरह के मार्गाविरोध का उद्देश्य अधिक संख्या में सूचनाओं को ध्यान केन्द्र में प्रवेश करने से रोकना होता है तथा साथ ही साथ व्यक्ति को कई तरह की सूचनाओं से एक ही साथ प्रभावित हो जाने से आपने आप को बचाना होता है। ब्रौडवेन्ट मॉडल के अनुसार सूचना के भौतिक गुणों के आधार पर हम उसका चयन करते है या उसे एक तरह से छानते है तथा उस पर ध्यान दे पाते है।

ट्रीसमैन एक महिला मनोवैज्ञानिक थी। इन्होंने ब्रौडवेन्ट मॉडल में थोड़ा परिवर्तन किया और उसे अधिक उपयोगी बनाने की कोशिश की। इनके मॉडल को 'फिल्टर-तनुकरण मॉडल' कहा जाता है। इसके अनुसार व्यक्ति जिस कान से प्राप्त सूचना पर ध्यान नहीं दे पाता है, वह संसाधित होने से पूरी तरह अवरूद्ध नहीं हो जाती है बल्कि उसका रूप थोड़ा सूक्ष्म हो जाता है और इसका आंशिक विश्लेषण व्यक्ति कर लेता है। यही कारण है कि ध्यान नहीं दी गयी सूचना की कुछ विशेषताओं से भी व्यक्ति अवगत हो जाता है। ट्रीसमैन ने ब्रौडवेन्ट सिद्धान्त का विरोध किया है कि सूचनाओं के संसाधन के प्रारंभिक अवस्था में ही मार्गाविरोध के कारण बहुत सारे सूचनाओं पर व्यक्ति ध्यान नहीं दे पाता है। ट्रीसमैन द्वारा प्रतिपादित फिल्टर तनुकरण सिद्धान्त की मुख्य बात यह है कि जो सूचनायें फिल्टर से अस्वीकृत हो जाती है और जिन पर व्यक्ति ध्यान नहीं देता है, वह पूरी तरह समाप्त नहीं हो जाती है बल्कि उनकी शक्ति थोडी कम अवश्य हो जाती है। ट्रीसमैन ने इस मॉडल को 'ब्रौडवेन्ट-ट्रीसमैन फिल्टर तनुकरण मॉडल' कहा।

10.4.2 नॉरमैन एवं बॉबरो मॉडलः- इसके अनुसार सचमुच में सूचना संसाधन में मार्गाविरोध नाम की कोई चीज नहीं होती है। जिससे सूचना की प्रवाह में कोई रूकावट होती है। इन लोगो के मॉडल के अनुसार अवधान का स्वरूप सीमित होता है क्योंकि व्यक्ति के पास किसी कार्य पर ध्यान देने के लिए मानसिक प्रयास करने की क्षमता सीमित होती है। ऐसे मानसिक प्रयास को नॉरमैन एवं बॉबरो ने 'साधन' कहा। व्यक्ति के पास जो साधन होता है वह सीमित होता है, जिसके कारण वह कुछ सीमित वस्तुओं या उद्दीपको पर ही ध्यान दे पाता है। जब व्यक्ति का ध्यान कई कार्यो में बट जाता है तो उसके निष्पादन में कमी होती है उसका कारण यह होता है कि उस सीमित साधन का उपयोग व्यक्ति को उन सभी कार्यो में बॉटकर करना होता है। नॉरमैन एवं वॉबरो ने अपने सिद्धान्त में दो तरह के कार्यो के बीच अन्तर किया है-

साधन- सीमित कार्य-साधन-सीमित कार्य से तात्पर्य वेसे कार्य से होता है जिसमें निष्पादन साधन के उपलब्ध होने पर निर्भर करता है। यदि ऐसे कार्य के लिए अधिक साधन उपलब्ध होता है तो उसका निष्पादन बढ़ जाता है तथा जब कम साधन उपलब्ध हो पाते है तो निष्पादन में कमी आ जाती है। जैसे कोई व्यक्ति गणित की समस्या का समाधान कर रहा है तथा साथ-साथ जोर से गीत भी गा रहा है। ऐसी परिस्थिति में गणित की समस्या का समाधान मंद गति से तो होगा ही साथ-साथ कई तरह की त्रुटियॉ भी होगी। परन्तु गीत गाना बन्द करके जब व्यक्ति अपना सारा ध्यान

गणित की समस्याओं के समाधान में ही लगाता है तो इससे उसका निष्पादन निश्चित रूप से बढ जायेगा।

आँकडे सीमित कार्य - ऐसे कार्य है, जिसमें निष्पादन व्यक्ति के सीमित-स्मृति क्षमता या उद्दीपक के विशेष गुण के कारण सीमित होता है। ऐसे कार्य के निष्पादन पर साधन होने या ना होने का कोई असर नहीं पड़ता है। ऐसे कार्य में पर्याप्त साधन होने के बावजूद भी व्यक्ति का निष्पादन खराब हो सकता है। जैसे-यदि कोई व्यक्ति तेज आवाज में रेडियो खोलकर तथा उसके नजदीक कान लगाकर उसे सुनता है और उसी समय उसका पेन टेबुल पर से नीचे जमीन पर गिर जाता है। ऐसी परिस्थिति में पेन गिरने से उत्पन्न आवाज पर वह ध्यान नहीं दे पायेगा। कलम गिरने से उत्पन्न आवाज की आर ध्यान देने का कार्य पर अधिक ध्यान देने से भी उसके निष्पादन में कोई सुधार नहीं होगा क्योंकि यहॉ निष्पादन, कार्य के विकृष्ट गुण द्वारा सीमित है।

10.4.3 नाईसर मॉडल- नाईसर ने चयनात्मक अवधान का एक तीसरा मॉडल प्रतिपादित किया । नाईसर इस विचार से बिलकुल ही असहमत है कि व्यक्ति में सूचनाओं को संसाधित करने की एक सीमित क्षमता होती है। इसकी ''कोई सीमा नहीं होती है कि हम लोग एक समय में कितनी सूचना पर ध्यान दे सकते है|" नाईसर ने अपने इस सिद्धान्त में इस बात पर बल डाला है कि सूचनाओं की सीमित मात्रा पर ही व्यक्ति एक समय में ध्यान दे पाता है। यदि बहुत सारी सूचनाएँ व्यक्ति को एक साथ दी जाती है तो उसमें से कुछ ही सूचना पर व्यक्ति ध्यान दे पाता है। मस्तिष्क में अरबों न्यूरोन्स होते है जो एक-दूसरे से संबंधित होते है तथा इनकी क्षमता भी असीमित होती है।

यही कारण है कि दीर्घकालीन स्मृति का आकार तथा चंद सेकेंड पहले की घटनाओं एवं सूचनाओं को याद रखने की क्षमता आदि असीमित होती है। उसी तरह से किसी एक समय में व्यक्ति सूचना की कितनी मात्रा पर ध्यान दे पायेगा, यह सीमित नहीं होती है। नाईसर के अनुसार एक व्यक्ति कई चीजों या कामों को करना प्रारंभ करता है तो उसका निष्पादन थोड़ा जरूर प्रभावित हो जाता है। परन्तु वह अभ्यास करता तो है, धीरे-धीरे उसके निष्पादन में सुधार होने लगता है और व्यक्ति एक साथ कई उद्दीपकों पर ध्यान देने लगता है। कॉलेज के छात्रों को मन-ही-मन कहानी पढ़ते समय प्रयोगकर्ता द्वारा बोले जाने वाले असंगत शब्दों के लिखते जाने का भी प्रशिक्षण दिया गया। इस तरह से इन छात्रों को एक ही समय में दो जटिल कार्यो को करने का प्रशिक्षण दिया गया। प्रारम्भ में इनका निष्पादन अच्छा नहीं था परन्तु कुछ दिनों तक इस तरह के अभ्यास के बाद देखा गया कि ऐसे छात्र इन दोनों तरह के कार्यों को ठीक ढंग से करने में सफल रहे।

10.5 दीर्घीकृत ध्यान का स्वरूपः- (Nature of Sustained Attention)

दीर्घीकृत अवधान या ध्यान को निगरानी भी कहा जाता है। यह एक ऐसी प्रत्यक्षज्ञानात्मक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अधिक समय तक अपना ध्यान किसी उद्दीपक पर केन्द्रित किये रहता है तथा उस उद्दीपक के प्रति अधिक सतर्कता बनाये रखता है। दीर्घीकृत अवधान का अध्ययन मनोवैज्ञानिकों

द्वारा द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान हुआ। उस समय रडार संचालकों मे अवधान से संबंधित कई समस्याएं उत्पन्न होने लगी थी। इस संचालकों को गौर से ध्यान देते हुए दुश्मन के आते हुए हवाई जहाज से रडार में उत्पन्न संकेतों की पहचान करनी होती है। कुछ समय तक इस तरह के कार्य करने के बाद रडार संचालकों के निष्पादन में गिरावट आने लगी है। वे दुश्मन के आते हुए हवाई जहाज से रडार में उत्पन्न संकेतों की पहचान नही कर सके । इसके बाद मनोवैज्ञानिकों ने दीर्घीकृत अवधान के प्रयोगात्मक अध्ययन का प्रयास प्रारंभ किया। इस सम्बन्ध में पहला प्रयोगशाला प्रयोग मैकवर्थ द्वारा किया गया। इस प्रयोग में रडार के अनुरूप प्रदर्शन जिसे घड़ी परीक्षण कहा गया, का उपयोग किया। दीर्घीकृत अवधान या निगरानी किसी बाहरी उद्दीपक पर ध्यान देने की एक तीव्र क्रिया है। जब व्यक्ति किसी बाहरी उद्दीपक पर ध्यान लगाता है तो इसमें काफी मानसिक प्रयास व्यक्ति को करना पड़ता है। इस मानसिक प्रयास का पूरा उपयोग तब तक नहीं होता है जब तक कि व्यक्ति एक खास ढंग से उत्तेजित नहीं हो पाता है।

उद्दीपक पर अवधान देने के लिए यह आवश्यकता होती है कि व्यक्ति में दैहिक उत्तेजन का स्तर जैसे विशेष शारीरिक मुद्रा, विशेष मांसपेशियों में तनाव तथा लगातार सक्रिय एकाग्रता आदि का विशेष स्तर बना हुआ हो। परन्तु निगरानी कार्य के दौरान जो घटना घटित होती है, उससे यह पता चलता है कि उत्तेजन के बढते हुए स्तर से उत्तम निष्पादन नहीं हो पाता है। जैसे-जैसे उत्तेजन स्तर में वृद्धि होती है, अवधान किसी केन्द्रीय लक्ष्य पर केन्द्रित हो जाती है परन्तु अन्य दूसरी तरह की सूचनाओं की उपेक्षा हो जाती है। जब ऐसी बात होती है, तो अपने आप निष्पादन में कमी हो जाती है। डोडसन ने उत्तेजन के स्तर तथा निष्पादन के संबंध को एक विशेष नियम द्वारा दिखता है, जिसे यर्क्स-डोडसन नियम कहा है।

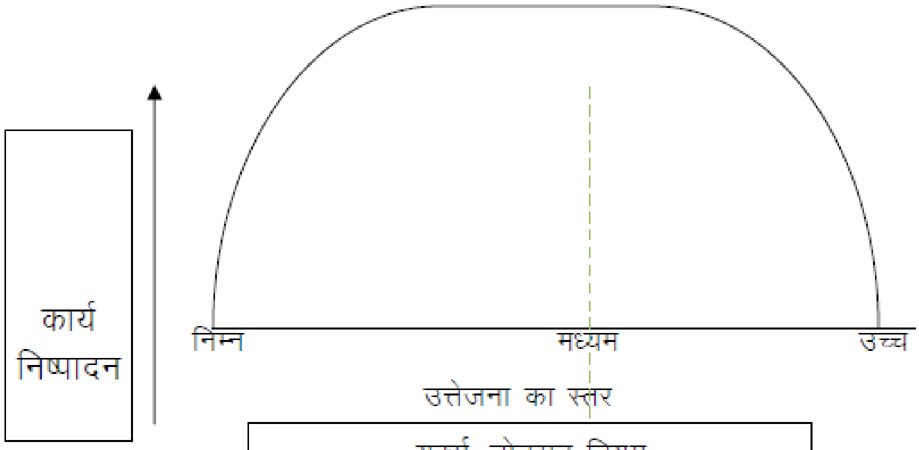

यर्क्स–डोडसन नियम

इस चित्र के माध्यम से दर्शाया गया है। उत्तेजन स्तर तथा निष्पादन के स्तर में संबंध विलोमित यू के समान होता है जो यह बतलाता है कि दीर्घीकृत अवधान या निगरानी कार्यों में निष्पादन उस

समय सबसे उत्तम होता है जब व्यक्ति में उत्तेजन का स्तर मध्यम होता है। बहुत अधिक तथा बहुत कम के उत्तेजन स्तर होने पर निष्पादन में कमी होती है।

10.6 उदोलन या अवधान उत्तेजन:- (Agitation or Attention Stimulation)

उदोलन एक प्रकार की दैहिक एवं मनोवैज्ञानिक अवस्था है, जो किसी उद्दीपक के प्रति अनुक्रिया करने के लिए होती है। मस्तिष्क के मस्तिष्क स्तम्भ के रेटिकुल में एक्टिवेशन तंत्र होता है और उदोलन की अवस्था में यह तंत्र कार्य करने लगता है। इस अवस्था में स्वायन्त तंत्रिका तंत्र एवं अन्तः स्रावी तंत्र भी कार्य करने लगते है। इस कारण से हृदय गति एवं रक्त दबाव बढ़ता है और इसके कारण संवेदी जागरूकता बढ़ती है। जिससे किसी उद्दीपक के प्रति अनुक्रिया करने की गति बढ़ जाती है। उदोलन की अवस्था में विभिन्न तंत्रिका तंत्र कार्य करने लगते है। इसलिए सम्मिलित रूप से इन्हें ‘‘उदोलन तंत्र’’ कहा जाता है। इनमें से चार मुख्य तंत्र मस्तिष्क स्तम्भ से निकलते है, जिनका संयोजन कार्टेक्स के साथ होता है। ये मस्तिष्क से निकलने वाले न्यूरोट्रांसमीटर पर आधारित होता है, मुख्य न्यूरोट्रांसमीटर है -एसिटाइलकोलिन, नारएपिनेफ्रीन, डोपामाइन, सिरोटोनिन आदि। जब ये तंत्र सक्रिय होते है तो ग्राही तंत्रिका क्षेत्र संवेदीत हो जाता है और आने वाले संकेतो के प्रति अनुक्रिया करता है। अवधान, चेतना एवं सूचना संसाधन को संचालित करने में उदोलन महत्वपूर्ण होता है| उदोलन व्यक्ति के कुछ व्यवहारों को अभिप्रेरित करने के लिए भी आवश्यक होता है| इसकी भूमिका संवेगों में भी बहुत महत्त्वपूर्ण होती है।

आइजनेक के अनुसार - बर्हिमुखी एवं अर्न्तमुखी व्यक्तियों का उदोलन स्तर भी भिन्न-भिन्न होता है। इनका निम्न उदोलन स्तर समान होता है परन्तु किसी भी उद्दीपक के प्रति अनुक्रिया अलग-अलग होती है।

उत्तेजन सिद्धान्त के अनुसार दीर्घीकृत अवधान या निगरानी कार्य में RAS की विशेष भूमिका होती है। RAS मस्तिष्क में एक जालीनुमा संरचना होती है जो सुषुम्ना की ऊपरी भाग से प्रारंभ होकर थैलेमस तक फैली होती है। जब संवेदी निवेश सुषुम्ना होते हुए RAS में पहुचते है तो इससे प्रमस्तिष्कीय बल्कल के पूरे क्षेत्र में आवेग फैल जाते है। जिससे व्यक्ति में उत्तेजन या सतर्कता का एक समान स्तर बन जाता है।

10.7 सूचना संसाधन: (Information Processing)

यह प्रत्यय आधुनिक है और मानव व्यवहार व विकास की व्याख्या कम्पयूटर प्रणाली के आधार पर करता है। यह बालक की संज्ञानात्मक क्षमता के विकास की व्याख्या करता है। इसके अनुसार व्यक्ति का मस्तिष्क कम्पयूटर की तरह काम करता है। जो भी सूचना उसमें डाली जाती है वह उसकी मैमोरी में चली जाती है। कम्पयूटर के भीतर जो सूचना भण्डारण की प्रणाली (Device) होती है। उसे मैमोरी कहा जाता है। जिसमें सारी सूचनाये एक्त्र रहती है। जब उन सूचनाओं का प्रयोग करना होता है तब उन्हें कम्पयूटर से बाहर निकाल लिया जाता है।

इसी तरह से मनुष्य भी वातावरण से वस्तुओ एवं ध्वनियो के रूप मे सूचनाये ग्रहण करता है, जो उसके मस्तिष्क में इकट्ठा हो जाती है। जब उसे जरूरत पड़ती है तो वह उन सूचनाओं का प्रत्याहवान और पहचान करता है। इस प्रक्रिया में अवधान तथा स्मरण दोनों का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। इसके अनुसार छोटी आयु के बच्चे वातावरण से ग्रहण की गई सूचनाओं का संचय और स्मरण नहीं कर पाते है क्योंकि उनमें वयस्कों की तरह सोच-विचार एवं तर्क वितर्क करने की क्षमता नहीं होती है। वे अपनी मानसिक क्रियाओं का ठीक से उपयोग भी नहीं कर पाते है। इसका कारण है स्वयं सूचनाओं की जटिलता, बच्चों में भाषा कौशल की कमी, अनुभव की कमी आदि। छोटे बच्चे बडों की तरह वातावरण के 'तत्वों' पर ठीक से ध्यान नहीं दे पाते है और इनमें अवधान की क्रिया में बड़ों की तरह चयनशीलता भी नहीं पायी जाती है। इस कारण वे वातावरण में उपस्थित वस्तुओं पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते है। उनका ध्यान एक स्थान से दूसरे स्थान पर भागता रहता है। सूचना संसाधन प्रक्रिया में ध्यान देने की क्षमता तथा ध्यान की क्रिया में चयनशीलता ये दोनों महत्त्वपूर्ण कारक है। व्यक्ति की समस्त ज्ञानेन्द्रियां जब पर्यावरण से उद्दीप्त होकर जो कुछ ग्रहण करती है उनको वह सूचना के रूप में शारीरिक और मानसिक क्रियाओं को देती हैं। सूचना उन सभी बातों से सम्बन्धित होती है, जिनको ज्ञानेन्द्रियां वातावरण से ग्रहण करती है। सूचना इस बात से सम्बन्धित है कि व्यक्ति ने क्या सीखा और उसको स्मृति में कितना रखा है। सूचना का अर्थ है पर्यावरण के बाह्य उद्दीपक से ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा वस्तु का ग्रहण करना, ग्रहण करने तथा भण्डारण स्थापित करने में कितना समय लगा एवं स्मृति के रूप में उसकी क्या स्थिति बनी। किसी भी याद की जाने वाली सामग्री को व्यक्ति अपने मन में कुछ न कुछ अर्थ प्रदान करता है। सूचना संसाधन के अनुसार सबसे पहले संवेदना के माध्यम से वस्तु का ज्ञान होता है, उसके बाद प्रत्यक्षीकरण होता है। ज्ञान के तीन चरण होते हैं। प्रथम चरण में प्रत्यक्ष ज्ञान होता है जो साधारण और कम गहरी प्रक्रिया होती है। दूसरे चरण में आगत सामग्री की संरचना के अवयवों का विश्लेषण होता है। यह प्रकिया प्रथम प्रकिया के साथ-साथ क्रियान्वित होती है। तीसरे चरण में प्रक्रिया अत्यधिक गहराई से कार्य करती है। इसमें आगत सामग्री से जो अर्थ प्राप्त होता है उसका विश्लेषण होता है।

10.8 सारांश (Summary)

1. अवधान या ध्यान एक ऐसी चयनात्मक मानसिक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति एक विशेष शारीरिक मुद्रा बनाकर किसी वस्तु या उद्दीपक को चेतना के केन्द्र में लाता है।
2. अवधान (ध्यान) की कई विशेषताएं है जिनमें कुछ प्रमुख है- ध्यान एक चयनात्मक मानसिक प्रक्रिया होती है, ध्यान में शीरिरिक अभियोजन सीमित होता है, ध्यान में अस्थिरता का गुण पाया जाता है, अवधान में विभाजन का गुण पाया जाता है, आदि।
3. चयनात्मक अवधान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति कुछ खास क्रिया या उद्दीपक पर अपनी मानसिक एकाग्रता दिखलाता है तथा अन्य क्रियाओं या उद्दीपक पर बहुत कम ध्यान देता है। है। चयनात्मक अवधान की व्याख्या के लिए कई तरह के सिद्धान्तों का

प्रतिपादन किया गया है, जिसमें तीन प्रमुख है- (1) मार्गाविरोध सिद्धान्त (2) नॉरमैन एवं बॉबरो मॉडल (3) नाईसर मॉडल।

4. दीर्घीकृत अवधान या जिसे निगरानी भी कहा जाता है, एक ऐसी प्रत्यक्षज्ञानात्मक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अधिक समय तक अपना ध्यान किसी उद्दीपक पर केन्द्रित किये रहता है तथ उस उद्दीपक के प्रति सतर्कता बनाये रखता है।
5. सूचना संसाधन के अनुसार सबसे पहले संवेदना के माध्यम से वस्तु का ज्ञान होता है, उसके बाद प्रत्यक्षीकरण होता है।

10.9 शब्दावली (Vocabulary)

. ज्ञानेन्द्रियॉ - जिन अंगों के द्वारा व्यक्ति को वातावरण में उपस्थित वस्तु का ज्ञान होता है।

1. चेतना - यह मन का वह भाग है, जिसका सम्बन्ध तुरन्त ज्ञान से होता हैं|
2. एकाग्रता - वातावरण की अनेक वस्तुओं की ओर ध्यान ना देकर केवल किसी एक पर ध्यान केन्द्रित करना।
3. सूचना संसाधन - ज्ञानेन्द्रियों द्वारा वातावारण में सूचनाओं को ग्रहण करके शारीरिक एवं मानसिक क्रियायें करना।
4. न्यूरोन्स - मस्तिष्क में पाये जाने वाली कोशिकाये।
5. निष्पादन - अपनी योग्यता को प्रदर्शित करना।
6. RAS- रेटिकुलर एक्टिवेशन सिस्टम।

10.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति

1. दीर्घीकृत अवधान का पहला प्रयोगात्मक अध्ययन ....द्वारा किया गया।
2. फिल्टर तनुकरण मॉडल में सूचनायें संसाधित होने से पूर्णतः ....नहीं होती है।
3. चयनात्मक अवधान में कुछ खास उद्दीपक पर मानसिक ....अधिक होती है।
4. दीर्घीकृत अवधान के जेरीसन मॉडल एक ....सिद्धान्त है।
5. चयनात्मक अवधान के अध्ययन में प्रयोज्यो द्वारा ....सुनने का कार्य किया जाता है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective type Questions)

1. निम्नांकित में से कौन सा गुण अवधान में नहीं पाया जाता है?

   क. अवधान में विशेष प्रकार का शारीरिक अभियोजन होता है।

ख. अवधान का विस्तार सीमित होता है।

ग. अवधान में विभाजन का गुण पाया जाता है।

घ. अवधान का स्परूप भावात्मक होता है।

2. रोगी का अवधान दवा की दुकान की ओर जाना को आप निम्नांकित में से किस श्रेणी का अवधान कहेंगे ?

   क. एच्छिक अवधान।

   ख. अनैच्छिक अवधान।

   ग. स्वाभाविक अवधान।

   घ. अस्थिर अवधान।

3. अखबारों के पृष्ठों पर मोटे एवं बडे अक्षरों में छपे खबरों पर अन्य दूसरे अक्षरों में छपे खबरों की तुलना में हमारा अवधारन जल्द चला जाता है। इसका कारण निम्नांकित में से कौन-सा हो सकता है ?

क. उद्दीपक में परिवर्तन।

ख. उद्दीपक का आकार।

ग. व्यक्ति की इच्छा।

घ. उद्दीपक की नवीनता।

4. चयनात्मक अवधान के मार्गविरोधी सिद्धान्त के अनुसार निम्नांकित में से कौन सा कथन सत्य है?

क. चयनात्मक अवधान का कारण सूचना संसाधन के क्षेत्र में एक तरह का उत्पन्न रूकावट होता है।

ख. चयानात्मक अवधान का कारण साधन सीमित कार्य होता है।

ग. चयनात्मक अवधान का कारण ऑकडे-सीमित कार्य होता है।

घ. चयनात्मक अवधान का कारण व्यक्ति में सूचनाओं को संसाधित करने की एक सीमित क्षमता होती है।

5. चयनात्मक अवरोध के सिद्धान्तों में सबसे पहला सिद्धान्त किनके द्वारा प्रतिपादित किया गया था?

क. ट्रीटमैन द्वारा।

ख. ब्रौडबेन्ट।

ग. नॉरमैन एवं बोबरो द्वारा।

घ. नाईसर द्वारा।

6. फिल्टर-तनुकरण मॉडल के अनुसार निम्नांकित में से कौन कथन सत्य है?

क. सूचना संसाधन में अवरूद्धता प्रारंभ में उत्पन्न न होकर बाद में उत्पन्न होता है।

ख. सूचना संसाधन अवरूद्धता बाद में उत्पन्न न होकर प्रारंभ में उत्पन्न होता है।

ग. अवधान प्रत्यक्षण को नियंत्रित करता है।

घ. किसी कार्य पर ध्यान देने के लिए मानसिक प्रयास करने की शक्ति सीमित होती है।

7. दीर्घीकृत अवधान के क्षेत्र में किये गए प्रयोगों के आलोक में निम्नांकित में से कौन सा कथन सत्य है?

क. दीर्घीकृत अवधान एक तीव्र किया है जिसमें व्यक्ति को काफी मानसिक प्रयास करना पड़ता है।

ख. दीर्घीकृत अवधान में व्यक्ति में सतर्कता स्तर निम्न होता है।

ग. दीर्घीकृत अवधान एक तरह विभाजित अवधान होता है।

घ. दीर्घीकृत अवधान में अस्थिरता नहीं पायी जाती है।

8. मनोवैज्ञानिक अध्ययनों के आलोक में उत्तेजन स्तर तथा निष्पादन स्तर के संबंध का आलेख पर किस तरह दिखाया गया है?

क. विलेमित यू के समान।

ख. एक सीधी रेखा के समान।

ग. वी (V) अक्षर के समान।

घ. सी (C) अक्षर के समान।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. मैकवर्थ 2. अवरूद्ध 3. एकाग्रता 4. संज्ञानात्मक

5. द्विभाजित

VI) घ	X) ख
VII) क	XI) क
VIII) ख	XII) क
IX) क	XIII) क

10.11 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

1. संज्ञानात्मक मनोविज्ञान - अरूण कुमार सिंह, मोती लाल बनारसी दास।
2. आधुनिक प्रायोगिक मनोविज्ञान - लाल बचन त्रिपाठी, एच0पी0 मार्ग व बुक हाउस।
3. संज्ञानात्मक मनोविज्ञान - डा0 अनिल कुमार, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Types Questions)

1. अवधान से आप क्या समझते है? इसकी प्रमुख विशेषतायें बताइये।
2. चयनात्मक अवधान के आप क्या समझते है? इसकी व्याख्या मार्गरोधी सिद्धान्तों द्वारा करिये।
3. दीर्घीकृत अवधान के स्वरूप को समझाइये? इसके प्रमुख कारकों (निर्धारकों) का वर्णन करिये।
4. चयनात्मक अवधान तथा दीर्घीकृत अवधान में अन्तर बताइये।

इकाई-11 प्रत्यक्षण का स्वरूप, एवं सिद्धान्त, प्रत्यक्षात्मक सीखना (Nature and Theories of Perception, Perceptual learning)

11.0 प्रस्तावना

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रत्यक्षीकरण

11.2.1 प्रत्यक्षीकरण की विशेषतायें

11.3 प्रत्यक्षीकरण के सिद्धान्त

11.3.1 गेस्टाल्ट सिद्धान्त

11.3.1.1 समग्रता का नियम

11.3.1.2 आकृति पृष्ठभूमि प्रत्यक्षण

11.3.1.3 प्रत्यक्षज्ञानात्मक संगठन का नियम

11.3.1.4 समाकृतिकता का सिद्धान्त

11.3.2 निदेश अवस्था सिद्धान्त

11.3.3 दैहिक उपागम सिद्धान्त

11.3.4 गिब्सन का सिद्धान्त

11.3.5 सूचना संसाधन सिद्धान्त

11.3.6 व्यवहारवादी सि़द्धान्त

11.4 प्रत्यक्षज्ञानात्मक सीखना

11.5 सारांश

11.6 शब्दावली

11.7 अभ्यास प्रश्न

11.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.0 प्रस्तावना (Introduction)

प्राणी जिस परिवेश में रहता है उस परिवेश से उसे उत्तेजनायें मिलती है। इन उत्तेजनाओं के प्रति वह अनुक्रियायें करता है, ये अनुक्रियायें आन्तरिक एवं बाहरी दोनों प्रकार की हो सकती है। इसी को व्यवहार कहा जाता है। प्रत्यक्षीकरण एक मानसिक प्रक्रिया है, सबसे पहले प्राणी वातावरण के प्रति जो पहली अनुक्रिया करता है, उसे संवेदना कहते है। मानसिक प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति इन अनुक्रियाओं की व्याख्या करता है उसे प्रत्यक्षीकरण कहते है। 'प्रत्यक्षण' का अर्थ होता है- संवेदनाओं के अर्थ की व्याख्या करना! प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रिया में केवल किसी वस्तु या उद्दीपक का परिचय नहीं होता है बल्कि उसके विषय में ज्ञान भी होता है। प्रत्यक्षीकरण के द्वारा व्यक्ति को उत्तेजना के रंग, रूप, आकार आदि का ज्ञान होता है।

11.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

- प्रत्यक्षण की प्रकृति को समझ सकेंगें।
- प्रत्यक्षण के विभिन्न सिद्धान्तों को समझ सकेंगें।
- प्रत्यक्षज्ञानात्मक सीखना के बारे में जान सकेंगें।

11.2 प्रत्यक्षीकरण (Perception)

प्राणी किसी न किसी वातावरण में रहता है। वातावरण से उसे उत्तेजनायें मिलती है जो उसमें अनुक्रिया उत्पन्न करती है। वातावरण से प्राप्त होने वाली इन उत्तेजनाओं का ज्ञान जिस मानसिक प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति को होता है उसे प्रत्यक्षीकरण कहते है। इस मानसिक प्रक्रिया से प्रापत संवेदनाओं की व्यक्ति व्याख्या करता है, सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रत्यक्षीकरण का संबन्ध वातावरण की उत्तेजनाओं के सम्बन्ध में सूचनाओं को ग्रहण करता है और फिर उन्हें प्रोसेस करता है।

प्रत्यक्षण एक महत्वपूर्ण मानसिक प्रक्रिया है। मनोविज्ञान व्यवहार एवं मानसिक प्रक्रियाओं के अध्ययन का विज्ञान है। प्रत्यक्षण के आधार पर व्यवहार एवं मानसिक प्रक्रियाओं का सही अध्ययन हो पता है। प्रत्यक्षण की क्रिया संवेदन की प्रक्रिया से प्रारंभ होती है और किसी व्यवहार करने की क्रिया के पहले तक होती रहती है। इसलिए प्रत्यक्षण की प्रक्रिया संवेदन तथा व्यवहार करने की क्रिया के बीच की प्रक्रिया होती है।

परिभाषायें

1) कोलमैन के अनुसार ‘‘ प्रत्यक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव को अपने आंतरिक अंगों तथा अपने वातावरण के बारे में सूचना मिलती है|”

2) आइजनेक के अनुसार ‘‘ प्रत्यक्षण प्राणी का एक मनोवैज्ञानिक प्रकार्य है जिसका सम्बन्ध वातावरण की स्थिति या परिवर्तनों की सूचनाग्रहण करने से है|”

11.2.1 प्रत्यक्षीकरण का विशेषतायें (Characteristics of Perception)

1) **प्रत्यक्षण के लिए उद्दीपक का होना अनिवार्य है -** प्रत्यक्षण हमेशा किसी वस्तु, घटना या व्यक्ति का होता है। जिन व्यक्तियों, घटनाओं या वस्तुओं का प्रत्यक्षण होता है, उसे उद्दीपक कहा जाता है। जब कोई उद्दीपक व्यक्ति के सामने उपस्थित नहीं होगा, उसमें कोई संवेदन नहीं होगा और फिर तब उसका प्रत्यक्षण भी नहीं होगा।
2) **प्रत्यक्षण में उद्दीपक का तुरन्त अनुभव होता है -** जब व्यक्ति के सामने कोई उद्दीपक उपस्थित होता है, तो उसका ज्ञान हमें तुरन्त होता है न कि उस उद्दीपक के बारे में कुछ देर तक सोचने के बाद। जैसे, यदि कोई व्यक्ति कमरे में बैठकर पढ़ रहा है। इतने में उसका भाई उस कमरे में प्रवेश करता है तो भाई के भीतर प्रवेश करते ही उसका प्रत्यक्षण हो जाता है न कि व्यक्ति कुछ देर सोचता है और तब भाई का उसे प्रत्यक्षण होता है। जो उद्दीपक व्यक्ति के सामने उपस्थित नहीं रहता है उसका हम प्रत्यक्षण नहीं कर सकते है।
3) **प्रत्यक्षण एक सक्रिय मानसिक प्रक्रिया-** प्रत्यक्षण एक सक्रिय मानसिक क्रिया है अर्थात किसी उद्दीपक का प्रत्यक्षण करते समय व्यक्ति का मस्तिष्क बहुत सक्रिय हो जाता है और वस्तु या घटना की व्याख्या अपने पुराने अनुभवों के आधार पर करता है। उदाहरण:- ‘आम‘ को देखकर मात्र आम का ही प्रत्यक्षण नहीं होता बल्कि इसका विशेष गुण खट्टा या मीठा होने का भी हम प्रत्यक्षण करते है। हम आम देखते ही यह भी कहते है कि यह आम खट्टा या मीठा होगा।
4) **प्रत्यक्षण एक संज्ञानात्मक प्रक्रिया है-** संज्ञानात्मक प्रक्रिया से तात्पर्य वैसी प्रक्रिया से होता है जिसके द्वारा हमें आन्तरिक एवं वाह्य दोनों तरह के उद्दीपकों के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है। बाह्य उद्दीपक वातावरण में होते है तथा आन्तरिक उद्दीपक शरीर के भीतर होते है। किताब, टेबुल, पेंसिल आदि बाह्य उद्दीपक के उदाहरण है तथा पेट ऐंठना, दिल की धडकन आदि आन्तरिक उद्दीपक के उदाहरण है जिसका भी हमें प्रत्यक्षण होता है।
5) **प्रत्यक्षण में उद्दीपकों को संगठित किया जाता है -** प्रत्यक्षण में उद्दीपकों का विशेष नियमों के आधार पर एक खास ढंग से संगठन भी होता है। उदाहरणः-यदि किसी व्यक्ति का एक हाथ दुर्घटना या किसी बीमारी के कारण काट दिया गया है और यदि वह व्यक्ति हमारे सामने आता है तो हम उसे एक व्यक्ति के रूप में संगठित कर ही उसका प्रत्यक्षण करते है।
6) **प्रत्यक्षण एक चयनात्मक प्रक्रिया है-** प्रत्यक्षण एक चयनात्मक मानसिक प्रक्रिया है। एक समय अनेकों उद्दीपक हमारी ज्ञानेन्द्रियों को उत्तेजित करते है, परन्तु उनमें से सभी का

हम प्रत्यक्षण नहीं कर पाते हैं। हम केवल उन्हीं उद्दीपकों का प्रत्यक्षण करते हैं जिन पर हम ध्यान देते है|

उदाहरण:- सड़क पर चलते समय दुकान में लगे अनेकों साइनबोर्ड हमें नजर आते है। परन्तु जिस साइनबोर्ड पर बडे अक्षरों में कुछ लिखा होता है, उस पर हमारा ध्यान जल्दी चला जाता है और हम उस साइनबोर्ड का प्रत्यक्षण जल्दी कर लेते है।

11.3 प्रत्यक्षण के प्रमुख सिद्धान्त – (Principles of Perception)

11.3.1 **गेस्टाल्ट सिद्धान्त:-** गेस्टाल्ट उपागम या सिद्धान्त का प्रतिपादन वर्दाइमर, कोहलर, कौफ्का द्वारा किया गया। गेस्टाल्ट का अर्थ है - रूप तथा पूरा। इस सिद्धान्त की व्याख्या निम्नलिखित भागों में बॉटकर की गई है।

1. समग्रता का नियम
2. आकृति-पृष्ठभूमि प्रत्यक्षण
3. प्रत्यक्षज्ञानात्मक संगठन का नियम
4. समाकृतिकता का सिद्धान्त

11.3.1.1 समग्रता का नियम – (Principle of Totality)

गेस्टाल्ट सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति किसी वस्तु का प्रत्यक्षण अलग-अलग रूप में न कर सम्पूर्ण रूप से करता है। किसी उद्दीपक के आकार, रंग-रूप आदि से सम्बन्धित संवेदनाये अलग-अलग नहीं होती है बल्कि ये पूर्णरूप में होती है। उदाहर्ण:- व्यक्ति जब किसी दूसरे व्यक्ति के चेहरे को देखता है, तो उसके ऑख, नाक, नाक, होठ, आदि को अलग-अलग नहीं देखता है। वह चेहरे का एक साथ प्रत्यक्षीकरण करता है।

11.3.1.2 आकृति- पृष्ठभूमि प्रत्यक्षण (Figure – Background Principle)

जब व्यक्ति किसी वस्तु विशेष का प्रत्यक्षण करता है, तो उसे वस्तु-विशेष का कुछ भाग एकदम स्पष्ट दिखलाई देता है तथा कुछ भाग कम स्पष्ट दिखाई देता है। जो भाग स्पष्ट दिखाई देता है उसके ‘आकृति‘ तथा जो भाग कम स्पष्ट दिखलाई देता है उसे ‘पृष्ठभूमि‘ कहा जाता है। इस तरह के प्रत्यक्षण को ‘आकृति-पृष्ठभूमि प्रत्यक्षण‘ कहा जाता है।

I. आकृति का एक निश्चित आकार होता है जबकि पृष्ठभूमि का आकार नही होता है।
II. पृष्ठभूमि हमेशा आकृति के पीछे होती है और आकृति उसी पृष्ठभूमि पर उभरी हुई दिखलाई पड़ती है।

III. आकृति का एक निश्चित आकार होता है जिसके कारण वह अधिक प्रभावपूर्ण होती है। पृष्ठभूति का आकार अस्पष्ट एवं अनिश्चित होता है, इसलिए वह प्रभावहीन होता है तथा उसे जल्दी ले जाते है।

IV. आकृति का स्थान करीब-करीब निश्चित तथा सीमित होता है परन्तु पृष्ठभूमि पीछे की ओर फैली होती है।

11.3.1.3 प्रत्यक्षणात्मक संगठन का नियम – (Principle of Perceptual Organization)

प्रत्यक्षण में एक तरह का संगठन पाया जाता है। जब भी व्यक्ति किसी वस्तु का प्रत्यक्षण करता है, उसे एक खास पैटर्न के रूप में संगठित करता है। प्रत्यक्षणात्मक संगठन दो तरह के नियमों द्वारा निर्धारित होता है-

1) **परिधीय नियम -** उन नियमों को रखा जाता है जो उद्दीपक से संबंधित होते है। जैसे- उद्दीपकों में सन्निकटता, समानता, निरंतरता, अच्छी प्रकृति, रिक्ति आदि कुछ ऐसे गुण होते है, जिनके कारण प्रत्यक्षण में संगठन उत्पन्न होता है। उद्दीपकों के इन गुणों से संबंधित सभी नियम जन्मजात होते है न कि व्यक्ति उसे अर्जित कर सीखता है।
2) **केन्द्रीय नियम -** जिनसे प्रत्यक्षण में संगठन उत्पन्न होता है। इसमें अभिप्रेरण, मनोवृत्ति आदि को रखा जाता है। इन नियमों का व्यक्ति अपने जीवन काल में अर्जित करता है। ये जन्मजात नहीं होते है। संगठन के प्रमुख नियम निम्नलिखित है-

11.3.1.4 समाकृतिकता का सिद्धान्त – (Principle of isomorphism)

इस नियम के अनुसार जब व्यक्ति किसी उद्दीपक या घटना या वस्तु का प्रत्यक्षण करता है तो मस्तिष्क में उससे सम्बन्धित क्षेत्र में कुछ परिवर्तन होते है। इससे पता चलता है कि प्रत्यक्षण के दो पहलू होते है।

i. प्रत्यक्षज्ञानात्मक क्षेत्र
ii. मस्तिष्क क्षेत्र या गत्यात्मक क्षेत्र

इन दोनों के बीच एक सीधा सम्बन्ध होता है।

उदाहरणःदो बल्ब है जिन्हें अंधेरे कमरे में एक दूसरे के नजदीक रखे गये है। इन दोनो बल्बों को एक खास समय अन्तराल पर बारी-बारी से जलाया जाता है। जब कोई व्यक्ति इन्हें देखता है तो उसे लगता है कि एक ही बल्ब एक निश्चित दिशा में घूम रहा है। वदाइमर ने इसे ‘‘फाई-घटना” कहा। उनके अनुसार जब हमारे प्रत्यक्षज्ञानात्मक क्षेत्र में दो बल्ब एक निश्चित दिशा में घूमते नजर आते है तो ठीक इसी तरह से इन दोनो उद्दीपको (बल्बों) से सम्बन्धित हमारे मस्तिष्क में भी दो क्षेत्र होते है! ये दोनो क्षेत्र भी एक दूसरे को ठीक उसी तरह से प्रभावित करते है जैसे एक बल्ब की

रोशनी दूसरे बल्ब की रोशनी को। समाकृतिकता के सिद्धान्त के अनुसार मस्तिष्क एक तरह का गत्यात्मक क्षेत्र होता है और इसका सीधा सम्बन्ध प्रत्यक्षज्ञानात्मक क्षेत्र के साथ होता है।

1) **सन्निकता का नियम – (Principle of Proximity)**

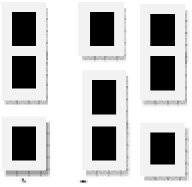

प्रत्यक्षणात्मक संगठन के इस नियम के अनुसार जो उद्दीपक एक-दूसरे उद्दीपक से समय या स्थान में नजदीक होते हैं.उन्हें व्यक्ति आपस में संगठित करके देखता है अर्थात उनको प्रत्यक्षण करता हैं। एक स्पष्ट आकृति के रूप में देखता है।

2) **समानता का नियम – (Principle of Similarity)**

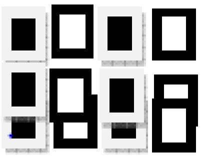

इन नियम के अनुसार जो उद्दीपक एक-दूसरे के समान होते है, उन्हें व्यक्ति एक साथ संगठित प्रत्यक्षण करता हैं।

3) **सममिति का नियम – (Principle of Symmetry)**

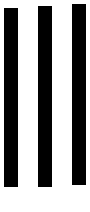

इन्हें उत्तम आकृति का नियम भी कहते है। इस नियम के अनुसार जो उद्दीपक अधिक सुडौल या सममित होता है, उसे व्यक्ति एक स्पष्ट आकृति के रूप में संगठित करके देखता है।

4) **सामान्य गति का नियम** – **(Principle of Common Fate)**

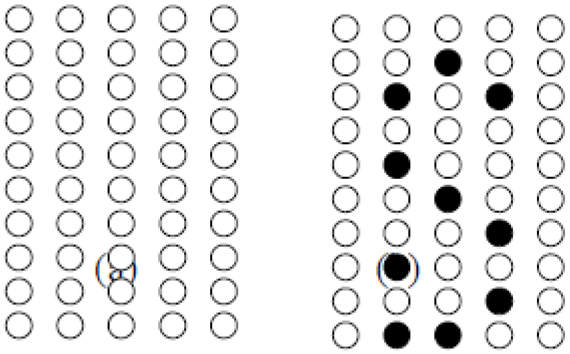

इस नियम के अनुसार जब उद्दीपक दृष्टि क्षेत्र से होते है और उनमें सामान्य गति या परिवर्तन होते पाये जाते है, उन्हें व्यक्ति एक खास पैर्टन में संगठित हुए प्रत्यक्षण करता है।

5) **बन्दी का नियम** – **(Principle of Closure)**

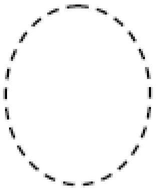

इस नियम के अनुसार व्यक्ति उद्दीपक में रिक्त स्थानों को अपनी ओर से भरकर उसे संगठित पैर्टन के रूप में देखता है। चित्र में एक गोले के खाली स्थान को भरकर हम उसे पूरे एक गोले के रूप में देखते है।

11.3.2 निदेश-अवस्था सिद्धान्त (Directive – State Theory)

निदेश अवस्था सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रत्यक्षण के गेस्टाल्ट सिद्धान्त विरोध में हुआ। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन जिसमें ब्रुनर, शेफर तथा मर्फी, ब्रुनर तथा पोस्टमैन न किया। उनके अनुसार गेस्टाल्टवादियों की विचारधारा से प्रत्यक्षण की व्याख्या ठीक ढंग से नहीं हो पाती है। गेस्टाल्टवादियों द्वारा प्रत्यक्षण में पूर्ण क्षेत्र के संप्रत्यय पर अधिक बल डाला गया है। तो व्यक्तिगत कारकों (व्यवहारपरक या प्रेरणात्मक कारक) के बारे में कुछ नहीं कहा है। प्रत्यक्षण में व्यक्तिगत कारकों की उपेक्षा करके गेस्टाल्टवादियों ने एक महत्वपूर्ण भूल की है। गेस्टाल्टवादियों के इस भूल को सुधारने के उद्देश्य से निदेश-अवस्था सि़द्धान्त का प्रतिपादन किया गया। इनक अनुसार प्रत्यक्षण दो तरह के कारकों द्वारा निर्धारित होता है।

1) **स्थानिक कारक:-** इसमे उद्दीपक से संबंधित कारक आते है।

2) **व्यवहारपरक कारक:-** इसमें व्यक्तिगत कारक जैसे आवश्यकता, अभिप्रेरक, मान आदि आते है।

ब्रुरन तथा पोस्टमैन ने बताया है कि निदेश-अवस्था सिद्धान्त का संबंध प्रत्यक्षण से व्यवहारपरक कारकों या अभिप्रेरणात्मक कारकों का महत्व दिखलाने से है। निदेश-अवस्था सिद्धान्त को क्रियात्मक सिद्धान्त भी कहा जाता है।

11.3.3 प्रत्यक्षण का दैहिक उपागम का सिद्धान्त (Physiological Approach of Perception)

इस सिद्धान्त के अनुसार जब कोई उद्दीपक से व्यक्ति की ज्ञानेन्द्रियां प्रभावित होती है तो उनमें तंत्रिका आवेग उत्पन्न हो जाता है जो मस्तिष्क के विशिष्ट क्षेत्र में पहुचता है। इसके कारण व्यक्ति को उसका प्रत्यक्षण होता है। ज्ञानेन्द्रियों से लेकर मस्तिष्क तक होने वाली प्रक्रिया को न्यूरोदैहिक प्रक्रम कहा जाता है। इस सिद्धान्त के द्वारा व्यक्ति के प्रत्यक्षणात्मक अनुभवों की व्याख्या उसी न्यूरोदैहिक प्रक्रम के रूप में होती है।

11.3.4 गिब्सन का सिद्धान्त: (Gibson's Theory of Perception)

प्रत्यक्षण के स्वरूप की व्याख्या करने के लिए जे0जे0 गिब्सन ने इस उपागम का प्रतिपादन किया। उनके अनुसार पर्यावरण के उद्दीपक में पर्याप्त सूचनाए होती है। प्रत्यक्षण मे वस्तुओं के गुणों या विशेषताओं पर व्यक्ति को अधिक ध्यान देना चाहिए ताकि यह आसानी से निश्चित किया जा सके कि प्रत्यक्षण के लिए वस्तु की कौन विशेषता अधिक महŸवपूर्ण है। इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्यक्षण का निर्धारण वस्तु के गुणों या विशेषताओं के आधार पर होता है जिसका प्रत्यक्षण व्यक्ति सीधे करता है। । गिब्सन के प्रत्यक्ष सिद्धान्त को प्रत्यक्षण का 'प्रत्यक्ष सिद्धान्त' कहा जाता है। गिब्सन के अनुसार प्रत्यक्षण बिलकुल ही प्रत्यक्ष होता है। जैसे-हमलोग उद्दीपकया वस्तु के गुण के आधार पर कह सकते है कि वह वस्तु हमसे कितनी दूरी पर है। हम जो पहले सीख चुके होते है, उसके आधार पर उस वस्तु की दूरी के परिकलन करने की आवश्यकता नहीं होती है। इस तरह से किसी वस्तु का प्रत्यक्षण करने में व्यक्ति को अपने भीतर झॉकने की आवश्यकता नहीं होती है बल्कि सिर्फ उद्दीपक की विशेषताओं के आधार पर वह अपने प्रत्यक्षण को बढ़ा या घटा लेता है। इस सिद्धान्त के गुण तथा दोष निम्नलिखित है।

गुण:-

i. प्रत्यक्षण का स्वरूप सरल एवं प्रत्यक्षण होता है।
ii. सभी तरह के प्रत्यक्षण का आधार उद्दीपक की विशेषता ही होती है।
iii. प्रत्यक्षण में प्रत्यक्षणकर्ता से संबंधित चरों का कोई महत्त्व नहीं होता है।

11.3.5 सूचना-संसाधन उपागम (Information Processing Approach)

प्रत्यक्षण के इस सिद्धान्त का प्रतिपादन एटकिन्सन तथा शीफ्रिन द्वारा किया गया। इस सिद्धान्त में प्रत्यक्षण की व्याख्या वाह्य वातावरण या उद्दीपक से प्राप्त सूचनाओं को विभिन्न स्तर पर संसाधित करके किया जाता है। 'सूचना' से तात्पर्य एक ऐसी चीज से होती है जिसके प्राप्त होने से व्यक्ति के मन मे उद्दीपक के बारे में बनी अनिश्चितता दूर हो जाती है। उदाहरणः आप अपने कॉलेज के पुस्तकालय में एक ऐसी विशेष किताब खोज रहे है। आपको मालूम है कि किताब वहॉ है परंतु किताब कहॉ पर रखी हुई है, यह आपको पता नहीं है। अगर कोई आदमी यह बतलाता है कि वह किताब पुस्तकालय में है तो यह बात आपके लिए कोई 'सूचना' नहीं कहला सकती है क्योंकि इससे अपको यह पता नहीं चलता है कि किताब कहॉ है। आपके मन में एक अनिश्चितता बनी की बनी ही रह जाती है। सूचना संसाधन यिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति की प्रत्यक्षण क्षमता सीमित होती है। कोई व्यक्ति बहुत सारे उद्दीपकों में से कुछ का ही प्रत्यक्षण कर पाता है। अगर व्यक्ति किसी एक सूचना पर ध्यान देता है तो उसे दूसरे तरह की सूचना को छोड़ना ही पड़ता है। किसी भी सूचना का प्रवाह कई चरणों में होता है, जो निम्न प्रकार है।

1. **उद्दीपक:** व्यक्ति के सामने कोई उद्दीपक उपस्थित होता है, जो उसके संवेदी ग्राहक को प्रभावित करता है।
2. **संवेदी ग्राहक:** उद्दीपक व्यक्ति के संवेदी ग्राहको (ऑख, नाक, कान, आदि) को प्रभावित करता है जिससे सूचनाए केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में पहुचती है।
3. **केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र:** केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र संवेदी ग्राहको से मिलने वाली सूचनाओं को ग्रहण करता है। ऐसी सूचनाए वहॉ पहले से उपस्थित सूचनाओं से प्रभावित होती है।
4. **कॉर्टिकल मस्तिष्कीय केन्द्र:** केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा ग्रहण की गई सूचनाओं को मस्तिष्क के विभिन्न केन्द्रों द्वारा संसाधित किया जाता है।
5. **अनुक्रिया** अन्त में कॉर्टिकल मस्तिष्कीय केन्द्रों से प्राप्त सूचना के आधार पर व्यक्ति प्रत्यक्षण की अनुक्रिया को ठीक ढंग से कर पाता है।

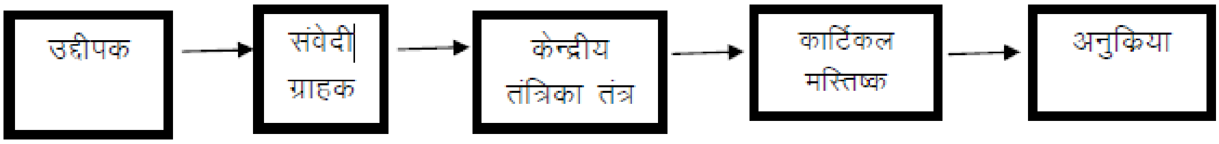

इस मॉडल के अनुसार व्यक्ति तीन अवस्थाओं में संसाधित करते हुए सूचनाओं का प्रत्यक्षण करता है। सबसे पहले व्यक्ति की ज्ञानेन्द्रियों से सूचनायें लघु संवेदी संचयन में जाती है। उससे फिर वे लघु-कालीन स्मृति में प्रवेश करती है और अन्त में दीर्घकालीन स्मृति में प्रवेश करती है। सूचना संसाधन सिद्धान्त के अनुसार प्रत्यक्षण, संवेदन आदि मानसिक प्रक्रियाए एक-दूसरे से आपस में सम्बन्धित होती है। जब व्यक्ति की ज्ञानेन्द्रियां किसी उद्दीपक से प्रभावित होती है तो संवेदन होता है फिर उसका संसाधन करने से व्यक्ति को प्रत्यक्षण होता है। इन प्रत्यक्षित उद्दीपकों या घटनाओं को संसाधित कर व्यक्ति उसे आपकी स्मृति में लाता है।

11.3.6 व्यवहारवादी सिद्धान्त (Behavioural Approach)

व्यवहारवादी सिद्धान्त के अनुसार प्रत्यक्षण एक प्रकार का सीखा गया व्यवहार है। इन लोगों का मत है कि प्रत्यक्षण पूरी तरह से एक सीखा गया व्यवहार होता है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन हल द्वारा किया गया। हल के अनुसार किसी खास समय में तंत्रिका तंत्र के सभी संवेदी तंत्रिका आवेग सक्रिय होते है, ये एक-दूसरे के साथ अतःक्रिया करते है। हल के अनुसार जब कोई उद्दीपक व्यक्ति के सामने कुछ देर तक रखने के बाद हटा लिया जाता है तो कुछ देर तक उसका प्रभाव तंत्रिका तंत्र में होता है। इस प्रभाव को 'उद्दीपक चिन्ह' कहा जाता है। हल ने तंत्रिका आवेग के बीच इन अन्तः क्रियाओं के आधार पर एक विशेष संप्रत्यय का प्रतिपादन किया जिसे उद्दीपक पैटर्न्स कहा जाता है। हल का विचार था कि जब एक ही संवेदी क्षेत्र के कई उद्दीपक बार-बार व्यक्ति को दिखाये जाते है तो इससे उद्दीपकों का एक पैटर्न विकसित होता है जिससे ऐसी अनुक्रियाए उत्पन्न होती है जो उस उद्दीपक पैटर्न के किसी भी पृथक उद्दीपक द्वारा उत्पन्न अनुक्रिया से अलग होती है। कोई उद्दीपक किसी एक पैटर्न में रहकर एक ढंग की अनुक्रिया उत्पन्न करता है तथा वही उद्दीपक दूसरे पैटर्न में रहकर दूसरी अनुक्रिया उत्पन्न करता है। इसका कारण यह है कि एक ही उद्दीपक जब भिन्न-भिन्न उद्दीपक पैटर्न से सम्मिलित हाता है तो प्रत्येक पैटर्न में उसका प्रकार एवं गुण बदल जाता है। उद्दीपकों के इस पैटर्निग के आधार पर हल ने यह बतलाया है कि भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में एक ही उद्दीपक के अर्थ बदल जाते है।

Sword 80S3

चित्र में एक शब्द 'सॉर्ड' है जिसका मतलब हिन्दी में तलवार होता है तथा दांयी ओर 'ऐट थाऊजेण्ड फिफ्टी श्री' (आठ हजार तिरपन) लिखा हुआ है। अब 'सॉर्ड' के 'S' तथा 'O' और 'एट थाऊजेण्ड फिफ्टी 'जीरो' '0' तथा फाइव '5' को ध्यान से देखने पर ये दोनों उद्दीपक दोनों ही परिस्थितियों में समरूप हैं यानी समान ढंग से लिखे गये है।

इन दोनों को शब्द के संदर्भ में 'एस' तथा 'ओ' के रूप में पढ़ा जाता है तथा अंको में इसे 'फाइव' (पॉच) तथा 'जीरो' (शून्य) पढ़ा जाता है। इस प्रकार अतः एक ही उद्दीपक का अर्थ अलग-अलग उद्दीपक पैटर्न्स में अलग-अलग होता है।

11.4 प्रत्यक्षज्ञानात्मक सीखना (Perceptual Learning)

प्रत्यक्षण में वैयक्तिक विभिन्नता होती है। एक ही वस्तु या घटना का प्रत्यक्षण दो व्यक्ति अपने-अपने ढंग से करते है। जब कोई दो व्यक्ति एक ही घटना या वस्तु का प्रत्यक्षण कर रहे होते है तो इन दोनों का प्रत्यक्षण एक समान न होकर एक-दूसरे से भिन्न होता है।

व्यक्ति का प्रत्यक्षण भिन्न-भिन्न कारकों से प्रभावित होता है और एक-दूसरे से अलग हो जाता है। इसमें से एक प्रमुख कारक सीखना है। व्यक्ति को अपने बीते दिनों से अलग-अलग अनुभव प्राप्त होते है। ये अनुभव अलग-अलग होते है जिसके कारण एक ही वस्तु या घटना का प्रत्यक्षण व्यक्ति अलग-अलग तरीके से करता है। उदाहरण-राम एक व्यक्ति है जो मोहन के साथ गलत व्यवहार करता है परन्तु सोहन के साथ विनम्रता के साथ व्यवहार करता है। राम के प्रति मोहन का पुराना अनुभव कटुता का है परन्तु सोहन का अनुभव मधुरता का है। इस प्रकार राम के प्रति मोहन का अनुभव अच्छा नहीं है परन्तु सोहन उसी राम को पसन्द करता है। इसलिए मोहन राम को एक अभद्र व्यक्ति होने का प्रत्यक्षण करेगा परन्तु सोहन उसी राम को एक भ्रद व्यक्ति होने का प्रत्यक्षण करेगा। इस प्रकार व्यक्ति की अनुभूति उसके सीखने का प्रत्यक्षण पर काफी प्रभाव पड़ता है। प्रत्यक्षणात्मक सीखना अपने पिछले अनुभूति के कारण सीखी गयी एक विशेष क्षमता है। गिब्सन के अनुसार ''वातावरण की उत्तेजनाओं से हुए अनुभूति या अभ्यास के कारण व्यक्ति की क्षमता में हुई वृद्धि को प्रत्यक्षणात्मक सीखना कहा जाता है जिसके द्वारा व्यक्ति वातावरण से अधिक-से-अधिक सूचनाओं को ग्रहण कर पाता है|" प्रत्यक्षणात्मक सीखना एक तरह का संज्ञानात्मक सीखना है और इससे यह पता चलता है कि प्रत्यक्षण की प्रक्रिया सीखने के द्वारा बहुत प्रभावित होती है। जब कोई व्यक्ति ने किसी तकनीकी कार्य करने का प्रशिक्षण लेता है, तो उसे उस कार्य से संबंधित वस्तुओं का प्रत्यक्षण अन्य दूसरे व्यक्ति में से अलग होता है। प्रत्यक्षण में इस तरह के अन्तर का कारण प्रत्यक्षज्ञानात्मक सीखना है।

उदाहरण: एक प्रशिक्षित पक्षिविज्ञानी भिन्न-भिन्न प्रकार के पक्षियों की भाषाओं तथा आपस में की गइ बात को आसानी से समझ लेता है जबकि एक सामान्य व्यक्ति के लिए ऐसा करना कठिन होता है। लेकिन जब कोई सामान्य व्यक्ति भी उसी तरह का प्रत्यक्षणनात्मक सीखना पूरा कर लेता है, तो उसे भी पक्षियों की भाषाओं को समझने में कोई कठिनाई नहीं रह जाती। प्रत्यक्षज्ञानात्मक सीखना व्यक्ति की उस क्षमता से संबंधित होता है, जिसके सहारे वह वातावरण की वस्तुओं के बारे में अर्थ निकाल सकता है।

11.5 सारांश (Summary)

- प्रत्यक्षीकरण के द्वारा व्यक्ति वातावरण की संवेदनाओं को प्राप्त करता है और उनकी व्याख्या करता है।
- यह एक मानसिक प्रक्रिया है।
- इसमें उद्दीपक से सम्बन्धित संवेदनाओं में एकता और संगठन पाया जाता है।

- प्रत्यक्षीकरण के प्रमुख सिद्वान्त है: गेस्टाल्ट सिद्धान्त, निदेश अवस्था सिद्धान्त, दैहिक उपागम, गिब्सन सिद्धान्त, सूचना संसाधन सिद्धान्त, व्यवहारवादी सिद्धान्त।
- व्यक्ति के अनुभवों पर उसके सीखने का प्रभाव प्रत्यक्षण पर पड़ता है।
- इस अनुभवों एवं अभ्यास के कारण उसकी क्षमता बढ जाती है, जिसे प्रत्यक्षणात्मक सीखना कहते है।

11.6 शब्दावली: (Vocabulary)

1. अभिप्रेरण -व्यक्ति के अन्दर होने वाला शक्ति परिवर्तन जब किसी लक्ष्य की ओर होता है।
2. मनोवृत्ति - किसी व्यक्ति, वस्तु या विचार के प्रति प्रतिक्रिया करने की तत्परता।
3. शीलगुण -इससे व्यक्ति का व्यवहार निर्देशित होता है और उसके कारण ही व्यक्ति खास तरह का व्यवहार करता है।
4. ज्ञानेन्द्रियाँ- जिन अंगों के द्वारा व्यक्ति को वातावरण में उपस्थित वस्तु या उद्दीपक का ज्ञान होता है।
5. तंत्रिका आवेग - तंत्रिका तंत्र की सबसे छोटी इकाई न्यूरान होती है जिसमें सूचनाए तंत्रिका आवेग द्वारा प्रभावित होती है।
6. केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र - ये सबसे प्रमुख तंत्रिका तंत्र है जिसकी मुख्य संरचना मस्तिष्क तथा स्पाइनल कार्ड होती है।

11.7 अभ्यास प्रश्न: (Practice Questions)

1. निवेश-अवस्था उपागम में प्रत्यक्षण का आधार व्यक्ति की आवश्यकता, मूल्य आदि को माना जाता है| (सही/गलत)

2. जिस प्रक्रिया द्वारा ज्ञानेन्द्रिष सूचनाओं को ग्रहण करती है तथा मस्तिष्क को फिर सूचित करती है, प्रत्यक्षण कहते है| (सही/गलत)

3. गिब्सन ने दूरी व गहराई के प्रत्यक्षण में व्यक्ति के अनुभव व प्रशिक्षण को अधिक महत्वपूर्ण माना है| (सही/गलत)

4. प्रत्यक्षज्ञानात्मक संगठन का सबसे मौलिक नियम आकृति-पृष्ठभूमि सम्बन्ध है| (सही/गलत)

5. प्रत्यक्षण के गेस्टाल्ट सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति किसी वस्तु का प्रत्यक्षण अलग-अलग ना करके सम्पूर्ण रूप में करता है| (सही/गलत)

6. प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता एक तरह का प्रत्यक्ष ज्ञानात्मक ....है|

7. प्रत्यक्षण की क्रिया ....से प्रारंभ होती हैं।

8. प्रत्यक्षणात्मक संगठन के ....नियम के अनुसार जो उद्दीपक एक दूसरे के निकट होते है, उन्हें आपसे मे संगठित करके देखा जाता है।

9. सूचना संसाधन उपगम के अनुसार व्यक्ति के प्रत्यक्षण की क्षमता ....होती है।

10. ....में व्यक्ति उन उद्दीपकों को भी पहचान लेता है, जिनकी तीव्रता चेतन पहचान की देहली से कम होती है।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

1. सही — 6. विकृति
2. गलत — 7. संवेदन
3. गलत — 8. सन्निकटता
4. सही — 9. सीमित
5. सही — 10. अवचेतन प्रत्यक्षण

11.8 सन्दर्भ ग्रन्थ: (Reference Books)

1. डा0 प्रीती वर्मा, डा0 डी0 एन0 श्रीवास्तव, आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
2. अरूण कुमार सिंह -संज्ञानात्मक मनोविज्ञान , मोतीलाल बनारसी दास।
3. लाल बचन त्रिपाठी -आधुनिक प्रायोगिक मनोविज्ञान , एच0पी0 भार्गव बुक हाउस।
4. विजय प्रताप कुमार - संज्ञानात्मक मनोविज्ञान , यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

11.9 निबन्धात्मक प्रश्न – (Essay Types Questions)

1. प्रत्यक्षण को परिभाषित करिये और इसकी विशेषताओं को बताइये ?
2. प्रत्यक्षण एक चयनात्मक प्रक्रिया है! व्याख्या करिये ?
3. आकृति प्रत्यक्षीकरण क्या है? प्रत्यक्षणात्मक संगठन के नियमों को उदाहरण सहित समझाइये!
4. प्रत्यक्षण के निर्देश-अवस्था सिद्धान्त एवं दैहिक उपागम (सिद्धान्त) की व्याख्या करिये।
5. प्रत्यक्षज्ञात्मक सीखना किसे कहते है ? समझाइयें।

इकाई-12 पैटर्न प्रत्यभिज्ञान: पैटर्न प्रत्यभिज्ञान के सिद्धान्त, आधारिक ऊपरी तथा ऊपरी निचली उपागम, प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता (Pattern recognition-Theories of Pattern recognition, Bottom up and Top-Down Approach, Perceptual Constancy)

12:0 प्रस्तावना

12:1 उद्देश्य

12:2 पैटर्न प्रत्याभिज्ञान

12:2:1 बाँटम अप उपागम

12:2:2 टाँप डाउन उपागम

12:3 प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता

12:3:1 वस्तुओं से सम्बन्धित स्थिरता

12:2:2 वस्तुओं के गुण से सम्बन्धित स्थिरता

12:4 सारांश

12:5 निबन्धात्मक प्रश्न

12:6 संदर्भ सूची

12: 0 प्रस्तावना- (Introduction)

मनुष्य सभी प्राणियों में सबसे अधिक बुद्धिमान माना जाता है। वह अपने संज्ञान एवं मानसिक प्रक्रियाओं के द्वारा पर्यावरण में व्याप्त सभी वस्तुओं एवं उद्दीपकों के अर्थ जानने की कोषिष करता है। जिनमें उसे संवेदन एवं प्रत्यक्षीकरण जैसी मानसिक प्रक्रियायें सहयोग करती है। और उसके व्यवहार का निमार्ण करती है। पर यहाँ यह तथ्य जानना भी आवष्यकीय है। कि व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में विभिन्न उद्दीपकों एवं घटनाओं का अर्थ समझने के लिए वातावरण के साथ कैसे अन्तः क्रिया करता है। तथा वो कौन सी प्रक्रियायें है। जिनसे वह सूचनायें ग्रहण है इस तथ्य को जानने के लिए ही यहाँ पैटर्न पहचान पर चर्चा की जा रही है।

12:1 उद्देश्य – (Objectives)

प्रस्तुत इकाई में पैटर्न पहचान का अर्थ एवं परिभाषा को बताया गया हैं

1. व्यक्ति द्वारा सूचनायें ग्रहण करने के ढ़ग को जानने के लिए आधारिक ऊपरी संसाधन एवं आधारिक निचली संसाधन को बताते हुए इन उपागमों से सम्बन्धित सिद्धान्तों पर चर्चा की गई है।
2. वस्तुओं एवं उद्दीपकों के गुण आकार एवं रूप में स्थिरता जानने के लिए प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता की व्याख्या की गई है।

12:2 पैर्टन प्रत्यभिज्ञानः आधारित ऊपरी तथा ऊपरी निचली उपागम (Pattern Recognition: Bottom Up and Top Down Approach)

पैर्टन प्रत्यमिज्ञान दिन प्रतिदिन की एक बहुत ही सार्थक घटना हैं जिसके द्वारा हम अपने आस-पास की घटनाओं का अर्थ समझते हैं व्यक्ति के लिए यह दशाहै कि वह सार्थक ढ़ग से अपने वातावरण के साथ अन्तः क्रिया करने के लिए विभिन्न उद्दीपक पैर्टन की पहचान करें। व्यक्ति जितनी बेहत्तर ढ़ग से उद्दीपक पैर्टन की पहचान करेगा। उसकी अन्तः क्रिया उतनी ही सार्थक होगी।

Matlin 1983- “पैर्टन प्रत्यभिज्ञान से तात्पर्य उद्दीपकों से तात्पर्य संवेदी उद्दीपकों के जटिल व्यवस्थाओं की पहचान से होता है।”

“Pattern recognition refers to the identification of a compiler management of sensory stimuli” **Matlin 1983**

इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। उदाहरण- व्यक्ति ‘संबोधन’ शब्द लिखते ही पहचान जाता है। कि क्या लिखा है। और इनमें कौन से अक्षरों का सम्मिश्रण है। या बाजार में कोई कुत्ता देखते ही पहचान जाता है। कि वह उसके पड़ोसी ष्याम का कुत्ता ‘ब्रूनो’ हैं इन सभी उद्दीपकों को सही पहचान करने पर वह अर्थ पूर्ण अन्तः क्रिया भी कर देता है। जैर्से- ब्रूनो कहने पर ब्रूनो भी उसके लिए पूँछ हिलाने लगता है।

पैर्टन प्रत्यभिज्ञान का हमारे जीवन में बहुत महत्व है। अगर हमारी संवेदनायें वातावरण में उपस्थित तमाम उद्दीपकों में से कुछ पर विशेष ध्यान देती है और सही -सही पहचान कराती है तो व्यक्ति का अपने वातावरण से सामंजस्य बना रहता है।

Bottom up and Top down Approach- बॉटम अप एवं टाप डाउन उपागम का सिद्धान्त जे. जे. गिब्सन (1904-1980) द्वारा दिया गया है। मनोवैज्ञानिकों ने इस सूचना प्रक्रिया एवं पैर्टन प्रत्यभिज्ञान की व्याख्या करने के लिए सामान्यतः इसे दो भागों में बाँटा है-

1. **आधारिक ऊपरी संसाधन (Bottom up Processing)**
2. **आधारिक निचली संसाधन (Top down Processing)**

12:2:1 बाँटम अप उपागम- बॉटम अप उपागम संरचनात्मक उपागम की तरह ही होता है। जो भी प्रदत्त उपलब्ध हों उसके टुकड़े लगाते गये जब तक वह बड़ी पिक्चर नहीं बन जाती अर्थात् परिवेष में अगर विभिन्न टुकड़ों में प्रदत्त हो तो वह उनका प्रत्यक्षीकरण एक मानसिक तत्व के रूप में किया जाता है। बॉटम अप उपागम में उद्दीपकों के महत्वपूर्ण तथ्यों या विशेषताओं से प्रक्रिया आरम्भ कर के ऊँचे स्थान पर लाया जाता है। जहाँ उसका अर्थ एवं संदर्भ की प्राप्ति होती है। अर्थात् यह क्या हैं जानने के लिए हमारे दृष्टि उद्दीपक सीधे प्रत्यक्षीकरण के द्वारा सन्दर्भित सूचना प्रदान करता है। इसे प्रक्रिया को उद्दीपक कारक (Data Factors) उद्दीपक उत्पन्न (Stimulus Driven) तथा आंकड़े उत्पन्न (Data driver) कहा जाता है। गिब्सन का यह सिद्धान्त पर्यावरण एवं उद्दीपक के आयामों के संदर्भ में है। जो किसी व्यक्ति विशेष को किसी उद्दीपक के संदर्भ में क्रिया करने की अनुमति प्रदान करता है। इस सिद्धान्त ने 'परिस्थितिकीय उपागम' को समर्थन दिया हैं बॉटम अप उपागम माडल के तहत कुछ सिद्धान्तों का वर्णन किया जाता है।

(क) **विशिष्ट विशेष सिद्धान्त (Distinctive Features Theory)-** सन्1975 में गिब्सन ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया विशिष्ट विशेष सिद्धान्त की व्याख्या करने के लिए उन्होने कहा कि "हम लोग अक्षरो की पहचान कैसे करते है। गिब्सन का मानना है कि अक्षरो की पहचान उनकी विशिष्ट विशेषताओं के आधार पर की जाती है प्रत्येक अक्षर की कुछ विशिष्ट विशेषतायें होती है जिसके आधार पर उनकी पहचान संभव है।"

जैसे- T एवं O अक्षर लें T में दो सीधी रेखा है। जबकि O में एक भी सीधी रेखा नहीं है। इस विशिष्टता के कारण ही O, T से भिन्न है।

उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट है। कि दोनों की विशिष्टता के कारण हम उन्हें पहचानते है तथा उनकी भिन्नता भी कायम रहती है। गिब्सन का यह मानना है कि अक्षरों के कुछ समूह एक दूसरे से पूर्णत अलग है| जैसे G एवं W दो ऐसे अक्षर हैं जिनकी विशिष्ट विशेषता आपस में समान नहीं है। अगर हम समानता (Similarity) की बात करें तो कुछ अक्षर ऐसे है। जिनकी विशिष्ट विशेषता आपस में काफी समान (Similar) होती है। जैसे-P एवं R ये ऐसे दो अक्षर हैं इन दोनों में अन्तर मात्र इतना है कि R में एक तिरछी रेखा होती है।

गिब्सन ने अंग्रेजी के 26 अक्षरो का एक चॅार्ट बनाया साथ ही यह भी बताया कि अक्षरों की विशिष्ट विशेषता हमेशा स्थिर होती है, चाहे उसे छापा जाय या हाथ से लिखा जाय उन्होने इन 26 अक्षरो की मुख्यतः तीन विशेषतायें बताई-

1. सीधा (Straight)

2. मुड़ा हुआ (Curved)

3. कटान (Intersection)

जब व्यक्ति किसी अक्षर को पहचान कर रहा होता है तो वह किन विशेषताओं पर निर्भर करता है- यह जानने के लिए कुछ मनोवैज्ञानिक ने इस संबध में अध्ययन किया-

गिब्सन, सापिरों, एवं योनास (Gibson, Schapiro & Yonus) -ने इस संबध में एक प्रयोग किया -"इस प्रयोग में प्रयोज्यों से यह कहा गया कि जब उन्हें अक्षरों के जोड़े दिखाई दें तो वह एक विशेष बटन को दबाकर अपनी अनुक्रिया दे तथा जब अक्षरों का जोड़ा भिन्न लगे तो दूसरा बटन दबाकर प्रतिक्रिया दें। इस प्रयोग में प्रयोगकर्ताओं ने प्रयासों में लगे समय के आधार पर समानता की माप की। अगर प्रयासों में कम समय लगा हैं या अर्न्तनिहित (Latency) कम हुआ हैं तो समझा जाता है। कि दोनों अक्षर एक दूसरे से काफी भिन्न हैं जैसे- G एवं W का जोड़ा काफी भिन्न हैं।

अगर प्रयासों में अधिक समय लगा है। तो अर्न्तनिहित (Latency) ज्यादा हुआ है। तो समझा जाता हैं कि अक्षरों का जोड़ा एक दूसरे के समान हैं जैसे- P, R

इस प्रयोग के परिणामों से जो निष्कर्ष निकले वो निम्न है।

प्रयोज्य सबसे पहले उन अक्षरो के बीच अन्तर करते हैं जिनके तत्व (Component) सीधे होते हैं जैसे- M, N, W आदि दूसरे स्तर पर उन अक्षरों के मध्य अन्तर करते है। जिनके तत्व मुड़े हुए होते हैं -जैसे- C, G, P, R।

तीसरे स्तर पर उन अक्षरों में अन्तर करते हैं जिनके अक्षर गोल जैसे C एवं G होते हैं तथा जिनमें कटान P, R होते हैं। यह सिद्धान्त दैहिक सबूतों के (Physiological Evidence) के अनुसार है अध्ययनों से इस बात की पुष्टि होती है। कि हमारे दृष्टि कार्टेक्स (Visual Cortex) में विभिन्न तरह के न्यूरोन होते हैं कुछ न्यूरोन विशेष तरह की उन्मुखत वाले रेखाओं के संदर्भ में तेजी से अनुक्रिया करते हैं शायद यही कारण है कि सीधी रेखा वाले अक्षरों तथा वक्राकार अक्षरों के प्रयासों के समय में अन्तर आया।

उपरोक्त सिद्धान्त की आलोचना करते हुए "नॉस एवं शिलमैन" (Naws & Shilman 1976) - ने कहा है कि प्रायः अक्षरों की विशिष्ट विशेषताओं के मध्य अन्तर करना सम्भव नही हो पाता है। जैसे- यदि व्यक्ति से इन दो त्रिभुज   में अन्तर करने को कहा जाय तो उसे मुश्किल होगी क्यों तीन बिन्दुओं को भी व्यक्ति एक त्रिभुज की तरह ही प्रत्यक्षीकरण करता है जबकि त्रिभुज की यह विशिष्ट विशेषता यह होती है। कि उनमें तीन सीधी रेखा व तीन कोण होते हैं।

(ख) सांचा मिलान सिद्धान्त (Template matching theory)- इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक अक्षर या उद्दीपक का अलग-अलग विशिष्ट स्वरूप स्मृति में संचित होता है। जब हम किसी उद्दीपक अथवा अक्षर को देखते है तो उसका मिलान अपनी स्मृति में संचित सांचे (Template) में से करते हैं सही मिलान होने पर हम उस उद्दीपक या अक्षर की पहचान कर लेते है। अगर अक्षर या उद्दीपक किसी विशेष सांचे से नहीं मिलता है। तो पुनः हम किसी दूसरे सांचे की तलाश करते है। यह सिद्धान्त ऊपर से देखने में बहुत ही सरल प्रतीत होता है। परन्तु इस सिद्धान्त का मुख्य दोष यह है। कि प्रत्येक अक्षर या उद्दीपक का अलग सांचा (Template) होता है इसलिए अक्षरों के आकारों एवं पहचानने के लिए मष्तिष्क में करोड़ों सांचे की आवश्यकता होगी और इसआवश्यकता की पूर्ति के लिए स्मृति तंत्र (Memory System) को विस्तृत एवं विशाल होना पड़ेगा जो कि निश्चित रूप असंभव परिकल्पना प्रतीत होती है। इसी दोष के कारण इस सिद्धान्त को मनोवैज्ञानिकों ने अस्वीकार कर दिया तथा प्रोटाटाईप सिद्धान्त के ज्यादा महत्व दिया।

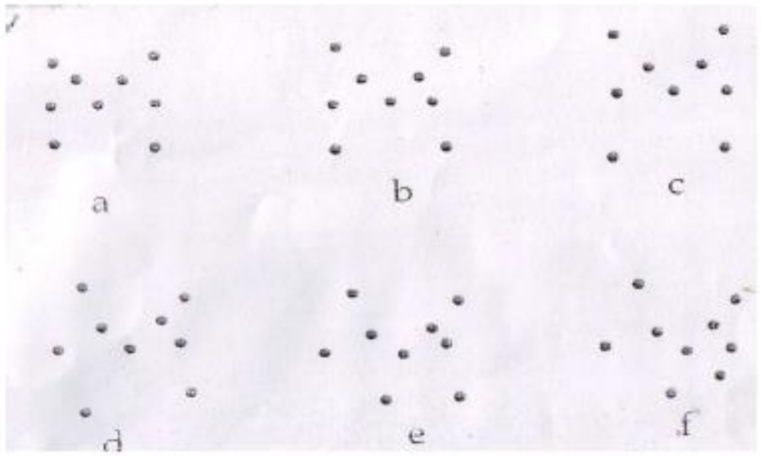

चित्र संख्या 1.0

चित्र के a से f तक विकृति को क्रमबद्ध रूप में बढ़ाते गये। प्रयोज्य को प्रोटोटाईप देखने के पश्चात पहचनने पर प्रतिक्रिया थी परिणाम स्वरूप देखा गया कि कम विकृति पर प्रयोक ने कम त्रुटिया की तथा जैसे जैसे प्रोटोटाईप को पहचानने में प्रयोज्य ने अधिक त्रुटिया की।

(ग) - प्रोटोटाईप सुमेलित सिद्धान्त (Prototype matching theory) -इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति अपनी स्मृति (Memory) में किसी वस्तु या उद्दीपक (Stimulus) का एक आदर्ष एवं अमूर्त स्वरूप संचित कर लेता है जब वह किसी वस्तु विशेष या उद्दीपक (Stimulus) का प्रत्यक्षीकरण करता हैं। तो उस वस्तु या उद्दीपक का मिलान अपनी स्मृति में संचित उद्दीपक से करता है अगर यह मिलान (Match) सही होता है तो व्यक्ति उस पैर्टन को पहचान लेता है। अगर

सही मिलान नही होता है। तो व्यक्ति उसे अपनी स्मृति से तब तक मिलाते रहता हैं जब तक उसकी सही सुमेल न मिल जाय इस सिद्धान्त को प्रोटोटाईप सिद्धान्त कहते हैं। इस सिद्धान्त ने प्रोटोटाईप की तीन विशेषतायें बताई हैं।

1. प्रोटोटाईप अमूर्त होता हैं।
2. प्रोटोटाईप आदर्शस्वरूप होते हैं
3. प्रोटोटाईप के आकार में लचीलापन होता है।

इस सिद्धान्त में वस्तु या उद्दीपक के सम्पूर्ण आकारों के महत्व पर बल दिया गया है। यह सिद्धान्त मानता है। कि उद्दीपक के स्वरूप में एक लचीलेपन का गुण होता है। जो व्यक्ति की स्मृति में संचित होता है। व्यक्ति किसी भी अक्षर के वास्तविक स्वरूप को तो पहचान ही लेता है। परन्तु अगर उसकी आकृति विकृत होती है। तो वह उसको भी पहचान लेता है। इसे प्रोटोटाईप सुमेलित सिद्धान्त कहा जाता है। जैसे-

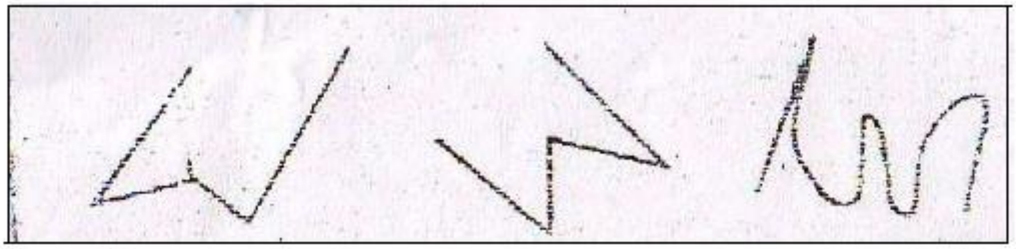

उपरोक्त चित्र में विकृत आकृति होने पर भी व्यक्ति अपनी स्मृति में संचित उद्दीपक के आकारों से मिलान कर उसकी पहचान M.S.W के रूप में कर लेता है।

इस सिद्धान्त के अनुसार स्मृति में संचित प्रोटाटाईप अमूर्त (Abstract) होते है उनमें दृढ़ता का गुण न होकर लचीलेपन का गुण होता है। इस बात की सत्यता जानने के लिए पोजनर, गोल्डस्मिथ एवं वेल्टन (Poiner, Goldsmith & Welton) ने 1967 में एक प्रयोग किया उन्होने आलखेपत्र अंग्रेजी के अक्षर M का प्रोटोटाईप बनाया तत्पश्चात मौलिक अक्षर M में ग्राफ पेपर में विकृति उत्पन्न की।

प्रोटोटाईप एवं विशिष्ट विशेषता सिद्धान्त में अन्तर –

प्रोटोटाईप सुमेलित सिद्धान्त	विशिष्ट विशेषता सिद्धान्त
प्रोटोटाईप सिद्धान्त में उद्दीपक के सम्पूर्ण आकारों के महत्व पर बल दिया गया है।	विशिष्ट विशेषता सिद्धान्त में उद्दीपक के विशिष्ट आकारों पर बल दिया गया है।

इस सिद्धान्त में स्मृति में संचित पैर्टन या स्वरूप में लचीलेपन का गुण होता है|	इस सिद्धान्त में स्मृति उद्दीपक के आकारों में विशिष्टता एवं दृढ़ता (Rigidly) का गुण होता है।

12:2:2-टॉप डाउन माडल - जैसे कि हम पहले भी बता चुके है कि पैटर्न पहचान पर सँदर्भ (Context) की भी प्रभाव पड़ता है अर्थात -पैटर्न पहचान में टॉप डाउन संसाधन माडल (Top down Processing Model) का भी महत्व है। इस माडल में उद्दीपक के की व्याख्या व्यक्ति के पूर्व ज्ञान एवं उद्दीपक के संदर्भ मे की जाती है इस संसाधन पर रूमेलहार्ट (Rumelhart 1977) ने सर्वाधिक बल डाला है और बताया है कि टॉप डाउन संसाधन की प्रकिया का स्वरूप चयनित (Selection) होता है इसे संप्रत्यात्मक रूप से व्युत्पन्न संसाधन (Conceptually drines processing) भी कहा जाता है टॉप डाउन संसाधन का समर्थन हम दो तरह के मनोवैज्ञानिक घटना में स्पष्ट रूप से मिलती है-

1. शब्द श्रेष्ठता प्रभाव (World Superiority Effect)
2. सम्पूर्ण संसाधन (Global Processing)

क. **शब्द श्रेष्ठता प्रभाव -** शब्द श्रेष्ठता प्रभाव द्वारा टॉप डाउन संसाधन की घटना को दिखलाया जाता है। जिसमें व्यक्ति उन अक्षरो की पहचान अति शीध्रता से करता है जो सार्थक शब्द का निर्माण करते पाये जाते है। इस बात की पुष्टि के लिये जान स्टोन (John Stone 1978) तथा रीचर (Reicher 1969) ने शब्द श्रेष्ठता प्रभाव को अपने अपने प्रयोगो में किया इस प्रयोग में अक्षरो के समूह को इतनी शीध्रता से दिखता जाता हैं कि प्रयोज्य ठीक से पढ भी नहीं पाते तत्पश्चात प्रयोज्यो से यह पूछा जाता है कि दिये गये अक्षरो में से कौन सा अक्षर दिखाये गये समूह के विशेष स्थान पर आया

जैसे- प्रयोज्य को rest या esrt शब्द खिलाया और पूछ गया कि शब्द के अन्त में t या e। प्रयोज्यों ने इन अक्षरो को अति शीध्र पहचाना जो सार्थक थे या जिनका उन्हे पूर्व ज्ञान था अर्थात अध्ययन के परिणाम में देखा गया कि T को Rest में उपस्थित करने की तुलना में जल्दी या आसानी से पहचान लिया जो टाप डाउन संसाधन को पुष्टि करता है क्यों प्रयोज्य को T को Rest में देखने का पूर्व ज्ञान की अनुभूति थी।

(ख). **सम्पूर्ण संसाधन (Global Processing)-** सम्पूर्ण संसाधन इस बात की ओर इंकित करता है। कि व्यक्ति प्रायः किसी उद्दीपक की विशिष्ट विशेषताओं को पहचानने से पूर्व उसके

समग्र (Overall) विशेषताओं की पहचान कर लेता हैं इस तथ्य का प्रयोगात्मक समर्थन हमें (Navon 1977) के प्रयोग में मिलता हैं।

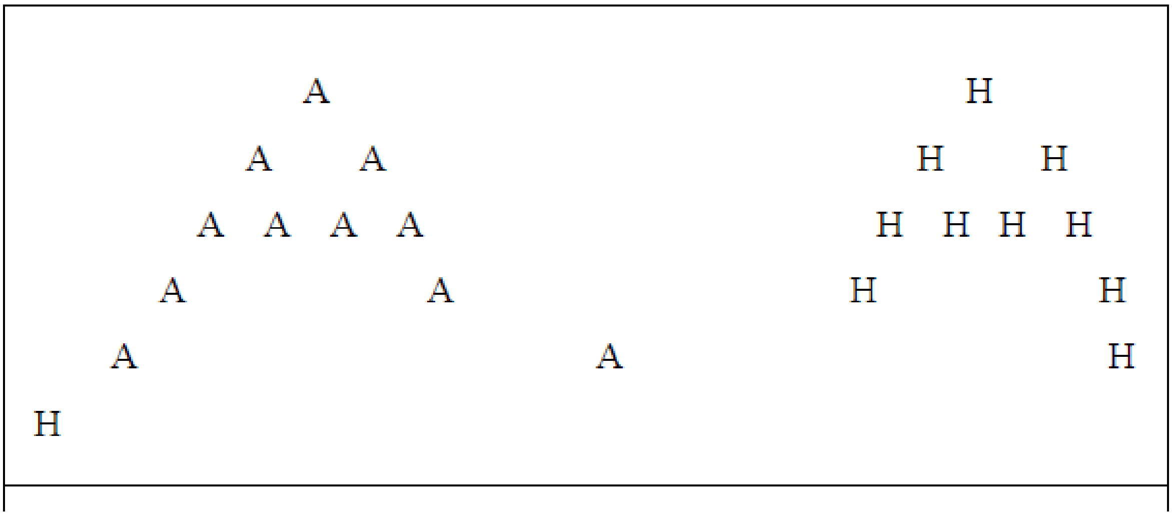

चित्र 1.1

इस प्रयोग में चित्र संख्या 1.1 दिखाये गये उद्दीपक के समान उद्दीपक को प्रयोज्यों को बहुत कम समय के लिए दिखाया गया प्रयोज्यों से कहा गया कि वो बताये कि सम्पूर्ण अक्षर A या H तत्पष्चात् प्रयोज्यों से यह भी पूछा गया कि बड़े अक्षर का निर्माण किस छोटे अक्षर से किया गया है। परिणाम स्वरूप् यह देखा गया कि समग्र पहचान (Global Processing) व्यक्ति तुलनात्मक रूप से अधिक तेजी से कर लेता है। अर्थात् वह समग्र रूप से अक्षर पर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। उपरोक्त उदाहरण में समग्र अक्षर A का निर्माण A तथा H दोनों से किया जाता है। अर्थात् स्पश्ट है। कि किसी उद्दीपक की पहचान व्यक्ति पहले समग्र रूप से करता है।

बाटम अप एवं टॉप डाउन संसाधन की अन्तःक्रिया (Interaction of Bottom up & Top down Processing) - कई मनोवैज्ञानिक जिसमें लिड़से तथा नौरमैन (Lindsay & Norman 1972) तथा रूमलेहार्ट 1922 का नाम प्रमुख हैं ने कहा हैं कि पैटर्न प्रत्यभिज्ञान बाटम अप एवं टॉप डाउन संसाधन की अन्तः क्रिया पर आधारित है। अर्थात् इन मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि किसी उद्दीपक की पहचान में कई तरह की प्रक्रियायें सम्मिलित होती है, कई प्रक्रियायें ऐसी होती हैं जिसमें उद्दीपक की विशिष्ट विशेषताओं में उद्दीपक की व्याख्या प्रयोज्य की प्रत्याक्षा (Expectation) तथा संदर्भ (Context) में महत्वपूर्ण होती हैं अतः स्पष्टत: कहा जा सकता है कि पैटर्न पहचान में आधारिक ऊपरी संसाधन (Bottom up processing) तथा टॉप डाउन संसाधन दोनों ही सम्मिलित होते है।

उपरोक्त तथ्यों को देखते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हम लोग सूचनाओं को दो रूपों में संसाधित करते हैं-

1) जब हम उद्दीपक को उसकी विशेषताओं के रूप में विश्लेषित करके अर्थ को समझने की कोशिश करते हैं तो आधारिक ऊपरी संसाधन (Bottom up processing) कहा जाता हैं
2) जब हम लोग किसी उद्दीपक के अर्थ प्रयोज्य की प्रत्याक्ष (Expectation) के रूप में समझने की कोशिश करते हैं जिसमें उद्दीपक का संदर्भ (Context) महत्वपूर्ण होता हैं तो उसे टाप डाउन संसाधन कहा जाता है।

अतः पैटर्न पहचान में आधारित ऊपरी संसाधन तथा टाप डाउन संसाधन दोनों ही सम्मिलित होते हैं।

12.3 प्रत्याक्ष्यानात्मक स्थिरता

प्रत्यक्षीकरण

प्रत्यक्षीकरण (Perception) का एक विशेष गुण यह है कि इसके द्वारा हमें वस्तुओं (Objects) का ज्ञान उसके भौतिक परिस्थितियों (Physical Circumstances) में परिवर्तन के बावजूद भी समान रूप से होता है। अत: हम कह सकते है, उद्दीपक की भौतिक परिस्थितियों में यद्यपि परिवर्तन हो जाता है उसके प्रत्यक्षीकरण में कोई परिर्वतन नहीं होता। उसे स्थिरता (constancy) कहा जाता है। सर्टेन, नार्थ, स्ट्रेन्ज तथा चेपमैन (Starn, North, Strange and Chapman 1973) के अनुसार "भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में उद्वीपकों को करीब-करीब सतरूप ढंग से प्रत्यक्षण करने की प्रवृति (tendency) को प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता की संज्ञा दी जाती है।" उदाहरणत: - कोयले के एक टुकडे को कमरे में रखने पर व्यक्ति उसे कोयले के रूप में ही प्रत्यक्षण करेगा हालाँकि सूर्य की रोशनी में कोयले का चमकीलापन स्तर कमरे के अपेक्षा अधिक होता है। अगर किसी व्यक्ति को हम चार फीट की दूरी से देखे या 10 फीट की दूरी से देखे उसे वही व्यक्ति के रूप में हम देखते पर जो अक्षिपटलीय प्रतिबिम्ब (Retinal image) बनता है 10 फीट की दूरी से देखने पर बने अक्षिपटलीय प्रतिबिम्ब की अपेक्षा बड़ा होता है। उद्वीपक परिस्थितियों (Stimulus Situations) में कुछ परिवर्तन आ जाने के बाद भी हम वस्तु या उद्वीपक का प्रत्यक्षण पहले की ही तरह करते हैं।

मनोवैज्ञानिक ने प्रत्याक्ष्यानात्मक स्थिरता के मुख्य दो ज्ञात कारणों का उल्लेख किया जाता है हमें प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता का अनुभव इसलिए होता हैं चूँकि प्रत्यक्षण किया जाने वाला उद्वीपक की अपनी पृष्ठभूमि के साथ एक निश्चित तथा अटल संबंघ होता है। इस संबंध के कारण परिस्थिति में परिवर्तन होने के बावजूद भी व्यक्ति किसी उद्वीपक को पहले के समान ही देखता है। उदाहरण- अगर एक नीले कलम को लाल कागज के टुकड़ा पर रखकर दिखलाया जाय और फिर हरा

कागज के टुकड़ा पर उसी कलम को रखकर दिखलाया जाय तो हम दोनों परिस्थितियों में नीला कलम को नीले ही देखते हैं क्योंकि कलम तथा इसका अपना पृष्ठभूमि के बीच एक अटल संबंध है।

दूसरा सामान्य कारण यह है कि हमलोगों में किसी उद्दीपक के मुख्य गुणों या विशेषता (Important Characteristics) को चुन लेने की एक तीव्र प्रवृत्ति है ताकि वही उद्दीपक यदि हमारे सामने कुछ विकृत्त रूप में भी आये तो हम उसका प्रत्यक्षण पहले की तरह कर सके।

प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता को मूलतः दो भागों में विभाजित कर अध्ययन किया गया है जो निम्नलिखित है-

1. वस्तुओं से संबंधित स्थिरता - यह वह स्थिरता है जो वस्तु के आकार तथा रूप से संबंधित होते है। अतः आकार स्थिरता और रूप स्थिरता को इसी श्रेणी में रखा गया है।
2. वस्तुओं के गुण से संबंधित स्थिरता - यह वह स्थिरता है जो वस्तु के विशेष गुण यानी रंग तथा चमक आदि से संबंधित होती है रंग स्थिरता तथा चमक स्थिरता को इसी श्रेणी में रखा गया है।

12.3.1 वस्तुओं से संबंधित स्थिरता- इस श्रेणी में उन प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता को रखा जाता हैं। जो मूलतः वस्तु के आकार तथा रूप से संबधित होते हैं। दोनों तरह की स्थिरता का वर्णन निम्नांकित है-

1. आकार स्थिरता- जब हम किसी वस्तु को देखते है तो उस वस्तु का प्रतिबिम्ब (image) हमारे अक्षिपटल पर बनता है। इस प्रतिबिम्ब को अक्षिपटलीय प्रतिबिम्ब कहा जाता है जिसका आकार व्यक्ति तथा देखे जानेवाले वस्तु की दूरी पर निर्भर करता है यदि यह अधिक है तो अक्षिपटलीय प्रतिबिम्ब का आकार बड़ा होता है। अक्षिपटलीय प्रतिबिम्ब के आकार मे भी परिवर्तन होने से हमें वस्तु के आकार में भी परिवर्तन उसी ढंग से होना चाहिए था परन्तु ऐसा नही होता। उदाहरण- हम अपने मित्र को 2 फीट दूरी में देखें या 20 फीट दूरी में, उसी ऊँचाई चौड़ाई आदि को हम समान रूप से देखते है जबकि इन दोनों दूरियों के कारण अक्षिपटलीय प्रतिबिम्ब के अकार में काफी परिवर्तन हो जाता है। आकार प्रत्यक्षज्ञण पर कई प्रयोगात्मक अध्ययन हुए है इस सन्दर्भ में लियोविज (Leibowiz), 1971 का प्रयोग काफी प्रभावशाली है- लियोविज ने प्रयोज्यों को एक बड़ा गोल डिस्क 10 फीट की दूरी में दिखलाया उसके बाद दूरी को धीरे-धीरे बढ़ाकर उन्हें दिखलाया गया दूरी बढ़ाकर दिखाने से प्रयोज्य के ऑख के रेटिना पर बनने वाली प्रतिमा का आकार छोटा होता गया परन्तु प्रयोज्यों ने डिस्क का प्रत्यक्षीकरण उसके वास्तविक आकार के समान किया इसी प्रकार के प्रत्यक्षीकरण को आकार स्थिरता कहा जाता है। आकार स्थिरता के संदर्भ में कुछ प्रयोगात्मक अध्ययनों से पता चला हैं। कि आकार स्थिरता में सीखना तथा गत अनुभूति की बड़ी भूमिका होती है। हेल्महोज(Helmholtz, 1909)- ने बतलाया कि आकार की

दूरी संबंध को प्राणी अपने अनुभव से सीखता हे उसके इस कथन पर कई प्रयोगात्मक अध्ययन हुए है।

हेलर (Helar) 1968- ने हेल्महोज के कथन पर प्रयोगात्मक अध्ययन किया उन्होनें चूहों को जन्म से एक माह तक अंधेरे में रख कर पाला पोसा तत्पश्चात उन्हें 1.5 फीट की दूरी से एक इंच परिधी के वृत्त को दिखलाया पर्याप्त गहराई व दूरी के पष्चात चूहे दोनों तरह के वृत्तों के प्रति समुचित अनुक्रिया नहीं कर पाये तत्पश्चात चूहों को एक सप्ताह पर्याप्त रोशनी में पाला गया तो चूहों में आकार स्थिरता की मात्रा में वृद्धि पाई गई इस प्रकार कहा जा सकता है कि आकार स्थिरता में गत् अनुभव की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

आकार स्थिरता का सैद्धान्तिक प्रक्रम(Theoretical mechanism of size constancy)- मनोवैज्ञानिकों ने आकार स्थिरता की व्याख्या तीन ढंग से की है- पहली व्याख्या- आकार स्थिरता का कारण यह है कि व्यक्ति को देखे जाने वाले वस्तु का वास्तविक आकार उसकी दूरी आदि पहले से ज्ञात होती है। ऐसी स्थिति में वस्तु चाहे 2 फीट की दूरी में हो या 10 फीट की दूरी में वह उसका प्रत्यक्षीकण ठीक पहले के समान होता है। गिब्सन द्वारा दी गई व्याख्या- दूसरी व्याख्या गिब्सन (Gibson 1950) द्वारा दी गई उनका कहना है कि आकार स्थिरता का कारण वस्तु का गठन तथा उसकी पृश्ठभूमि के गठन में एक साथ होने वाले परिवर्तन से है। जैसे- जब वस्तु व्यक्ति की दूरी पर होती हैं्। तो उस वस्तु तथा उसकी पृष्ठभूमि में एक साथ ही परिवर्तन होता है फलतः इन दोनों के मध्य का अनुपात वही रह जाता है। राँक तथा इविनेहोल्ज (Rock and Ebenholtz 1959)- द्वारा दी गयी इस व्याख्या के अनुसार व्यक्ति किसी वस्तु के आकार के संबंध को अन्य इर्द-गिर्द आकार की वस्तुओं के आकार के संबंध में इस ढ़ग से देखता है कि उनका आपसी अनुपात स्थिर रहता है जैसे- अगर एक डेस्क पर कलम रखा हुआ देख रहे है तो आप डेस्क से थोड़ी दूर को हट जाये ऐसी परिस्थिति मे कलम का अक्षिपटलीय प्रतिमा छोटी हो जायेगी साथ ही डेस्क की भी अक्षिपटलीय प्रतिमा छोटी हो जाती है फलतः दोनो का आकार का अनुपात लगभग एक सामान ही रह जाता है शायद यही कारण है कि डेस्क में रखे कलम को चाहे एक मीटर की दूरी से देखें या 10 मीटर की दूरी से, वह एक ही आकार का दिखेगा।

रूप स्थिरता (Shape constancy) -रूप स्थिरता के द्वारा हम यह जान पाते है कि वस्तु, वस्तु के रूप के प्रत्यक्षीकरण में भी स्थिरता होती हे जैसे- भिन्न-भिन्न कोणों से यदि एक ही वस्मु को हम देखते है तो उससे उत्पन्न अक्षिपटलीय प्रतिबिम्ब में परिवर्तन आ जाता है इसके उपरान्त भी व्यक्ति उस वस्तु को ठीक से पहले के रूप में ही देखता है। इसे ही रूप स्थिरता कहा जाता है। “परिस्थति में भिन्ता के बावजूद भी किसी वस्तु की प्रत्यक्षण किया गया रूप में सापेक्ष स्थिरता होती है जिसे रूप स्थिरता कहा जाता है।” इप्सटेन एवं पार्क-(1964)

मैटलिन;(1983) रूप स्थिरता का अर्थ होता है कि वस्तुओं के उन्मुखता में परिवर्तन के बावजूद उसके रूप में स्थायित्व बना रहता है।

रूप स्थिरता का अर्थ वस्तुओं के विभिन्न कोणों से देखने पर अक्षिपटलीय परिवर्तन के वस्तुओं के रूप में स्थायित्व दिखाई देना है। इस संदर्भ में गिब्सन (ळपइेवद 1950) ने एक प्रयोग किया- उन्होंने अपने प्रयोज्यों को निश्चित दूरी पर आयताकार दरवाजा (त्मबजंदहनसंत कववत) को विभिन्न डिग्री में तिरछा करके दिखाया इस तिरछेपन के कारण उनका अक्षिपटलीय प्रतिमा प्रायः एक चर्तुभुज का होता था परन्तु फिर भी प्रयोज्यों ने आयताकार दरवाजे के रूप में उसका प्रत्यक्षीकरण किया।

रूप स्थिरता का सैद्धान्तिक प्रक्रम (Theoretical mechanism of shape constancy)

1. गिब्सन (1950) द्वारा रूप स्थिरता की व्याख्या- इनका मत है कि वस्तुओं के गठन (Texture) के आधार पर व्यक्ति रूप स्थिरता का प्रत्यक्षीकरण करता है जब किसी स्पष्ट गठन वाले वस्तु को तिरछी स्थिति में रखा हुआ व्यक्ति देखता है तो गठन इकाईयां जो व्यक्ति या प्रत्यक्षणकर्ता से कुछ दूर हो जाती है उस स्पष्ट गठन पश्चात को वह एक साथ दबाब अनुभव करता है जिसके परिणामस्वरूप व उस वस्तु को उसके वास्तवकि रूप में देखता है।

2. वस्तुओं के गुण से संबंधित स्थिरता- जब हम किसी उद्दीपक को देखते है तो उसके दो गुणों का प्रभाव हम पर विशेष रूप से पड़ता है-

1) उद्दीपक की चमक

2) उद्दीपक का रंग

ऐसा देखा गया है कि वस्तु के इन गुणों के प्रत्यक्षण में भौतिक अवस्थाओं में परिवर्तन हो जाने के बाद भी काफी स्थिरता की चमक स्थिरता व दूसरे प्रकार की स्थिरता को रंग स्थिरता कहा जाता है।

1. चमक स्थिरताः- जिन वस्तुओ को हम देखते है, उनकी चमक का स्तर यानि उनका उजलापन या भुरापन या कालापन के स्तर में एक तरह के स्थिरता का प्रत्यक्षण हम उन परिस्थितियों में भी करते हैं जब उन वस्तुओं द्वारा परावर्तित रोशनी की मात्रा भिन्न भिन्न हैं इसे चमक स्थिरता की संज्ञा देते है। जैसे- कोयले को यदि सूर्य की रोशनी में रखा जाय या दिन में छाया में हम उसे कोयले के रूप में देखते हैं जबकि सूर्य की रोशनी में उसकी चमक का स्तर ज्यादा होता हैं अर्थात सूर्य में कोयले को रखने पर परावर्तित रोशनी की मात्रा छाया में रहने पर परावर्तित रोशनी की मात्रा से कही अधिक होती है। उपरोक्त उदाहरण से यह स्पष्ट है कि अक्षिपटलीय प्रतिमा की चमक दो बातो पर निर्भर करती है

a) किसी स्न्रोत से उद्दीपक या वस्तु पर कितनी मात्रा में रोशनी पड़ है इसे प्रदीपक (Illumance) कहा जाता है तथा इसे अंग्रेजी के I अक्षर से सांकोतिक किया जाता हैं।

b) उद्दीपक की सतह कितनी मात्रा में रोशनी को परावर्तित करती है अगर उद्दीपक की सतह उजली है तो वह अपने ऊपर पड़ने वाली रोशनी का करीब 80-90 परावर्तित कर देगी, परन्तु यदि उसकी सतह काली है तो उस पर पडने वाली रोशनी को वह अपने में सोख लेगी और वह मात्रा 4-5 रोशनी को ही परावर्तित कर पायेगी। किसी उद्दीपक के सतह से परावर्तित रोशनी की मात्रा को परावर्तकता (Reflectonce) कहा जाता है। इसे अंग्रेजी के त् अक्षर से संकेत किया जाता है। किसी वस्तु या उद्देष्य द्वारा परावर्तित की गयी रोशनी की सतत मात्रा (Constant amount) को अलबेडा (Albeda) कहा जाता है। अब किसी वस्तु की अक्षिपटलीय प्रतिमा की तीव्रता जिसे संदीप्ति या प्रकाशक (Leuminance) कहा जाता है जिसे अंग्रेजी के (L) अक्षर से दर्शाया जाता है को निम्नांकित सूत्र से ज्ञात किया जा सकता है-

L=I X R

L= Leuminance

I= Illuminance

R= Reflectance

दीप्ति स्थिरता का सैदान्तिक प्रक्रम (Theoretical mechanism of shape constancy)

दीप्ति स्थिरता की व्याख्या करने के लिए दो तरह के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है।

1. हेल्महोम सिद्धान्त (Helmholtz theory)
2. विरोध सिद्धान्त (Contrast theory)

हेल्महोज सिद्धान्त- ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया ये एक जर्मन वैज्ञानिक थे, इन्होने इस सिद्धान्त को अचेतन अनुमान का सिद्धान्त (Theory of unconscious inference) कहा-इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्यक्षीकरण पर गत अनुभव का काफी प्रभाव पड़ता है जब व्यक्ति उद्दीपक का प्रत्यक्षण करता है। तो वह अपने गत अनुभव के आधार पर यह अनुभव लगा लेता है। कि उसका निकटस्थ उत्तेजन आधार ज्ञानेन्द्रियों पर बनने वाली तस्वीर किस तरह की होगी। दीप्ति स्थिरता की स्थिति में व्यक्ति तीन तरह के अचेतन अनुमान लगाता है-

1. रोशनी के स्तर पर परिवर्तन होने पर भी किसी वस्तु का परावर्तकता लगभग स्थिर रहता है।
2. किसी निश्चित समय में किसी वस्तु या उद्दीपक पर पड़ने वाली मात्रा का व्यक्ति निर्धारण कर लेता है।

3. किसी वस्तु या उद्दीपक द्वारा कितनी मात्रा में रोशनी परावर्तित होगी उसका निर्णय करने के लिए उस वस्तु या उद्दीपक पर स्त्रोत से पड़ने वाली रोशनी की मात्रा को ध्यान में रखा जाता है।

हेमहोल्ज का कहना हैं। यदि 2 का मूल्य I तथा R का गुणनफल के बराबर होता है तो प्रत्यक्षीकरणकर्त्ता आसानी से R का मूल्य मन ही मन सूत्र में परिवर्तित करके अर्थात् R= L/I ज्ञात कर लेता है। इसलिए धीमी रोशनी में रखे जाने पर भी उजले कागज का टुकड़ा उजला ही दिखता है। तीव्र रोशनी में काले कागज का टुकड़ा काला ही दिखता है। हेमहोल्ज का सिद्धान्त एक कलासिक सिद्धान्त है। इसके उपरान्त भी इसकी आलोचना कुछ बिन्दुओं पर हुई है।

जब व्यक्ति किसी उद्दीपक को देखता है। उसके आखँ के अक्षिपरल पर सिर्फ उतनी ही रोशनी पड़ती है। जितनी की उस उद्दीपक की सतह द्वारा परावर्तित होती है। उस वस्तु या उद्दीपक पर पड़ने वाले मात्रा को आखँ प्रत्यक्ष रूप से अभिलेख (Record) नहीं कर पाता। ऐसी स्थिति में यह सम्भव नहीं है।कि प्रत्यक्षकर्त्ता उद्दीपक के प्रद्दीपन (Illuminance) का सही सही अनुमान लगा जायेगा और दीप्ति स्थिरता का सही अंदाज कर पायेगा।

(II) हेमहोल्ज का सिद्धान्त यह दावा करता है कि दीप्ति स्थिरता में अंषतः रोशनी के स्तरों में परिर्वतन होने के बावजूद वस्तु परावर्तकता में स्थिरता बनी रहती है- का ज्ञान पूर्व अनुभूति पर निर्भर करता है- सिद्वान्त की बात अगर सही है तो बच्चो में दीप्ति स्थिरता वयस्क की तुलना में कम होनी चाहिए क्यों कि अनुभवों में बच्चे वयस्को से कम होते हैं-इस सिद्वान्त के परीक्षण के लिए हाचवर्ग (1971) ने बच्चो पर अध्ययन किया और पाया कि बच्चो द्वारा दिखलायी गई दीप्ति स्थिरता की मात्रा वयस्कों द्वारा दिखलाई गई दीप्ति स्थिरता के समान थी इस अध्ययनो से स्पश्ट है कि हेमहोल्ज सिद्वान्त का दावा गलत है।

3. विरोध सिद्वान्त - विरोध सिद्वान्त के अनुसार किसी वस्तु या उद्वीपक की चमक इस बात पर निर्भर करती है कि वह अपने आस पास की वस्तुओ को तुलना में अधिक या कम चमकीला है। यदि वस्तु अधिक चमकीली नजर आती है तो इसका मतलब यह है कि उसके आस पास की वस्तुए कम चमकीली है दूसरी ओर यदि वस्तु या उद्वीपक कम चमकीला नजर आता है, तो इसका मतलब हैं कि उसके इर्द-गिर्द की चीजें ज्यादा चमकीली हैं। विरोध सिद्वान्त के सत्यापन के लिए वलैक (1948) ने एक प्रयोग किया इस प्रयोग में पूर्ण अंधेरे कमरे में परदे पर रोशनी का एक गोलाकार वृत्त प्रयोग को दिखलाया यह वृत्त एक अन्य रोशनी के बडे वृत्त से धिरा हुआ है। बड़े वृत्त की रोशनी को तीव्र या कम किया जा सकता था परिणाम में देखा गया कि जब बड़े वृत्त के प्रकाष स्तर को तीव्र कर दिखाया जाता था। तो छोटा वृत्त धूमिल नजर आता तथा जब बड़े के संदीप्त स्तर को धूमिल कर दिखाया तो छोटा वृत्त अधिक चमकदार नजर आता।

यद्यिप दीप्ति स्थिरता का विरोध सिद्धान्त अधिक लोकप्रिय है फिर भी गिलग्रिस्ट (1977) ने कहा है कि यह सिद्धान्त अधिक सरलता का आभास देता है। इसलिए इसे सिद्धान्त को एक वैज्ञानिक सिद्धान्त नहीं माना जा सकता।

A. रंग स्थिरता - एक ज्ञात रंग की वस्तु को यदि हम भिन्न-भिन्न रंगो के साथ रखकर देखें तो वस्तु का रंग वही दिखता है। जो पहले या उदाहरण- यदि पीले आम को हम काले कागज के टुकड़े अथवा नीले कागज के टुकड़े में रख कर देखे तो वह पीला ही नजर आयेगा। जबकि दोनो पृष्ठभूमि अलग है। उसे हम सूर्य की रोशनी में देखे या छाया में तब भी वह पीला नजर आयेगा। जबकि सूर्य की रोशनी में रहने पर आम के कणों में परावर्तन क्षमता अधिक तीव्र होगी।

चमक स्थिरता एवं रंग स्थिरता में प्रधान समानता यह है। कि इन दोनों तरह की प्रत्यक्ष ज्ञानात्मक स्थिरता का सम्बन्ध दृष्टि उद्दीपक के सतह के स्वरूप से होता है। जबकि दोनों में असमानता भी है। चमक स्थिरता का संबध वस्तु के रंगहीन पहलू यानि की वस्तु के उजलापन, कालापन आदि से है। जबकि रंग स्थिरता का संबध वस्तु के रंगीन पहलू यानि लाल हरा पीला आदि से है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्यक्ष ज्ञानात्मक स्थिरता को मुख्यतः चार भागों में आकार स्थिरता, रूप स्थिरता, चमक स्थिरता तथा रंग स्थिरता में बाँटा गया है। इसके अतिरिक्त दो अन्य भी प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता है जिसका संबध वस्तु की स्थिति एवं दिशा से है। इसे स्थिति स्थिरता तथा दिशा स्थिरता कहा जाता है। मनोवैज्ञानिकों का ध्यान इन दोनों प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता की तरफ कम गया है। क्योंकि दृष्टि क्षेत्र में इनका महत्व तुलनात्मक रूप से कम है।

प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि क्या इस तरह की स्थिरता जन्मजात होती है। अथवा अर्जित। इस पर कई प्रयोगात्मक अध्ययन हुए है। सन् 1965 तक इसका सही-सही उत्तर नहीं मिल पाया। परन्तु सन् 1966 में बॉअर ने अध्ययन किया। जिसमें 6 से 8 सप्ताह के बच्चों में आकार स्थिरता तथा रूप स्थिरता का अध्ययन किया। परिणाम स्वरूप यह देखा गया कि इस उम्र के बच्चों में आकार स्थिरता व रूप स्थिरता होती है। अतः प्रयोगात्मक अध्ययनों के आधार पर हम इस निश्कर्श पर पहुँचते हैं। कि प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता जन्मजात होती है। न कि अर्जित।

12:4 सारांश (Summery)

व्यक्ति का अपने पर्यावरण में व्याप्त विभिन्न उद्दीपको एवं घटनाओ के साथ सार्थक ढ़ग से अन्तक्रिया करने के लिए दशाहै कि वह वातावरण में उपस्थित विभिन्न उद्दीपको के स्वरूप की सही पहचान करते हुए उद्दीपको के प्रति अर्थपूर्ण प्रतिक्रिया कर सके इसे पैटर्न पहचान के अन्तर्गत रखा जाता है पैटर्न प्रत्याभिज्ञान की व्याख्या मुख्यतरू दो प्रक्रियाओं द्वारा की जाती है।

1. आधारिक ऊपरी संसाधान- आधारिक ऊपरी संसाधान में उद्दीपक के महत्वपूर्ण तथ्यों एवं विशेषताओं से प्रक्रिया प्रारम्भ कर ऊँचे स्तर पर लाया जाता है जहाँ उसका एक अर्थ एवं संदर्भ प्राप्त होता है इस माडल के अन्तर्गत तीन सिद्वान्तो की व्याख्या की गई है

(क) विशिष्ट विशेषता सिद्वान्त

(ख) सांचा मिलान सिद्वान्त

(ग) प्रोटोटाईप सुमेलित सिद्वान्त

2. आाधरिक निचली संसाधन- इस संसाधन में उद्दीपक की व्याख्या व्यक्ति के पूर्व ज्ञान एवं उद्दीपक के सन्दर्भ में की जाती है टाँप डाउन माडल में मुख्यत दो मनोवैज्ञानिक घटनाओं का दर्जन किया जाता है

(क) शब्द श्रेष्ठता प्रभाव (ख) समग्र संसाधन यहाँ यह कहना समीचान होगा कि किसर उद्दीपक की पैटर्न पहचान के दानो माडल (बाटम अप एवं टाँप डाउन संसाधन) कि प्रक्रियायें सम्मिलित होती हैं।

अध्याय के अन्त में प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता का वर्णन करते हुए बताया गया है कि किसी वस्तुओं या उद्दीपकों की भौतिक परिस्थितियों कें परिवर्तन होने के उपरान्त भी अगर प्रत्यक्षीकरण में कोई परिवर्तन न हो तो उसे प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता कहा जाता है इस सदर्भ में आकार स्थिरता, रूप स्थिरता, रंग स्थिरता एवं चमक स्थिरता का वर्णन किया गया है

12:5 निबंधात्मक प्रश्न (Essay type questions)

1. पैटर्न प्रत्यिमशान से आप क्या समझते है स्पष्ट करते हुए आधारिक ऊपरी संसाधन का वर्णन कीजिये?

2. आधारिक ऊपरी संसाधनो के सिद्वान्तों के व्याख्या कीजिये?

3. आधारिक निचली संसाधन पर चर्चा करते हुए शब्द श्रेष्ट प्रभाव व समग्र संसाधन के बारे में बताईये।

4. प्रत्यक्षीकरण की व्याख्या करते हुए प्रत्यक्षज्ञानात्मक स्थिरता का उल्लेख कीजिये?

5. टिप्पणी लिखिये?

(क) आकार स्थिरता।

(ख) रंग स्थिरता।

(ग) बाटम अप एवं टाउन संसाधन

12:6 संदर्भ सूची(Reference Books)-

1. डा0 ए0 के0 सिंह-संज्ञानात्मक मनोविज्ञान मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली।

2. en. Wikipedia/org- Pattern recognition

3. voice. Yahoo.com- what is perceptual constancy.

4. www.alleydog.com- cognitive psyehologee class notes for pattern recognition

5. En.wiipedia.arg/wiki- Perceptual constancy.

6. John w. san trock- Life span development TATA mcgrow- Hill edition.

इकाई- 13 सकारात्मक मनोविज्ञान; अर्थ, परिभाषाएँ एवं लक्ष्य (Positive Psychology; Meaning, Definitions and Goals)

इकाई की संरचना

13.0 प्रस्तावना

13.1 लक्ष्य एवं उद्देश्य

13.2 सकारात्मक मनोविज्ञान क्या है

13.3 सकारात्मक मनोविज्ञान के क्षेत्र

13.4 आधुनिक सकारात्मक मनोविज्ञान की उत्पत्ति

13.5 सकारात्मक मनोविज्ञान का इतिहास

13.5.1 ग्रीक

13.5.2 उपयोगितावादी

13.5.3 विलियम जेम्स

13.5.4 मानवतावादी मनोविज्ञान

13.6 आज का सकारात्मक मनोविज्ञान

13.7 सकारात्मक मनोविज्ञान का स्थान

13.8 सारांश

13.9 मूल्यांकन प्रश्न

13.10 संदर्भ ग्रन्थ

13.0 प्रस्तावना

वर्तमान समय में दुनिया या समाज ग्लोबल वार्मिंग, प्राकृतिक आपदाओं , आर्थिक मंदी, आतंकवाद, अभूतपूर्व बेधरता, युद्ध की निरन्तरतायें आदि अति कठिन चुनौतियों से जूझ रहा है।

इन सभी उदासी और आतंक के होते हुये भी दुनियां में क्या कोई ऐसा विज्ञान है जो खुशी के परीक्षण (Testing happiness) भलाई, व्यक्तिगत विकास और अच्छे जीवन जैसे एजेण्डों को इन आधुनिक दिनों में अध्ययन करता हो?

13.1 लक्ष्य एवं उद्देष्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- सकारात्मक मनोविज्ञान का अर्थ जान पायेंगे।
- सकारात्मक मनोविज्ञान आज कहां स्थित है बता पायेंगे।
- सकारात्मक मनोविज्ञान में सकारात्मक संवेगों की क्या भूमिका है समझ सकेंगे।
- सकारात्मक संवेग का व्यापक- और- निर्माण सिद्धान्त क्या है बता सकेंगे।

13.2 सकारात्मक मनोविज्ञान क्या है-

सकारात्मक मनोविज्ञान के विज्ञान का उद्देश्य व्यक्तिगत व सामुदायिक उन्नति के कारकों को समझना परीक्षण करना, विकसित करना, व बढ़ाना है। शेल्डन एट. एल 2000 सकारात्मक मनोविज्ञान सकारात्मक समूहों व संस्थानों की भलाई, खशी, प्रवाह, व्यक्तिगत मजबूती, सृजनात्मकता (रचनात्मकता), ज्ञान और रचनात्मक कल्पना और जैसी विशेषताओं पर केन्द्रित है। और सिर्फ कैसे व्यक्तिगत खुशी और आत्मकेन्द्रिता व्यक्तिगतता को बनाये रखने पर ही केन्द्रित नहीं है अपितु सामुहिक खुशी और उन्नति को बनाये रखने पर भी जोर देता है।

सकारात्मक मनोविज्ञान का ज्ञान कैसे व्यक्तियों और समूहों को कारगर बनायेगा और एक की उन्नति व खुशी दूसरे पर कैसे सकारात्मक प्रभाव डालेगी जिससे कि सिर्फ जीत और जीत जैसे परिस्थितियां पैदा होंगी।

सकारात्मक व्यक्तिपरक अनुभव, सकारात्मक व्यक्तिगत लक्षण और सकारात्मक संस्थाओं का विज्ञान जीवन में गुणवत्ता लाता है, विकृत्तियों को रोकता है जो कि जीवन के बंजर व अर्थहीन होने से उत्पन्न हो गई है, को सुधारने का वादा करता है। विकृति पर विशेष ध्यान देना हमारे अनुशासन पर इतना हावी हो गया है कि इसके परिणामों ने जीवन रूपी माडल में सकारात्मक विशेषताओं की कमी कर दी है जो कि जीवन को जीने लायक बनाते हैं। आशा, ज्ञान, रचनात्मकता, भविष्य के प्रति उत्तरदायित्व, साहस, आध्यात्मिकता, जिम्मेदारियां और दृढ़ता को नजर अंदाज किया गया है, या फिर प्रमाणिक नकारात्मक आवेगों के परिवर्तित रूप में व्याख्या की गई हैं। अमेरिकन साकोलिजिस्ट मिलेनियम इस्यू के 15 लेखों में इस विषय या मुद्दों पर चर्चा की गई है जैसे कि कैसे खुशी, स्वयात्तता और आत्मनियमन को बढ़ाया या सक्षम बनाया जाता है। कैसे आशावादिता और आशा स्वास्थ्य को प्रभावित करती है, कैसे ज्ञान का संगठन होता है और कैसे प्रतिभा और रचनात्मकता अस्तित्व में आती है।

सकारात्मक मनोविज्ञान के विज्ञान को पढ़ने के बाद हमारे ज्ञान में बढ़ोत्तरी होगी और यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अगले दशक में यह विज्ञान एक पेशे के रूप में व्यक्तियों , समुदायों और समाजों को उन्नत करने में सहायक कारकों का निर्माण करेगा।

सकारात्मक मनोविज्ञान सिर्फ सकारात्मक सोच और सकारात्मक भावनाओं पर ही ध्यान केन्द्रित नहीं करती है अपितु वास्तव में इसका ज्यादा से ज्यादा ध्यान सकारात्मक मनोविज्ञान के क्षेत्र का व्यक्तियों और समुदायों को दुर्बल न बनाकर समृद्ध बनाने से है समृद्धि का अर्थ है ’’सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य की स्थिति‘ कामयाबी, समृद्धि और अच्छी स्थिति को बनाने का सकारात्मक प्रयास उसके सामाजिक व निजी क्षेत्रों में करता है जिससे कि मानसिक बीमारियों से मुक्ति भावनात्मक जीवन शक्ति और उसके कार्यों से पूर्ण रहा जो सके। (Michalec et.al 2009) आंकड़े बताते हैं कि 18 प्रतिशत वयस्क समृद्धि के मानदंडों को पूरा करते हैं, 65 प्रतिशत मामूली

रूप से मानसिक रूप से स्वस्थ व 17 प्रतिशत बीमार है। आश्चर्य होता है कि समृद्धशाली व्यक्तियों के पास असंख्य सकारात्मक सह सम्बन्धक जैसे- शैक्षिक उपलब्लिधाँ, लक्ष्य प्राप्ति में निपुणता, उच्च स्तर का आत्म नियन्त्रण और धैर्य की निरन्तरता होते हैं (Howell 2009) इस प्रकार वह विज्ञान जो वातावरण और व्यक्तियों के विकास और सुविधाओं की समृद्धि पर केन्द्रित है वह एक महत्वपूर्ण और नया विषय मोविज्ञान के साइंस के लिये है।

13.3 सकारात्मक मनोविज्ञान का क्षेत्र

सकारात्मक मनोविज्ञान सकारात्मक अनुभवों पर तीन काल बिन्दुओं पर केन्द्रित है।

1. अतीत की भलाई संतोष और सन्तुष्टि पर केन्द्रित।
2. वर्तमान जो खुशी और अनुभवों के प्रभाव की आवधारणा पर केन्द्रित है।
3. भविष्य उन अवधारणाओं के साथ जो आशा और आशावाद को समाहित करती है।

सकारात्मक मनोविज्ञान न केवल भलाई को तीन काल बिन्दुओ में विभाजित करता है बल्कि सकारात्मक मनोविज्ञान के क्षेत्र को तीन बिन्दुओं में विभाजित करता है।

1. पहला वस्तुपरक बिन्दु (Subjective Point) - जो सकारात्मक अनुभव भूत, वर्तमान व भविष्य जैसे उदाहरण के लिए- खुशी, आशावादिता व भलाई को सम्मिलित करता है।

2. दूसरा व्यक्तिगत बिन्दु (Individual Point) जो 'अच्छे व्यक्ति' की विशेषताओं पर केन्द्रित करता है जैसे उदाहरण के लिए- प्रतिभा, ज्ञान, प्रेम, साहस और रचनात्मकता।

3. तीसरा समूह बिन्दु (Group Point) जो सकारात्मक संस्थानों, नागरिकता और समुदायों का अध्ययन करता है उदाहरण के लिए - परोपकारिता, सहिष्णुता, काम के प्रति नैतिकता (work ethic) सकारात्मक मनोविज्ञान केन्द्र, 1998)

4. अन्तिम रूप में सकारात्मक मनोविज्ञान - वैज्ञानिक समुदाय, समाज और व्यक्तियों को उनके अन्दर मौजूद विचारों को नये परिप्रेक्षण में अध्ययन करने और मानव उत्कर्ष के समर्थन के लिये

अनुभव जन्य साक्ष्य उपलब्ध कराता है, का विज्ञान है। अच्छा जीवन क्या है । Authentic Happiness and good life ? सुकरात, प्लेटो और अरस्तू का मानना है कि जब लोग धार्मिक जीवन जीते हैं तो प्रमाणिक रूप से खशी को पा लेते हैं। बाद में कुछ वैज्ञानिकों इपीकूरस आदि ने बताया कि खश्षी वास्तव में सकारात्मक भावनाओं और सुख की अधिकता है। पारम्परिक अवधारणा के अनुसार सकारात्मक मनोविज्ञान प्रमाणिक सुखात्मकता है जो hedonic (सुखात्मकता) और endaimonic Well Being (भलाई) का मिश्रण है। सेलिग्मैन और सिकजन्टमिहली (Csikszentmihalyi, 2000) और Hidomic खुशी उच्च स्तर के सकारात्मक प्रभाव व निम्न स्तर के नकारात्मक प्रभाव को समाहित करता है। उच्च विषयगत जीवन सन्तुष्टि को समाहित नहीं करता (Diener 1999 Eudaimonic एउदेमौनिक भलाई, जीवन को अर्थ और उद्देश्य को निर्मित करने पर केन्द्रित रहती है, किन्तु इनदोनों अवधारणाओं हिडोनिक व एउदेमोनिक भलाई के बीच भेद एक बहस या वाद विवाद का विषय है (Kashdan et al 2008 Keys and Annas 2009 Tiberius and Maso 2009) । Seligmon सेलिंगमैन ने ''प्रमााणिक खुशी'' की धारणा को विभक्त किया है। उन्होंने कहा जीवन एक सुखद जीवन, एक व्यस्त जीवन और एक अर्थपूर्ण जीवन का संयोजन है। आनन्ददायक जीवन सकारात्मक संवेगों की भावना जैसे खुशी, आभार , शांति, रूचि, आशा, गौरव मनोरंजन, प्रेरणा, भय और प्रेम का संयोजन है (Fredrickson 2009)। जो हमारे प्रसिद्धि सफलता और भलाई के लिये संयुक्त तत्व के रूप में काम करते हैं।

13.4 आधुनिक सकारात्मक मनोविज्ञान की उत्पत्ति

सकारात्मक मनोविज्ञान आंदोलन के जन्मदाता मार्टिन ई.पी. सेलिंगमैन (Martin E.P. Seligmon)जो कि पेन्सिलवानिया विश्वविद्यालय में प्रोफेसर के पद पर हैं को माना जाता है। कई दशकों के प्रयोगात्मक शोध के बाद उन्हें अपने सिद्धान्त Learned helplessness पर सफलता मिली। 1998 में उन्हें अमेरिकन साइकोलाजिकल एसोसियेसन का अध्यक्ष मनोनित किया गया। बोस्टन मेसाचुसेट्स 21 अगस्त, 1999 में ए.पी.ए की 107वीं वार्षिक सम्मेलन के

उद्घाटन के दौरान सेलिगमैन ने आधुनिक विकृतिविज्ञान केन्द्रित मनोविज्ञान की गतिकी को सुधारने सम्बन्धी अपने एजेन्डे का परिचय कराया। सेलिगमैन अपनी अध्यक्षता के दौरान सकारात्मक मनोविज्ञान आंदोलन के मुखिया बने रहे और दैनिक जीवन में सकारात्मक मनोविज्ञान के सिद्धान्तों को शामिल करवाने के लिये, दुनिया भर से अनुसंधानकोषों को जमा करने और सरकारों से समर्थन हासिल करने के लिये प्रयासरत रहे।

सकारात्मक मनोविज्ञान 1998 से पूर्व-

द्वितीय विश्व युद्ध से पहले मनोविज्ञान के तीन अज्ञात कार्य थे। 1. मानसिक बीमारी का इलाज 2. सामान्य जनसंख्या के जीवन में वृद्धि 3. प्रतिभाओं का अध्ययन। दो विश्वयुद्धों के बाद कई मनोविकृत सैनिकों के लिये मनोविज्ञान के पहले कार्य पर ध्यान दिया गया और शोध कोष पहले कार्य के लिए दिया गया, बांकी दो कार्यों की अनदेखी की गई (Linley 2009 लिनले) । यह शोधकोष मानसिक विकारों के उपचार के लिये कारगर सिद्ध हुआ और 14 विकारों का उपचार कर ठीक कर दिया गया। (सेलिगमैन 2000) किन्तु विडम्बना यह हुई कि मनोविज्ञान को पीड़ित विज्ञान Victimalogy के रूप में देखा जाने लगा बल्कि मनुष्य के सक्रियता, रचनात्मकता, स्वावलंबिता जैसे लक्षणों को नजरअंदाज कर मनुष्य को निष्क्रिय प्राणी के रूप में देखा जाने लगा जो कि बाहरी ताकतों पर निर्भर था (Seligman and Csikszentmihalyi 2009) । द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद मनोविज्ञान व सकारात्मक मनोविज्ञान दोनों के बीच अन्तर इन दो प्रश्नों के माध्यम से जाना जा सकता है। जैसे- कुछ व्यक्ति क्यों असफल हो जाते हैं? 'बनाम' क्या कुछ व्यक्तियों को सफल बनाता है ?

सेलिगमैन (2002) के अनुसार सकारात्मक मनोविज्ञान आन्दोलन का संदेश यह याद दिलाता है कि मनोविज्ञान का स्वरूप या क्षेत्र विकृत कर दिया गया है। मनोविज्ञान का कार्य सिर्फ बीमारी, कमजोरी तथा क्षति का अध्ययन करना ही नहीं है, बल्कि इसका कार्य पुण्य(Virtue) और ताकत (Strength) का अध्ययन करना भी हैं। मनोवैज्ञानिक उपचार, यह निर्धारित करना नहीं है कि गलत क्या है किन्तु सही क्या है इसका निर्माण करना है। मनोविज्ञान का अर्थ सिर्फ

बीमारी व स्वास्थ्य नहीं है किन्तु इसका कार्य ,शिक्षा, सूझ, प्रेम , विकास और खेल का भी अध्ययन करना है और यह खोजता है कि क्या सबसे अच्छा है। सकारात्मक मनोविज्ञान इच्छाधारी सोच (Wishfull thinking), आत्मप्रतारणा (Self-deception) या हाथ हिलाना (hand waving) पर ही भरोसा नहीं करता बल्कि जटिल मानव व्यवहार की अद्वितीय समस्याओं के लिये सबसे अच्छा क्या है उस वैज्ञानिक विधि को खोजता है व उसका अनुसरण करता है।

13.5 सकारात्मक मनोविज्ञान का इतिहास-

’सकारात्मक मनोविज्ञान का विचार एक नया विचार नहीं है। सकारात्मक मनोविज्ञान शब्द को अब्राहम मैसलों ने सेलिगमैन से कई दशकों पहले परिचय करा दिया था। (माशलो 1954) । सेलिगमैन ने पुराने दार्शनिकों के शोधों और वैज्ञानिकों के ज्ञान और विचार को हमारी दृष्टि पटल की चेतना पर एक घटक रूप में लाने का प्रयास किया है। सकारात्मक मनोविज्ञान विषय के उद्गम से पहले निम्नलिखित चार समूहों ने ’अच्छी जीवनशैली को अपनाया था जिसको कि सकारात्मक मनोविज्ञान का आधार कहा जा सकता है।

13.5.1. ग्रीक **Greeks**

अरस्तू (384-322 B.C.E.) इस क्षेत्र में सबसे बड़ा योगदान अरस्तू का है उन्होंने नैतिकता, सदाचार और कैसे एक अच्छा जीवन जीया जा सकता है इस पर कार्य किया। उन्होंने निष्कर्ष रूप में कहा कि मानव के लिये सबसे अच्छा ;मनकंपउवदपं खुशी है और कहा कि खुशी पुण्य के कार्यों को करने से ही प्राप्त हो सकती है मेषन टिबेरिअस Mason and Tiberius 2009।

13.5.2. उपयोगितावादी **(Utilitarianism)**

उपयोगितावाद के जन्मदाता जेरेमी बेन्थम Jeremy Bentham 2009 थे और जाॅन स्टुअर्ट मिल श्रवीद ैजनंतज डपसस ने इस विचार को आगे बढ़ाया। उपयोगितावाद वह दर्शनशास्त्र है

जो '' लोगों की अधिकतम् भलाई'' जिसे कि "greatest happiness principle"सबसे बड़ी खुशी सिद्धान्त'' भी कहा जा सकता है की मांग सरकार से अपने योजनाओं में शामिल करने के लिये की। इसे "Principal of Utility" या उपयोगिता का सिद्धान्त भी कहा जा सकता है। उपयोगितावादी समर्थकों ने सर्वप्रथम खुशी के मापन करने के लिये उपकरण का निर्माण किया जो कि सात श्रेणियों में विभक्त था और 'खुशी' का आंकलन 'खुशी की मात्रा जो अनुभव की गई हो' के रूप में करता था (Powelski and Gupta 2009)दर्शनशास्त्री पहले यह कल्पना करते थे कि खुशी का मापन नहीं किया जा सकता किन्तु उपयोगितावादियों ने इसे कर दिखाया। Powelski and Gupta 2009 के अनुसार उपयोगितावादियों ने वर्तमान के सकारात्मक मनोविज्ञान के कु्छ क्षेत्रों को प्रभावित किया है। जैसे कि वस्तुपरक भलाई Subjective well being और 'सुखद जीवन' pleasurable life के रूप में।

13.5.3. विलियिम जेम्स

प्रतिभाशाली विद्वान विलियम जेम्स को मनोविज्ञान में उनके सर्वश्रेष्ठ योगदान के लिये जाना जाता है। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक The Principals of Psychology (James 1890) हैं। मूल रूप से विलियम जेम्स एक चिकित्सक थे जिन्होंने अपने अध्ययन हारवार्ड विश्वविद्यालय बोस्टन संयुक्त राज्य अमेरिका में किया। उनकी रूचि धर्म, रहस्यवाद व ज्ञान मिमांसा में भी थी (Pawelski 2009) । ''संवेग'' जो उनकी पुस्तक के पाठों में से एक है। सकारात्क मनोविज्ञान के लिये सबसे अधिक प्रासंगिक है।

13.5.4. मानवतावादी मनोविज्ञान- **(Humanistic Psychology)**

मानवतावादी मनोविज्ञान, 1950 के अन्त व 1960 के शुरूआत में स्थापित मनोविज्ञान के मनोविश्लेषण के सिद्धान्त, व्यवहारवाद व अनुबन्धन के सिद्धान्त के प्रतिक्रिया के रूप में उभरा। मानवतावादी आंदोलन ने गुणात्मक रूप में मानव की सोच, व्यवहार और अनुभवों को समग्र आयामों में जोड़ते हुए अध्ययन करने की शुरूआत की। संक्षेप में मानवतावादी मनोविज्ञान व्यक्ति के संपूर्ण या समग्र अध्ययन पर जोर देता है। मानवतावादी मनोविज्ञान का मुख्य उद्देश्य, मानसिक

स्वास्थ्य, विशेष रूप से सकारात्मक गुणों जैसे- खुशी, संतोष, परमानंद, दयालुता, देखभाल, साझाकरण व उदारता के अध्ययन पर ध्यान देना था।

सकारात्मक मनोविज्ञान व मानवतावादी मनोविज्ञान के बीच थोड़े बहुत मतभेद रहे। प्रारम्भ में यह माना जाता रहा कि सकारात्मक मनोविज्ञान मानवतावाद नियमों से मेल नहीं खाता है और यह एक भलाई 'Well being' के अध्ययन की वैज्ञानिक विधि है। अतः मापन व परिकल्पना परिक्षण के लिये वैज्ञानिक विधियों का ही उपयोग किया जायेगा।

मानवतावादी मनोविज्ञान सकारात्मक मनोविज्ञान की आलोचना यह कह कर करता है कि यह विज्ञान एक अदूरदर्शी सोच (short sighted) रखने की वजह से मानवतावादी मनोविज्ञान से पृथक है और कहता कि इसी सोच (discipline) के कारण गुणात्मक शोध व खोज के तरीकों तक सीमित कर दिया और प्राप्त मुख्य परिणामों का सामन्यीकरण (generalization) एक निश्चित सीमा तक करने में असमर्थ रहा। उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि सकारात्मक मनोविज्ञान में वैज्ञानिक प्रमाणिकता के लिये गुणात्मक शोधों की अनदेखी कर मात्रात्मक शोध के द्वारा इस कमी को पूरा किया जाये।

13.6 आज का सकारात्मक मनोविज्ञान Today's Positive Psychology

पिछले कुछ वर्षों में सकारात्मक मनोविज्ञान आंदोलन ने काफी गति पकड़ी है। सेलिंगमैन के भाषण के बाद 1999 से 2002 तक अकूमल (Akumal) और मेक्सिको (Maxico) में सकारात्मक मनोविज्ञान के नये क्षेत्रों के विकास हेतु शोधकर्ता इकट्ठे हुये। कई देशों के शोधकर्ता इसे सफल बनाने में अपना योगदान दे रहे हैं। वर्तमान में दुनियां के कई देशों में सैकड़ों स्नातक कक्षायें चल रही हैं। व्यवहारिक सकारात्मक मनोविज्ञान के दो परास्नातक कार्यक्रम भी चल रहे हैं। पहला कार्यक्रम सेलिगमैन ने पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय 2005 में व दूसरा 2007 में यू0के0 के ईस्ट लंदन विश्वविद्यालय में प्रारम्भ हुआ। पाँच परास्नातक पाठ्यक्रम इटली, पुर्तगाल, मैक्सिको में अपनी भाषा में निर्मित किये जा रहे हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका के फिलाडेल्फिया पेनसिल्वेनिया में सकारात्मक मनोविज्ञान की पहली विश्व कांग्रेस (First World Congress) 18 से 21 जून 2009 में सम्पन्न हुई । यूरोपियन सकारात्मक मनोविज्ञान भी दुनियां भर से विशेषज्ञों को कई सम्मेलनो के लिये आमन्त्रित कर रहा है। वर्तान में 2006 में सकारात्मक मनोविज्ञान ने एक शैक्षिक शोध पत्रिका स्थापित की जो कि प्रतिष्ठित शोध पत्रिकाओं में शामिल है। यू.के में भी सकारात्मक मनोविज्ञान में शोध कार्य चल रहा हैं, भारत ने भी अपनी रूचि इस ओर प्रदर्शित की है जबकि हमारे जो शास्त्र व ग्रन्थ है उनका मूल आधार, त्याग, क्षमा , ज्ञान, आनंद, सत्य योग व प्राणायाम जैसे तत्वों पर ही आधारित है। गौतम बुद्ध का सिद्धान्त भी सकारात्मक विचारों के परिपालन पर जोर देता है।

13.7 सकारात्मक मनोविज्ञान का स्थान

मनोविज्ञान विषय को विभिन्न क्षेत्रों में विभाजित किया गया है। अमेरिकन साइकोलिजिकल एसोसिएसन A.P.A. ने 56 शाखाओं में इसे विभक्त किया है । ब्रिटिश मनोवैज्ञान सोसाइटी (B.S.S.) ने 9 क्षेत्रों जैसे नैदानिक परामर्शन , शैक्षिक, फ़ॉरेन्सिक, स्वास्थ्य, न्यूरोसाइकोलाजी, व्यवसायिक, खेल व व्यायाम। किन्तु सकारात्मक मनोविज्ञान उक्त शाखाओं मे किस शाखा के अन्तर्गत है ? इस सम्बन्ध में कई मतभेद हैं यह एक स्वतन्त्र शाखा के रूप में स्थापित है या मनोविज्ञान के सभी क्षेत्रों में इसका अध्ययन किया जा सकता है। अभी स्वतन्त्र विषय के रूप में सकारात्मक मनोविज्ञान स्थापित हो पाया है या नहीं यह शोध का विषय है।

13.8 सारांश

उद्देश्यों के आधार पर सकारात्मक मनोविज्ञान का मुख्य अथर्, सकारात्मक मनोविज्ञान व उसके कार्य या क्षेत्रों को बताया गया है। 1. सकारात्मक मनोविज्ञान भलाई और इष्टतम् कार्य का विज्ञान है। 2. सकारात्मक मनोविज्ञान के तीन नोड होते हैं:- वस्तुपरक नोड, व्यक्तिपरक नोड और समूह नोड ।

सकारात्मक मनोविज्ञान का प्राचीन यूनानी दर्शन, मानवतावाद व मानसिक स्वास्थ्य के विभिन्न क्षेत्रों में एक अत्यधिक समृद्ध इतिहास है। मानवतावादी मनोविज्ञान सकारात्मक मनोविज्ञान के काफी करीब है किन्तु मुख्य जो अन्तर है वह सकारात्मक मनोविज्ञान का वैज्ञानिक विधियों पर अधिक बल देना है।

13.9 मूल्यांकन प्रश्न

प्र0-1. हमें सकारात्मक मनोविज्ञान की आवश्यकता क्यों हो सकती है।

प्र0-2. आधुनिक सकारात्मक मनोविज्ञान की उत्पत्ति

प्र0-3 . मानवता मनोविज्ञान से सकारात्मक मनोविज्ञान कैसे अलग हैं।

13.10 संदर्भ ग्रन्थ

1- Introduction to positive psychology Mcgraw.hill.co.uk/openup/chapter/9780335241958. pdf.

2- www.positivepsychology.org.uk.

3- William Compton Introduction Positive Psychology Thomson Weds Worth 2005 United States.

4- Maslaw .A. 1954 The farthest reaches of human nature.New York.Viking

5- Seligman .M.Schulmen.P.Derubeis .R. and Hollen S. (1999). The prevention of depression & anxiety, prevention and treatment .2 Article-8 available on the World Wide web. : http: ∫∫ Journals.apa.org/prevention/volume2/pre0020008a.html

6- Seligman M.E.P. (2002) Authentic happiness .New York: Free Press.

7- Seligman M.E.P. & Csikszentmihalyi.M(Ed.) (2000) Positive Psychology {Speical Issue } American Psychologist , 55(1).

8- Maslaw,A.H, 1954 . Motivation and personality. New York : Harper & Row.

9- Stever Baumgardner. M.Crothers "Positive Psychology" I.Ad. public.Dorling Kindersly India Pvt. Ltd. (2009) .

इकाई 14. सकारात्मक मनोविज्ञान में मानवतावादियों का योगदान: सेलिगमैन, रोजेर्स एवं मैस्लो (Contribution of Humanists to Positive Psychology: Seligman, Rogers and Maslow)

इकाई संरचना

14.0 प्रस्तावना

14.1 उद्देश्य

14.2 मानवतावादी आंदोलन

14.3 सकारात्मक मनोविज्ञान में सेलिगमैन का योगदान

14.4 सकारात्मक मनोविज्ञान में रोजर्स का योगदान

14.5 सकारात्मक मनोविज्ञान में अब्राहम मैस्लो का योगदान

14.6 सारांश

14.7 शब्दावली

14.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

14.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

14.10 निबंधात्मक प्रश्न

14.0 प्रस्तावना (Introduction)

सकारात्मक मनोविज्ञान, मानव शक्तियों, गुणों और कल्याण के अध्ययन पर ध्यान केंद्रित करने वाली मनोविज्ञान की एक शाखा की एक शाखा है, जो इस क्षेत्र में मानवतावादी विचारकों के योगदान के लिए बहुत आभारी है। मनोविज्ञान में विकृति विज्ञान को हमेशा से ही महत्वपूर्ण माना जाता रहा है परन्तु मानवतावादियों ने मानव क्षमता, व्यक्तिगत विकास और आत्म-बोध को समझने के महत्व पर जोर दिया। यह अध्याय सकारात्मक मनोविज्ञान के विकास में मानवतावादी विचारकों के महत्वपूर्ण योगदान पर प्रकाश डालता है।

14.1 उद्देश्य (Aim)

प्रस्तुत अध्याय से आप सकारात्मक मनोविज्ञान एवं मानवतावाद से उसके सम्बन्ध को समझ पाएंगे

इस अध्याय के द्वारा आप यह भी समझ पाएंगे कि सकारात्मक मनोविज्ञान में मानवतावादियों का क्या योगदान है

14.2 मानवतावादी आंदोलन The Humanist Movement

मानवतावादी आंदोलन, जिसे मानवतावाद के रूप में भी जाना जाता है, एक दार्शनिक और बौद्धिक आंदोलन है जो मानवीय मूल्यों, और गरिमा पर जोर देता है। इसमें मानवतावादी मनोविज्ञान, धर्मनिरपेक्ष मानवतावाद और पुनर्जागरण मानवतावाद सहित विभिन्न शाखाएं शामिल हैं, प्रत्येक का अपना फोकस और ऐतिहासिक संदर्भ है। मानवतावादी आंदोलन का विस्तृत अन्वेषण निम्नवत है:

पुनर्जागरण मानवतावाद Renaissance Humanism: मानवतावादी आंदोलन की जड़ें यूरोप में पुनर्जागरण काल में देखी जा सकती हैं, विशेषकर 14वीं से 17वीं शताब्दी के दौरान इटली में। पुनर्जागरण मानवतावाद एक सांस्कृतिक और बौद्धिक आंदोलन के रूप में उभरा जिसने शास्त्रीय साहित्य, दर्शन और कला में रुचि को पुनर्जीवित किया। मानवतावादी विद्वानों ने मानव उत्कर्ष के आवश्यक पहलुओं के रूप में प्राचीन ग्रंथों के अध्ययन, आलोचनात्मक सोच और ज्ञान की खोज पर जोर दिया।

धर्मनिरपेक्ष मानवतावाद Secular Humanism: आधुनिक युग में, धर्मनिरपेक्ष मानवतावाद एक दार्शनिक और नैतिक विश्वदृष्टि के रूप में उभरा जो मानवीय तर्क, नैतिकता और धार्मिक सिद्धांतों का सहारा लिए बिना अर्थ की खोज पर जोर देता है। धर्मनिरपेक्ष मानवतावादी मानव कल्याण, सामाजिक न्याय और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बढ़ावा देने की वकालत करते हैं, अक्सर धार्मिक हठधर्मिता और अलौकिक मान्यताओं की आलोचना करते हैं।

मानवतावादी मनोविज्ञान Humanistic Psychology: मानवतावादी मनोविज्ञान, 20वीं सदी के मध्य में विकसित हुआ, मनोविज्ञान की एक विशिष्ट शाखा का प्रतिनिधित्व करता है जो मानव क्षमता, व्यक्तिपरक अनुभव और व्यक्तिगत विकास के अध्ययन पर केंद्रित है। अब्राहम मास्लो, कार्ल रोजर्स और रोलो मे जैसे मानवतावादी मनोवैज्ञानिकों ने आत्म-बोध, सकारात्मक संबंधों और व्यक्तियों की अंतर्निहित गरिमा के महत्व पर जोर देते हुए व्यवहारवाद और मनोविश्लेषण के नियतात्मक और न्यूनीकरणवादी दृष्टिकोण को चुनौती दी।

मूल्य और सिद्धांत Values and Principles: मानवतावादी आंदोलन की विशेषता कुछ मूल मूल्य और सिद्धांत हैं, जिनमें शामिल हैं:

मानवीय गरिमा Human Dignity: मानवतावादी जाति, लिंग, यौन और धार्मिक मान्यताओं की परवाह किए बिना प्रत्येक व्यक्ति के अंतर्निहित मूल्य और गरिमा में विश्वास करते हैं।

तर्क और विज्ञान Reason and Science: मानवतावादी दुनिया को समझने और मानवीय समस्याओं को हल करने के सर्वोत्तम तरीकों के रूप में आलोचनात्मक सोच, अनुभवजन्य साक्ष्य और वैज्ञानिक जांच को महत्व देते हैं।

नैतिक जीवन Ethical Living: धर्मनिरपेक्ष मानवतावादी धार्मिक आज्ञाओं के पालन के बजाय करुणा, सहानुभूति और मानवाधिकारों के प्रति सम्मान पर आधारित नैतिक सिद्धांतों को बढ़ावा देते हैं।

सामाजिक न्याय Social Justice: मानवतावादी समानता, निष्पक्षता और सामाजिक न्याय की वकालत करते हैं, प्रणालीगत अन्याय को दूर करने और समाज के सभी सदस्यों के लिए मानव उत्कर्ष को बढ़ावा देने की मांग करते हैं।

विचार की स्वतंत्रता Freedom of Thought: मानवतावादी विचार, विवेक और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के सिद्धांत को कायम रखते हैं, विभिन्न विश्वासों और राय रखने के व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा करते हैं।

प्रभाव और प्रभाव Influence and Impact: मानवतावादी आंदोलन का शिक्षा, राजनीति, नैतिकता और कला सहित समाज के विभिन्न पहलुओं पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। मानवतावादी विचारों ने मानवाधिकारों की उन्नति, धर्मनिरपेक्ष शासन और प्रगतिशील सामाजिक नीतियों के विकास में योगदान दिया है।

मानवतावादी आंदोलन में मानवीय मूल्यों, गरिमा और क्षमता पर केंद्रित दार्शनिक, नैतिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण का एक व्यापक स्पेक्ट्रम शामिल है। पुनर्जागरण विद्वता में अपनी जड़ों से लेकर धर्मनिरपेक्ष मानवतावाद और मानवतावादी मनोविज्ञान में अपनी आधुनिक अभिव्यक्तियों तक, यह आंदोलन अधिक मानवीय और प्रबुद्ध दुनिया की खोज में कारण, करुणा और सामाजिक न्याय की वकालत करना जारी रखता है।

14.3 सकारात्मक मनोविज्ञान में सेलिगमैन का योगदान (Contribution of Seligman in positive psychology)

मार्टिन सेलिगमैन, जिन्हें अक्सर सकारात्मक मनोविज्ञान का संस्थापक जनक माना जाता है, ने इस क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण योगदान दिए हैं। सेलिगमैन के योगदान के कुछ प्रमुख पहलू निम्नलिखित हैं:

अर्जित निसहायता का सिद्धांत Theory of Learned Helplessness: सेलिगमैन का प्रारंभिक शोध सीखी हुई असहायता पर केंद्रित है, एक ऐसी घटना जहां व्यक्ति प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने में असहाय और निष्क्रिय महसूस करना सीखते हैं, तब भी जब पलायन या परिवर्तन संभव हो। जबकि यह काम शुरू में अवसाद को समझने पर केंद्रित था, इसने

विपरीत परिस्थितियों पर काबू पाने में लचीलेपन और आशावाद के महत्व पर प्रकाश डालकर सेलिगमैन के सकारात्मक मनोविज्ञान की खोज का मार्ग प्रशस्त किया।

कल्याण का PERMA मॉडल PERMA Model of Well-being: सेलिगमैन ने कल्याण का PERMA मॉडल प्रस्तावित किया, जो समृद्धि के पांच आवश्यक तत्वों की पहचान करता है: सकारात्मक भावनाएं, जुड़ाव, रिश्ते, अर्थ और उपलब्धि। यह मॉडल मनोवैज्ञानिक कल्याण को समझने और बढ़ावा देने के लिए एक रूपरेखा के रूप में कार्य करता है, जो सकारात्मक अनुभवों, सार्थक संबंधों और जीवन में उद्देश्य की भावना के महत्व पर जोर देता है।

सकारात्मक मनोविज्ञान हस्तक्षेप Positive Psychology Interventions: सेलिगमैन और उनके सहयोगियों ने कल्याण और लचीलापन बढ़ाने के उद्देश्य से विभिन्न सकारात्मक मनोविज्ञान हस्तक्षेप विकसित किए हैं। इन हस्तक्षेपों में आशावाद और सकारात्मक सोच को बढ़ावा देने के लिए कृतज्ञता अभ्यास, शक्ति-आधारित हस्तक्षेप और संज्ञानात्मक-व्यवहार तकनीकें शामिल हैं। सेलिगमैन के काम ने इस धारणा को लोकप्रिय बना दिया है कि जानबूझकर प्रथाओं और हस्तक्षेपों के माध्यम से कल्याण की खेती की जा सकती है।

चरित्र शक्तियों पर ध्यान दें Focus on Character Strengths: सेलिगमैन ने चरित्र शक्तियों के वैल्यूज़ इन एक्शन (वीआईए) वर्गीकरण का सह-विकास किया, जो 24 सार्वभौमिक शक्तियों की पहचान करता है जो मानव उत्कर्ष में योगदान करते हैं। यह रूपरेखा भलाई, लचीलापन और व्यक्तिगत पूर्ति को बढ़ाने के लिए किसी की चारित्रिक शक्तियों का लाभ उठाने के महत्व पर जोर देती है। सकारात्मक मनोविज्ञान के हस्तक्षेप में अक्सर मनोवैज्ञानिक उत्कर्ष को बढ़ावा देने के लिए चरित्र शक्तियों की पहचान और उपयोग शामिल होता है।

विभिन्न क्षेत्रों में अनुप्रयोग Application in Various Fields: सेलिगमैन के विचारों और हस्तक्षेपों को शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, व्यवसाय और चिकित्सा सहित विभिन्न क्षेत्रों में लागू किया गया है। सकारात्मक मनोविज्ञान सिद्धांतों का उपयोग शैक्षणिक उपलब्धि को बढ़ावा देने, कार्यस्थल उत्पादकता में सुधार, शारीरिक स्वास्थ्य परिणामों को बढ़ाने और विभिन्न आबादी में मनोवैज्ञानिक लचीलेपन की सुविधा के लिए किया गया है।

सकारात्मक मनोविज्ञान आंदोलन की स्थापना Founding the Positive Psychology Movement: सेलिगमैन की प्रभावशाली पुस्तक "ऑथेंटिक हैप्पीनेस" और 1998 में अमेरिकन साइकोलॉजिकल एसोसिएशन की उनकी अध्यक्षता ने सकारात्मक मनोविज्ञान को अध्ययन के एक विशिष्ट क्षेत्र के रूप में लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अपने नेतृत्व और वकालत के माध्यम से, सेलिगमैन ने सकारात्मक मनोविज्ञान को मनोविज्ञान के भीतर अनुसंधान और अभ्यास के एक वैध और प्रभावशाली क्षेत्र के रूप में स्थापित करने में मदद की।

संक्षेप में, सकारात्मक मनोविज्ञान में मार्टिन सेलिगमैन का योगदान दूरगामी और परिवर्तनकारी रहा है। उनके शोध, सिद्धांतों और हस्तक्षेपों ने मनोवैज्ञानिक कल्याण, लचीलेपन और मानव

उत्कर्ष के बारे में हमारी समझ को उन्नत किया है, जिससे व्यक्तियों, समुदायों और समग्र रूप से समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

14.4 सकारात्मक मनोविज्ञान में रोजर्स का योगदान (Contribution of Rogers in positive psychology)

मानवतावादी मनोविज्ञान के संस्थापकों में से एक, कार्ल रोजर्स ने व्यक्ति-केंद्रित चिकित्सा में अपने अग्रणी कार्यों और सकारात्मक रिश्तों, आत्म-बोध और व्यक्तिगत विकास के महत्व पर जोर देकर सकारात्मक मनोविज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। सकारात्मक मनोविज्ञान में रोजर्स के योगदान के कुछ प्रमुख पहलू इस प्रकार हैं:

व्यक्ति-केंद्रित दृष्टिकोण Person-Centered Approach: रोजर्स ने चिकित्सा के लिए ग्राहक-केंद्रित या व्यक्ति-केंद्रित दृष्टिकोण विकसित किया, जिसने सहानुभूति, बिना शर्त सकारात्मक सम्मान और चिकित्सीय संबंधों में वास्तविकता पर जोर दिया। यह दृष्टिकोण एक सहायक और गैर-निर्णयात्मक वातावरण बनाने पर केंद्रित है जहां व्यक्ति अपनी भावनाओं, अनुभवों और आत्म-धारणाओं का स्वतंत्र रूप से पता लगा सकें। सकारात्मक मनोविज्ञान रोजर्स के चिकित्सीय संबंधों और कल्याण को बढ़ावा देने में सहायक वातावरण के महत्व पर जोर देता है।

बिना शर्त सकारात्मक सम्मान Unconditional Positive Regard: रोजर्स ने बिना शर्त सकारात्मक सम्मान की अवधारणा पेश की, जिसमें व्यक्तियों को उनके विचारों, भावनाओं या व्यवहारों की परवाह किए बिना बिना शर्त स्वीकार करना और उनका मूल्यांकन करना शामिल है। यह अवधारणा मनोवैज्ञानिक विकास और आत्म-सम्मान को बढ़ावा देने में गैर-निर्णयात्मक स्वीकृति और सहानुभूति के महत्व पर जोर देती है। सकारात्मक मनोविज्ञान लचीलापन और कल्याण को बढ़ावा देने में सकारात्मक रिश्तों और सामाजिक समर्थन की भूमिका को पहचानता है, जो रोजर्स के बिना शर्त सकारात्मक सम्मान पर जोर देता है।

आत्म-साक्षात्कार Self-Actualization: रोजर्स व्यक्तियों की आत्म-साक्षात्कार, या उनकी पूरी क्षमता की प्राप्ति की दिशा में प्रयास करने की सहज प्रवृत्ति में विश्वास करते थे। उन्होंने पूर्णता और कल्याण प्राप्त करने के लिए प्रामाणिकता, आत्म-जागरूकता और व्यक्तिगत विकास के महत्व पर जोर दिया। सकारात्मक मनोविज्ञान इसी तरह समृद्धि के आवश्यक घटकों के रूप में व्यक्तिगत शक्तियों, गुणों और सार्थक लक्ष्यों की खोज पर जोर देता है।

सकारात्मक रिश्ते Positive Relationships: रोजर्स ने मनोवैज्ञानिक कल्याण और व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा देने में सकारात्मक रिश्तों के महत्व पर प्रकाश डाला। उन्होंने विश्वास और अंतरंगता के निर्माण में सहानुभूतिपूर्ण समझ, सक्रिय श्रवण और वास्तविक संचार के महत्व पर जोर दिया। सकारात्मक मनोविज्ञान के हस्तक्षेप अक्सर लचीलेपन और सकारात्मक भावनाओं

को बढ़ावा देने के लिए सामाजिक कनेक्शन, सहानुभूति और संचार कौशल को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

समग्र दृष्टिकोण Holistic Approach: रोजर्स ने मनुष्य को समझने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण की वकालत की, जो मन, शरीर और आत्मा की परस्पर संबद्धता पर विचार करता है। उन्होंने मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य और पूर्णता प्राप्त करने के लिए किसी के विचारों, भावनाओं और व्यवहारों के बीच अनुरूपता के महत्व पर जोर दिया। सकारात्मक मनोविज्ञान इसी तरह एक समग्र दृष्टिकोण अपनाता है, जो कल्याण को बढ़ावा देने में शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कारकों के बीच परस्पर क्रिया को पहचानता है।

संक्षेप में, सकारात्मक मनोविज्ञान में कार्ल रोजर्स का योगदान सकारात्मक संबंधों, आत्म-बोध, प्रामाणिकता और समग्र कल्याण के महत्व पर उनके जोर में निहित है। चिकित्सा के प्रति उनका व्यक्ति-केंद्रित दृष्टिकोण सकारात्मक मनोविज्ञान हस्तक्षेप और अनुसंधान को प्रभावित करना जारी रखता है, जो समृद्धि और मनोवैज्ञानिक लचीलेपन को बढ़ावा देने में मानवतावादी सिद्धांतों के महत्व पर प्रकाश डालता है।

14.5 सकारात्मक मनोविज्ञान में अब्राहम मैस्लो का योगदान (Contribution of Abraham Maslow in positive psychology)

अब्राहम मास्लो, जो मानव प्रेरणा और आवश्यकताओं के पदानुक्रम के अपने सिद्धांत के लिए जाने जाते हैं, ने आत्म-बोध, व्यक्तिगत विकास और पूर्ति की खोज के महत्व पर जोर देकर सकारात्मक मनोविज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। मास्लो के योगदान के कुछ प्रमुख पहलू यहां दिए गए हैं:

आवश्यकताओं का पदानुक्रम Hierarchy of Needs: मास्लो ने मानवीय आवश्यकताओं का एक पदानुक्रमित मॉडल प्रस्तावित किया, जिसे अक्सर एक पिरामिड के रूप में दर्शाया जाता है जिसमें सबसे नीचे बुनियादी शारीरिक ज़रूरतें होती हैं, इसके बाद शीर्ष पर सुरक्षा, प्रेम और अपनापन, सम्मान और आत्म-बोध होता है। यह ढाँचा सुझाव देता है कि व्यक्तियों को उच्च-स्तरीय आवश्यकताओं की ओर बढ़ने से पहले निचले-स्तर की ज़रूरतों को पूरा करना चाहिए। सकारात्मक मनोविज्ञान उन कारकों को समझने के लिए मास्लो के पदानुक्रम पर आधारित है जो भलाई और पूर्ति में योगदान करते हैं, आत्म-बोध मनोवैज्ञानिक विकास के शिखर का प्रतिनिधित्व करता है।

आत्म-साक्षात्कार की अवधारणा Concept of Self-Actualization: मास्लो ने आत्म-बोध की अवधारणा पेश की, जिसमें व्यक्तियों को अपनी पूरी क्षमता का एहसास करने और खुद का सर्वश्रेष्ठ संस्करण बनने के लिए जन्मजात प्रेरण का जिक्र किया गया। उन्होंने आत्म-साक्षात्कारी व्यक्तियों का वर्णन उन लोगों के रूप में किया जो विकास, रचनात्मकता, स्वायत्तता

और उद्देश्य की भावना से प्रेरित होते हैं। सकारात्मक मनोविज्ञान मनोवैज्ञानिक कल्याण के आवश्यक घटकों के रूप में आत्म-बोध और व्यक्तिगत विकास की पर जोर देता है।

मानव स्वभाव के सकारात्मक पहलुओं पर ध्यान दें Focus on Positive Aspects of Human Nature: मैस्लो के काम ने मनोविज्ञान का ध्यान विकृति विज्ञान और शिथिलता से हटाकर मानवीय शक्तियों, गुणों और इष्टतम कार्यप्रणाली के अध्ययन पर केंद्रित कर दिया। प्रेम, रचनात्मकता और आत्म-संतुष्टि जैसे सकारात्मक अनुभवों के महत्व पर प्रकाश डालकर, मास्लो ने अध्ययन के एक विशिष्ट क्षेत्र के रूप में सकारात्मक मनोविज्ञान के उद्भव का मार्ग प्रशस्त किया।

समग्र परिप्रेक्ष्य Holistic Perspective: मास्लो ने मन, शरीर और आत्मा के अंतर्संबंध पर जोर देते हुए मानव व्यवहार पर समग्र परिप्रेक्ष्य की वकालत की। उनका मानना था कि व्यक्तियों को आत्म-बोध और कल्याण प्राप्त करने के लिए अपनी शारीरिक, भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए। सकारात्मक मनोविज्ञान इसी तरह मानव उत्कर्ष की बहुमुखी प्रकृति और कल्याण के विभिन्न आयामों को संबोधित करने के महत्व पर विचार करते हुए एक समग्र दृष्टिकोण अपनाता है।

सकारात्मक मनोविज्ञान हस्तक्षेपों पर प्रभाव Influence on Positive Psychology Interventions: मास्लो के विचारों ने कल्याण और व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कई सकारात्मक मनोविज्ञान हस्तक्षेपों को प्रेरित किया है। ये हस्तक्षेप अक्सर सकारात्मक भावनाओं को विकसित करने, शक्तियों और गुणों को बढ़ाने, सार्थक संबंधों को बढ़ावा देने और जीवन लक्ष्यों की प्राप्ति को सुविधाजनक बनाने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। आत्म-साक्षात्कार और किसी की क्षमता की पूर्ति पर मास्लो का जोर मानव उत्कर्ष को बढ़ाने के लिए डिज़ाइन किए गए हस्तक्षेपों के विकास को सूचित करता है।

14.6 सारांश

मानवतावादी विचारकों ने मानवीय क्षमता, व्यक्तिगत विकास और कल्याण पर जोर देकर सकारात्मक मनोविज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अब्राहम मास्लो, कार्ल रोजर्स जैसी हस्तियों ने व्यक्तिपरक अनुभवों, आत्म-बोध और अस्तित्व संबंधी विषयों पर ध्यान केंद्रित करते हुए पारंपरिक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को चुनौती दी। मास्लो की आवश्यकताओं के पदानुक्रम ने प्रेरणा और पूर्ति को समझने के लिए एक रूपरेखा प्रदान की, जबकि रोजर्स की व्यक्ति-केंद्रित चिकित्सा ने सहानुभूतिपूर्ण संबंधों के महत्व पर प्रकाश डाला। आज, मानवतावादी मनोविज्ञान के सिद्धांतों को सकारात्मक मनोविज्ञान अनुसंधान और अभ्यास में एकीकृत किया गया है, जो कल्याण को बढ़ाने और लचीलेपन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से हस्तक्षेप की जानकारी देता है। सकारात्मक मनोविज्ञान मानवतावादी आदर्शों से प्रेरणा लेना जारी रखता है, जो सकारात्मक रिश्तों, व्यक्तिगत विकास और जीवन में अर्थ और पूर्ति की खोज पर जोर देता है।

14.7 शब्दावली

व्यक्तिपरक: वस्तुनिष्ठ तथ्यों के बजाय व्यक्तिगत राय, व्याख्याओं या भावनाओं पर आधारित।
अस्तित्वगत: अस्तित्व से संबंधित, विशेष रूप से जीवन के अर्थ और उद्देश्य के संबंध में।
लचीलापन: कठिनाइयों या असफलताओं से शीघ्रता से उबरने की क्षमता।
एकीकरण: विभिन्न तत्वों को एक एकीकृत संपूर्णता में संयोजित या सम्मिलित करने की क्रिया।
संवर्द्धन: किसी चीज़ को सुधारने या बढ़ाने की क्रिया, उसे बेहतर या

14.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

कौन सा मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण चिकित्सीय संबंधों में सहानुभूति, बिना शर्त सकारात्मक सम्मान और वास्तविकता के महत्व पर जोर देता है?
ए) व्यवहारवाद
बी) मनोविश्लेषण
सी) मानवतावादी मनोविज्ञान
डी) संज्ञानात्मक मनोविज्ञान

उत्तर: सी) मानवतावादी मनोविज्ञान

आवश्यकताओं के पदानुक्रम का प्रस्ताव किसने दिया, जिसमें शारीरिक आवश्यकताएं, सुरक्षा आवश्यकताएं, प्रेम और अपनापन, सम्मान और आत्म-बोध शामिल हैं?
ए) कार्ल रोजर्स
बी) सिगमंड फ्रायड
सी) बी.एफ. स्किनर
डी) अब्राहम मास्लो

उत्तर: डी) अब्राहम मास्लो

14.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Maslow, A. H. (1943). A theory of human motivation. Psychological Review, 50(4), 370–396.
- Rogers, C. R. (1951). Client-centered therapy: Its current practice, implications, and theory. Houghton Mifflin.
- Seligman, M. E. P. (1975). Helplessness: On depression, development, and death. W. H. Freeman.

- Seligman, M. E. P., & Csikszentmihalyi, M. (2000). Positive psychology: An introduction. American Psychologist, 55(1), 5–14.

14.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. सकारात्मक मनोविज्ञान में मानवतावाद की भूमिका पर एक निबंध लिखिए

2. सकारात्मक मनोविज्ञान में कार्ल रोजर्स के योगदान की विस्तृत व्याख्या कीजिये

3. सकारात्मक मनोविज्ञान में मानवतावाद के महत्त्व का वर्णन करते हुए किन्ही दो मानवतावादियों के योगदान को विस्तार पूर्वक समझिए